UNIVERSAL LIBRARY
OU_182824
UNIVERSAL LIBRARY

## पांचवाँ भाग

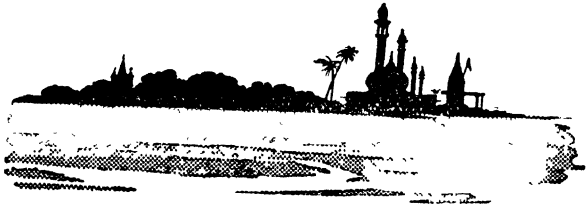

यह शायरी नहीं है, तमन्नाकी क़ब्रपर।
तामीर एक ताजमहल कर रहा हूँ मैं॥

—अख़्तर अन्सारी

सर्वोदय साहित्य मन्दिर.
हुसैनी अलम रोड, हैद्राबाद ( द. ) नं. २
अयोध्याप्रसाद गोयलीय

ज्ञानपीठ-लोकोदय ग्रन्थमाला-सम्पादक और नियामक
श्री० लक्ष्मीचन्द जैन, एम० ए०

प्रकाशक
मंत्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वनारस

प्रथम संस्करण
१९५४ ई०
मूल्य तीन रुपये

मुद्रक
जे० के० शर्मा
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

ज्ञानपीठ लोकोदय-ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क—३१

# शेर-ओ-सुख़न

## पांचवाँ भाग

अर्वाचीन और वर्त्तमान ग़ज़लगोईपर तुलनात्मक अध्ययन, हरजाई, बेवफ़ा, ज़ालिम माशूक़के एवज़ नेक और पाक हबीबका तसव्वुर, रोने-बिसूरनेकी प्रथा बन्द, रंजो-ग़मका मुसकान-भरा स्वागत, निराशावादका अन्त

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

नज़र आये-न-आये कोई आँसू पूँछनेवाला।
मेरे रोनेकी दाद ऐ बेकसी! दीवारो-दर देंगे॥

—शाद अज़ीमाबादी

कोई सुने न सुने इन्क़लाबकी आवाज़।
पुकारनेकी हदोंतक तो हम पुकार आये॥

—अनवर साबिरी

न खींच ऐ चारागर! मजरूह दिलसे खूँचुका नावक।
सजाया है बड़ी काविशसे हमने इस गुलिस्ताँको॥

—दिल शाहजहाँपुरी

साहू-जैन-कुल-दिवाकर

आयुष्मान् प्राणप्रिय अशोककुमार

और

सौभाग्यवती बहूरानी इन्दु-श्री को

अनेक शुभ भावनाओं एवं

शुभाशीर्वादों सहित

सस्नेह भेंट



गोयलीय

# विषय-सूची

## सिंहावलोकन

[१९०१ से १९५४ ई० तककी ग़ज़लगोई ]


| | |
|---|---|
| शायरीमें परिवर्त्तनके कारण | १९ |
| नज़्म और ग़ज़ल | २२ |
| ग़ज़लकी उन्नतिके कारण | २३ |
| ग़ज़लपर एतराज़ | २४ |
| ग़ज़लका मर्म | २५ |
| ग़ज़लके रूपक | ३० |
| गुलो-बुलबुल | ३० |
| अकर्मण्यता | ३२ |
| सामर्थ्यके अनुसार | ३३ |
| सहृदयता | ३३ |
| सुखमें दुःख छिपा है | ३३ |
| क्षणभंगुर वैभव | ३३ |
| यह कृपालुता | ३३ |
| साक़ी-ओ-मैख़ाना | ३४ |
| हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य | ३४ |
| लालची | ३४ |
| दानीसे | ३४ |
| आलोचकोंसे | ३४ |
| शासन-व्यवस्थापकोंसे | ३५ |
| ये छिद्रान्वेषी | ३५ |

| | |
|---|---|
| कलके ढोंगी, आज नेता | ३५ |
| चेतावनी | ३५ |
| हुस्न-ओ-इश्क़ | ३५ |
| रंगे-तग़ज्जुल | ३८ |
| नई राजलगोई | ४५ |
| पाक इश्क़ | ४६ |
| महबूबका मर्त्तबा | ५३ |
| महबूबका जमाल | ५७ |
| रोना-बिसूरना | ६१ |
| आशिक़-ओ-माशूक़की तसवीर | ६५ |
| हिज्रे-यार | ६९ |
| यास-ओ-हिरमान | ७१ |
| रक़ाबत | ७४ |
| सामयिक घटनाएँ | ७८ |
| नैतिक | ८१ |
| खुदापर व्यंग | ८४ |
| उपासनायें, धनकुबेरोंसे | ८५ |
| निर्धनता, पराई आग | ८६ |
| मनुष्यकी मजबूरियाँ | ८६ |
| अपनी भाषा | ८६ |
| ये नसीहतकार | ८७ |
| नागरिकता | ८७ |
| साम्यवाद | ८७ |
| भक्त वत्सलता | ८७ |
| मज़हबसे बेज़ारी | ८८ |
| फ़िरक़ा परस्ती | ८८ |
| सर्वधर्म समभाव, अहिंसा | ८९ |

# नई करवट


| | | | |
|---|---|---|---|
| १ | तिलोकचन्द महरुम | ९३ | |
| २ | ताजवर नजीबाबादी | १०१ | |
| ३ | अलम मुजफ़्फ़रनगरी | १०५ | |
| ४ | अफ़सर मेरठी | १२५ | |
| ५ | अम्न लखनवी | १३० | |
| ६ | रम्ज़ | १३३ | |
| ७ | फ़रहत कानपुरी | १३९ | |
| ८ | माहिर उलक़ादिरी | १४९ | |
| ९ | शौकत थानवी | १५८ | |
| १० | बहज़ाद लखनवी | १६५ | |
| ११ | अख़्तर अन्सारी | १६९ | |
| १२ | शफ़ीक़ जौनपुरी | १७७ | |
| १३ | अर्शी भोपाली | १७९ | |
| १४ | नैयर अकबराबादी | १८३ | |
| १५ | शफ़क़ टोंकी | १८५ | |
| १६ | शफ़ा ग्वालियरी | १८६ | |
| १७ | शमीम जयपुरी | १८७ | |
| १८ | शहाब | १८७ | |
| १९ | शहीद बदायूनी | १८८ | |
| २० | शान्तिस्वरूप भटनागर | १८९ | |
| २१ | शातिर हकीमी | १८९ | |
| २२ | नसीरुद्दीन शादाँ | १९० | |
| २३ | शेरी भोपाली | १९० | |
| २४ | शैदा खुरजवी | १९० | |
| २५ | सरूर तोसवी | १९१ | |
| २६ | सरशार सद्दीक़ी | १९१ | |
| २७ | सरीर काविरी | १९२ | |
| २८ | महेन्द्रसिंह सहर | १९२ | |
| २९ | बलवन्तकुमार सागर | १९२ | |
| ३० | साक़िब कानपुरी | १९२ | |
| ३१ | सबा अकबराबादी | १९३ | |
| ३२ | सालिक | १९५ | |
| ३३ | सुलेमान अरीबी | १९७ | |
| ३४ | सिराज लखनवी | १९७ | |
| ३५ | हबीब अहमद सद्दीक़ी | १९८ | |
| ३६ | हसरत तमरज़वी | २०० | |
| ३७ | हसरत मुहवाई | २०० | |
| ३८ | हुरमत उलइकराम | २०० | |
| ३९ | अबुलमजीद हैरत | २०१ | |
| ४० | गंगा जमुनी शेर | २०२ | |

# महिला शायरायें


| | |
|---|---|
| शमीम मलीहाबादी | २०७ |
| अनीस बानो | २०९ |
| अज़मत शमअ़ | २०९ |
| पिन्हाँ | २१० |
| फ़ातिमा काश | २१० |
| सैय्यदा अख़्तर | २११ |
| सफ़िया रअ़ना | २१२ |
| शान्ति बेख़ुद | २१२ |
| सहाब आग़ाशायर | २१३ |
| नाज़ | २१३ |
| करामत फ़ातिमा बेगम | २१४ |
| ज़ोहरा जमाल | २१४ |
| सरला बर्क़ | २१५ |
| शफ़ीक़ बानो शफ़ीक़ | २१५ |
| ज़ेबा | २१६ |
| उम्मतुलरुफ़ नसरी | २१६ |

# मुशायरा


**मुशायरोंका प्रारम्भिक रूप** २२१
**मुशायरोंका विकसित रूप** २२३
**मुराखते** २२३
**मुनाजमे** २३२
**तहरीरी मुशायरे** २३३
जोश मलीहाबादी २३४
नज़ीर बनारसी २३४
नाज़िश परतापगढ़ी २३६
सीमाब अकबराबादी २३६
आरज़ू लखनवी २३६
असर लखनवी २३७
वहशत कलकतवी २३७
नूह नारवी २३८
मानी जायसी २३८
जोश मलसियानी २३८
सिराज लखनवी २३८
महवी लखनवी २३८
सरीर कावरी २३९
साग़र निज़ामी २३९
रविश सद्दीक़ी २३९
माहिर उलक़ादिरी २४०
नरेशकुमार शाद २४०
मंज़र सद्दीक़ी २४१
शफ़ीक जौनपुरी २४१
अलम मुज़फ़्फ़रनगरी २४१
ज़िया फ़तेहाबादी २४२
जगन्नाथ आज़ाद २४२
शमीम करहानी २४२
निसार इटावी २४२
वफ़ा बराही २४३
अब्दुल मजाहिद २४३
शफ़ीक़ कोटी २४३
तमन्ना बिजनौरी २४३
महज़ूं नियाज़ी २४४
बिस्मिल सद्दीक़ी २४४
नसीम रामपुरी २४४
सैफ़ भुसावली २४४
नवाब झाँसवी २४४
रौनक़ दक्कनी २४४
कोकब उलक़ादिरी २४४

अनवर साबिरी २४५
मुनव्वर लखनवी २४५
तुर्फ़ा कुरैशी २४५
नज़र सहवारवी २४५
जमनादास अख़्तर २४६
रामकृष्ण मुज़तर २४६
हरगोविन्द नश्तर २४६
मशहूद मुफ़्ती २४६
वफ़ा बराही २४६
साज़ बिलगरामी २४७
जफ़र आज़मी २४७
प्रेम देहलवी २४७
नैयर सीमाबी २४७
**मौजूदा मुशायरे** २४८
जगन्नाथ आज़ाद २५०
रविश सद्दीक़ी २५०
अर्श मलसियानी २५१
अनवर साबिरी २५३

# सूचनायें :—

१—प्रस्तुत पाँचवें भागमें प्रारम्भसे १९५४ ई० तककी ग़ज़लका इतिहास सम्पूर्ण हो गया है। यदि स्वास्थ्य और समयने इजाज़त दी तो अब मैं 'नज़्म'का क्रमवद्ध इतिहास और उसके सर्वश्रेष्ठ शायरोंका जीवन-परिचय एवं कलाम अपनी नवीन कृतियों—'शायरीके नये दौर' और 'शायरीके नये मोड़' में यथाशक्य देनेका प्रयत्न करूँगा। इन ग्रन्थोंकी रूप-रेखाका किंचित् आभास पाँचवें भागके अन्तमें दी हुई दो पृष्ठोंकी विज्ञप्तिसे हो सकेगा।

२—वर्त्तमान युगमें—१ 'जोश' मलीहाबादी, २ 'अहसान' बिन दानिश, ३ 'हफ़ीज़' जालन्धरी, ४ 'साग़र' निज़ामी, ५ 'फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़', ६ बालमुकुन्द 'अर्श', ७ 'साहिर, लुधियानवी, ८ 'जज़्बी', ९ 'मजाज़',[1] १० सरदार 'जाफ़िरी, ११ आनन्दनारायण 'मुल्ला', १२ विश्वेश्वरप्रसाद 'मुनव्वर', १३ 'रविश' सद्दीक़ी, १४ जगन्नाथ 'आज़ाद', १५ नरेशकुमार 'शाद' १६ अहमद 'नदीम' क़ासिमी आदि सैकड़ों शायर ऐसे हैं, जो ख्यातिके शिखरको छू रहे हैं। इन सबका परिचय एवं कलाम 'शायरीके नये दौर' और 'शायरीके नये मोड़' नामक नज़्मके इतिहास-ग्रन्थोंमें लिखा जा रहा है।

३—शेर-ओ-सुखनके पाँचों भागोंमें ग़ज़लका इतिहास और ग़ज़ल-गो शायरोंका परिचय दिया गया है और उक्त शायर दुनिया-ए-नज़्मके बादशाह हैं। यद्यपि इनमें अधिकांश शायर ग़ज़ल भी कहते हैं; परन्तु अपने विचारों और कलामकी दृष्टिसे ऐसे सब शायरोंका उपयुक्त स्थान 'शायरीके

---

[1]इन ९ शायरोंका संक्षिप्त परिचय एवं कलाम 'शेरो-शायरी' के २५०-३०० पृष्ठोंमें दिया जा चुका है।

नये दौर' और 'शायरीके नये मोड़' में हैं। अतः उनकी दुनियाके क्रमवद्ध इतिहासके साथ ही ख्याति प्राप्त नज़्म-गो शायरोंका यथास्थान उल्लेख किया जायगा।

४—उन ख्याति-प्राप्त ग़ज़ल-गो शायरोंका परिचय भी उक्त दोनों नवीन पुस्तकोंमें मिलेगा। जिनकी आयु ५० से अधिक नहीं है। यानी जो इसी बीसवीं शताब्दिमें उत्पन्न हुए और १९२० के बाद १९५४ तक किसी भी अवधिमें प्रसिद्ध हुए। अथवा अपने रंगे-सुख़नके कारण वयोवृद्ध होते हुए भी नये युगके शायरोंमें जिनका शुमार है। क्योंकि 'शेरो-सुख़न' में प्राचीन शायरोंके अतिरिक्त वर्त्तमान युगीन स्वर्गस्थ अथवा वयोवृद्ध उन्हीं शायरोंका उल्लेख हुआ है, जिनकी आयु ५०से अधिक है यानी जो १९वीं शताब्दीमें पैदा हुए और १९२० ई० के लगभग उस्तादीके मर्त्तबेको पहुँच गये। इनसे कम आयुके नज़्म-गो एवं ग़ज़ल-गो शायरोंका परिचय 'शायरीके नये दौर' और 'शायरीके नये मोड़' ग्रन्थोंमें होगा। इतिहासकी सुरक्षाकी दृष्टिसे पुरानोंके साथ नयोंकी ख़लत-मलत मुझे उचित प्रतीत नहीं हुई। युगानुसार और क्रमवार परिचय देना ही उपयुक्त जँचा।

५—'शेरो सुख़न' ग़ज़लका इतिहास है। लेकिन उसमें चन्द ऐसे शायरोंका भी परिचय एवं कलाम दिया गया है, जो ग़ज़ल और नज़्म दोनों कहते हैं। क्योंकि वे अपनी आयु अथवा ख्यातिके लिहाज़से इसी युगके शायर हैं। यथा स्थान १०–५ नज़्मोंके नमूने भी दे दिये गये हैं।

६—पाँचवें भागमें ५–६ ऐसे शायरोंका भी उल्लेख हुआ है जो अपनी आयु अथवा कलामकी दृष्टिसे नवीन पुस्तकोंके लिए उपयुक्त थे। इसका कारण यही है कि पहिले ख़याल था वर्त्तमान युगीन ग़ज़ल-गो शायरोंका परिचय एवं कलाम भाग २,३,४ में अधिक-से-अधिक ७०० पृष्ठोंमें सम्पूर्ण हो जायेगा। इसीलिए भाग दो की सूचनाओंमें ५ वें भागकी सूचना नहीं थी, किन्तु पृष्ठ-संख्या आवश्यकतासे अधिक बढ़ जानेके कारण पाँचवाँ

भाग बढ़ाना पड़ा और उसके शेष पृष्ठोंकी पूर्त्तिके लिए ४–५ शायर नवीन पुस्तकोंके देने पड़े।

७—'शेरो-सुखन' के चौथे भाग 'नई लहर' परिच्छेदमें और पाँचवें भागमें पृष्ठ १७६ से २१८, तक, १६४४ से १६५४ ई० तककी भिन्न-भिन्न रंगकी ग़ज़लोंके नमूने दिये गये हैं। ताकि ग़ज़लकी सर्वांगीण जानकारी हो सके। इन ग़ज़ल-गो शायरोंमें वृद्ध, युवक, पुरातनवादी, सुधारवादी, साम्यवादी, सम्प्रदायवादी, प्रगतिशील, इन्क़लाबी, देशभक्त, सभी तरहके शायर हैं। इनमें अनेक साहिबे-दीवान हैं और उस्तादीके मर्त्तबेको पहुँचे हुए हैं और बहुत-से कूचये-शायरीमें पाँव ही रख रहे हैं। इनमें सर्वश्रेष्ठ शायरोंका परिचय और विस्तृत कलाम 'शायरीके नये दौर' और 'शायरीके नये मोड़' में दिया जा रहा है। यहाँ तो नवीन ग़ज़लगोईके प्रसंगानुसार उनके केवल चन्द अशआर पेश किये गये हैं।

८—'शेरो-शायरी' और 'शेरो-सुखन' में केवल १४ हिन्दू शायरोंका उल्लेख हुआ है। वर्त्तमान युगीन अनेक ख्यातिप्राप्त हिन्दू शायरोंका परिचय 'शायरीके नये दौर' और 'शायरीके नये मोड़' में संकलित किया जा रहा है और पुराने प्रसिद्ध-प्रसिद्ध शायरोंके कलामकी खोज की जा रही है। उन सबका परिचय किसी भिन्न ग्रन्थमें देनेका प्रयास किया जायगा।

डालमियानगर<br>
१ जुलाई १६५४ ई०

# सिंहावलोकन

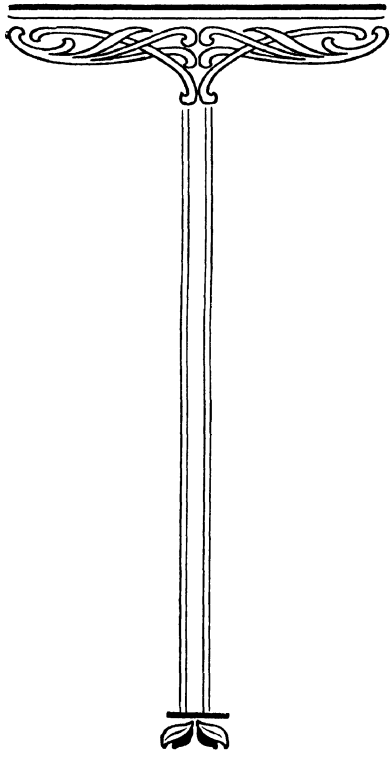

[ १९०१ से १९५४ की ग़ज़ल गोई ]

१. शायरीमें परिवर्त्तनके कारण
२. नज़्म और ग़ज़ल
३. ग़ज़लकी उन्नतिके कारण
४. ग़ज़लपर एतराज़
५. ग़ज़लका मर्म
६. ग़ज़लके रूपक
गुल-ओ-बुलबुल
साक़ी-ओ-मैख़ाना
हुस्न-ओ-इश्क़
७. रंगे-तग़ज़्ज़ुल
नई ग़ज़लगोई
८. पाक इश्क़
९. महबूबका मर्त्तबा
१०. महबूबका जमाल
११. रोना-बिसूरना
१२. आशिक़-ओ-माशूक़की तसवीर
१३. हिज्रे-यार
१४. यास-ओ-हिरमान
१५. रक़ाबत
१६. सामयिक घटनायें

उर्दू-शायरीपर अंग्रेज़ी-साहित्यका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। अंग्रेज़ीके प्रसारसे पूर्व उर्दू-शायरीका एक मात्र माध्यम फ़ारसी-शायरी था।

**शायरीमें परिवर्त्तनके कारण**

उसका अनुकरण एवं पुराने विचारोंकी पुनरावृत्ति करते रहना ही तत्कालीन उर्दू-शायरोंका एक मात्र लक्ष्य रह गया था। ग़ज़लका क्षेत्र सीमित था। इस सीमित क्षेत्रमें कोई कहाँतक उड़ान भरता? 'ग़ालिब'ने ग़ज़लमें पहले-पहल परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धन किया और इसमें उन्हें बहुत अधिक सफलता प्राप्त हुई। उन्होंने अपनी तीक्ष्ण बुद्धि और प्रतिभासे अनेक मौलिक विचारोंका ग़ज़लमें इस कौशलसे समावेश किया कि ग़ज़ल नये आबो-तावके साथ चमकने लगी और अब वह केवल मानसिक अभिरुचिको तृप्त करनेके बजाय जीवनोपयोगी भी होने लगी।

ग़ालिबकी इस सूझ-बूझसे शायरोंको एक नवीन दिशाका ज्ञान हुआ और ग़ज़लका क्षेत्र भी पहलेकी अपेक्षा काफ़ी विस्तृत हुआ, किन्तु ग़ालिबकी प्रतिभाके लिए तो असीमित क्षेत्रकी आवश्यकता थी। स्वयं अकेले वे कहाँ तक इस क्षेत्रको विस्तृत करते रहते? लाचार उन्हें कहना पड़ा—

**कुछ और चाहिए वुसअ़त मेरे बयाँके लिए**

यही वुसअ़त (विस्तीर्णता) उर्दू-शायरीको अंग्रेज़ी-साहित्यसे प्राप्त हुई। अंग्रेज़ी कवितायें प्रेमके अतिरिक्त—राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, व्यावहारिक, दार्शनिक, आध्यात्मिक, प्राकृतिक, राष्ट्रिय आदि अनेक जीवनोपयोगी एवं सामयिक विचारोंसे ओत-प्रोत होती थी। विश्वकी मुख्य-मुख्य घटनाओंको बहुत सुरुचिपूर्ण ढंगसे अंग्रेज़ी कविताओं द्वारा व्यक्त किया जाता था।

अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे भारतीय शायरोंपर इन कविताओंका बहुत अधिक

प्रभाव पड़ा। वे भी उर्दू-शायरीको परिपूर्ण बनानेके लिए प्रयत्नशील हो उठे।

अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे उर्दू-शायर अंग्रेज़ी-कविताके विस्तारसे तो प्रभावित हुए, परन्तु सौभाग्यसे अंग्रेज़ी-संस्कृतिसे कोई लगाव नहीं रखा। अंग्रेज़ी-कविताका अन्ध-अनुकरण न करके, उन्होंने अपने समाज, देश, संस्कृति आदिको अपनी कविताका लक्ष बनाया। वे अपने देशके—वनों-पर्वतों, दरियाओं-वाटिकाओं, सुन्दर नगरों, भव्य इमारतोंकी ललित कलाओं एवं मोहक दृश्योंको नज़्म करने लगे। अपने देशके पौराणिक-ऐतिहासिक महापुरुषोंके गुणोंका नज़्मों द्वारा बखान करने लगे। कला केवल कला न रहकर अब वह जीवनोपयोगी बनने लगी।

उन दिनों भारतका वातावरण भी ऐसी शायरीके लिए बहुत अनुकूल एवं उपयुक्त था। १८५७ ई०के विप्लवके बाद भारतके राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक आदि सभी क्षेत्रोंमें एक उथल-पुथल-सी मची हुई थी। अंग्रेज़ोंके भारतपर अधिकार जमा लेनेके कारण भारतीय सशंकित हो उठे कि कहीं राज्यके साथ-साथ धर्म-मज़हब, संस्कृति एवं तमद्दुनसे भी हाथ न धोना पड़े। इन्हें सुरक्षित रखनेके लिए हिन्दू-मुसलमानोंमें होड़-सी लग गई। हिन्दुओंने विश्वविद्यालय और गुरुकुलकी नीव डाली तो मुसलमानोंने यूनिवर्सिटी, मकतब तामीर किये। हिन्दू-मुसलमानोंद्वारा सभायें और अंजुमनें बनाई जाने लगीं। पत्र एवं अख़बार निकाले जाने लगे। समाजोत्थान और राष्ट्रिय चेतनाको उभारनेके लिए नज़्में और कविताएँ लिखी जाने लगीं। 'हाली'ने मुसद्दस लिखकर मुसल-मानोंके क़ौमी जज़्बेको उभारा तो 'इक़बाल'ने देश-प्रेमका बीजारोपण किया। नौबतराय 'नज़र', दुर्गासहाय 'सरूर', ज्वालाप्रसाद 'बर्क़' आदि शायरोंने पौराणिक, ऐतिहासिक, महापुरुषोंके जीवन नज़्म किये तो इस्माइल मेरठीने बालकोंपयोगी नज़्में लिखीं। अंग्रेज़ी कविताओंको उर्दू-नज़्मका रूप दिया। कोई प्राकृतिक दृश्योंको नज़्म करने लगा तो कोई भव्य नगरों और इमारतोंकी कलाओंको उजागर करने लगा।

अभी तक उर्दू-शायरीमें वतनियत (देशभक्ति) का वह शदीद जज़्बा नहीं आया था, जिसकी वतनको अज़हद ज़रूरत थी। सौभाग्यसे उन दिनों बंगालमें बंग-भंगके विरुद्ध आन्दोलन छिड़ गया। इस आन्दोलनको सफल बनानेमें समूचा बंगाल प्राणपणसे जुट गया। क्रान्तिकारी दल संगठित किये गये। आग्नेय गद्य-पद्य द्वारा लार्ड कर्ज़नकी 'बंग-भंग' नीतिकी तीव्र भर्त्सना की गई, और इस आन्दोलनको इतना बल दिया गया कि इसकी लपटें समूचे भारतमें फैल गईं। बंगालियोंद्वारा लिखी गईं बंग-प्रेमकी कविताएँ जब अन्य प्रान्तोंमें पहुँचीं तो अन्य भाषा-भाषी कवि उनसे काफ़ी प्रभावित हुए और वे प्रान्तीय क्षेत्रसे निकलकर समूचे भारतको अपना देश समझने लगे और देश-प्रेम सम्बन्धी नित-नई कविताएँ लिखने लगे। उर्दू-शायरीपर भी इस आन्दोलनका काफ़ी प्रभाव पड़ा और उसमें बहुत तेज़ीसे वतनियतके जज़्बे उभरने लगे। इस क्षेत्रमें पं० बृजनारायण चकबस्तने आगे बढ़कर धौंसेपर चोट जमाई और देश-प्रेमके वे राग अलापे कि लोग वज्दमें आ गये।

प्रथम महायुद्ध, रौलट ऐक्ट, जलियानवालाबाग़-गोलीकाण्ड और असहयोग आन्दोलनके कारण शायरीने एक नया मोड़ लिया! इस इन्क़लाबी शायरीके जन्मदाता हज़रत 'जोश' मलीहाबादी हैं। उन्होंने देश-प्रेम, हिन्दू-मुसलिम ऐक्यपर सैकड़ों नज़्में लिखीं। साम्प्रदायिक संघर्षोंको बड़े तीव्र शब्दोंमें भर्त्सना की। भारतके स्वतंत्रता संग्रामके प्रत्येक पहलूपर उन्होंने इतना लिखा कि भारतका कोई भी कवि उनकी हमसरी नहीं कर सका! 'सीमाब' अकबराबादी, साग़र निज़ामी आदिने भी इन विषयोंपर बहुत काफ़ी लिखा! किसान-मज़दूर, पूँजीपति, मुफ़लिसकी ईद, ग़रीबकी दीवाली, आदिपर बहुत काफ़ी लिखा गया।[1]

द्वितीय महायुद्धके दिनोंमें—ब्लेकहाल, कण्ट्रोल, राशनिंग, परमिट,

---

[1]विशेष परिचयके लिए 'शायरीके नये दौर' देखिये।

चोर बाज़ारी, क़हते-बंगाल, एटमबम, आज़ाद हिन्द फ़ौज, सुभाषचन्द बोस, लालक़िला, हिटलर, मुसोलिनी, लेनिन, स्टालिन, अन्धी लड़ाई, १९४२का स्वतन्त्रता संग्राम आदिपर न जाने कितनी नज़्में लिखी गईं[1] और १९४७के बाद तो नज़्मोंका एक सैलाब-सा आ गया। भारत-विभाजन, साम्प्रदायिक-हत्याकाण्ड, हिजरत, शरणार्थी, करफ़्यू, दरिन्दे, जब इन्सान वहशी बन गया, जश्ने-आज़ादी, आज़ादीके बाद, सुबहे-आज़ादी, वतनमें आख़िरी रात, आदि हज़ारों नज़्में कही गई और कही जा रही हैं।

**नज़्म और ग़ज़ल**

इन नज़्मगो शायरोंमें पुरातनवादी, प्रगतिशील, क्रान्तिकारी कांग्रेसी, साम्यवादी समाजवादी, मुसलिमलीगी आदि सभी विचार धाराओंके हैं और अपने-अपने ढंगसे अपनी भावनाओंको व्यक्त करते रहते हैं।

इस दौरमें नज़्मकी बाढ़ इतनी द्रुतगतिसे आई कि मालूम होता था, ग़ज़ल तिनकेके समान बह जायगी—लेकिन वह बहनेके बजाय उत्तरोत्तर विकसित एवं उन्नत होती गई।

एक-दो वर्ष पूर्व तक नज़्मोंने खूब ज़ोर पकड़ा, किन्तु अब वह आँधी थम गई है और ग़ज़ल पूरे आबो-ताबके साथ चमक रही है। इसका कारण यही है कि छोटी-से-छोटी बातको नज़्ममें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर विस्तारसे व्यक्त किया जाता है। इसके विपरीत ग़ज़लमें बड़ी-से-बड़ी बातको एक-दो शेरोंमें समो दिया जाता है। नज़्मगो शायर कुएको तालाब बनाते हैं; ग़ज़लगो शायर गागरमें सागर भरते हैं।

संक्षेपमें यूँ समझिये कि ग़ज़ल सूत्र है, नज़्म भाष्य है। ग़ज़ल कहानी है, नज़्म उपन्यास है। ग़ज़ल संकेत है, नज़्म स्वीकृति है। ग़ज़ल सूक्ति है, नज़्म काव्य है। ग़ज़ल हृदयकी अनुभूति है, नज़्म शायरीका प्रदर्शन है।

नज़्मोंमें अधिकतर सामयिक घटनाओं, तत्कालीन रीति-रिवाजों

---

[1]इन सबका विस्तृत परिचय 'शायरीके नये मोड़'में मिलेगा।

आदिका उल्लेख रहता है। इसलिए उसमें स्थायित्व नहीं आने पाता। अक्सर देखा जाता है कि जो नज़्म एक समयमें इस सिरेसे उस सिरेतक आम हो जाती है, वही चन्द दिनोंमें विस्मर्ण कर दी जाती है। इसके विपरीत ग़ज़लमें जो भी कहा जाता है, वह रंगे-तग़ज़्ज़ुलमें कहा जाता है; जिससे कि समय और रुचिके अनुसार लुत्फ़ उठाया जा सकता है। सामयिक घटनाओंका उल्लेख समयपर तो इंजेक्शनका काम करता है, परन्तु समयके साथ धीरे-धीरे उसका प्रभाव कम हो जाता है। बंग-भंग, रौलट-ऐक्ट, जलियानवाला बाग़, असहयोग-आन्दोलन, बृटिश-शासन-विरोधी नज़्मोंको आज कौन पूछता है? पौराणिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, राजनैतिक, सुधार आदि आन्दोलन सम्बन्धी और नेताओंकी प्रशस्तियोंमें लिखी गई नज़्मोंका युग समाप्त हो गया है। दूर क्यों जायें, द्वितीय महायुद्धके प्रारम्भसे १९५२ ई० तक—हिटलर, मुसोलनी, स्टालिन, राशनिंग, चोर बाज़ारी, भारत-विभाजन आदिपर न जाने कितनी नज़्में लिखी गईं, परन्तु आज वे इतनी जल्दी आउट आफ़ डेट हो गई हैं कि उनके रचयिता भी उन्हें सुनानेमें संकोचका अनुभव करते हैं। हालाँ कि जब लिखी गई थीं, तब उन्हींका चर्चा चारों तरफ़ था।

किसी भी तरहके प्रचारके लिए नज़्म अत्यन्त उपयोगी साधन है, उसका प्रभाव तुरन्त होता है, लेकिन आवश्यकता पूर्ण होते ही उसका असर भी समाप्त हो जाता है। ग़ज़ल आन्दोलन आदिके लिए विशेष उपयोगी नहीं। उसका महत्व सुख-शान्तिके दिनोंमें मालूम होता है।

नज़्मके इतने प्रबल वेगके समक्ष भी ग़ज़ल पाँव जमाये खड़ी रही और पूरे जाहो-जलालके साथ जलवागर रही, इसका कारण यही है कि वर्त्तमान ग़ज़लकी बागडोर जिनके हाथोंमें आई, उनका व्यक्तित्व साहित्यिक समाजमें महत्त्वपूर्ण एवं प्रतिष्ठित था। वे उन पुराने उस्तादोंके जानशीन थे, जिनके झण्डे बज़्मे-अदबमें गड़े हुए थे। उनका प्रभावशाली व्यक्तित्व ऐसा था कि नज़्मगो शायर भी उनका आदर एवं

**ग़ज़लकी उन्नतिके कारण**

सम्मान करते थे। उनमें-से बहुत-से नज़्मगो शायर या तो उनके गुरु-भाई थे, या उनके शिष्य थे। परस्पर संघर्षका तो कोई प्रश्न ही नहीं था। नज़्म और ग़ज़ल दो महत्त्वपूर्ण कला थीं। साहित्यकी श्रीवृद्धि करनेके लिए अपनी-अपनी रुचिके अनुसार किन्हींने नज़्मको और किन्हींने ग़ज़लको अपना लिया।

वे नज़्मगो शायर, जिनकी शायरीका प्रारम्भ ग़ज़लगोईसे हुआ था और जो ग़ज़लगो उस्तादोंके शिष्य थे, नज़्मोंके साथ ग़ज़लें भी कहते रहे। इक़बाल, चकबस्त, सीमाब, जोश मलसियानी, सफ़ी लखनवी, नज़र लखनवी, दत्तात्रिय कैफ़ी, बर्क़ देहलवी, असर लखनवी, हफ़ीज़ जालन्धरी, साग़र निज़ामी, रविश सद्दीक़ी आदि नज़्म और ग़ज़ल दोनों ही कहते रहे। इसी तरह अधिकांश तरक़्क़ीपसन्द एवं प्रगतिशील नव-युवक शायर भी ग़ज़ल कहते रहते हैं। हालाँ कि उनको ख्याति नज़्मगोईके कारण मिली।

वर्त्तमान युगीन ज़िम्मेवार ग़ज़लगो शायरोंने युगानुसार ग़ज़लमें अनेक परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धन किये। वे धीरे-धीरे अपना लबो-लहजा बदलते गये, सुधार करते गये! दृष्टिकोणको व्यापक और उदार बनाते गये। समयानुसार नये-नये भाव समोते गये। परिणाम इसका यह हुआ कि ग़ज़ल आज पूरे आबो-ताबके साथ चमक रही है।

**ग़ज़लपर एतराज़**

ग़ज़लपर अक्सर यह आक्षेप किया जाता है कि उसमें हुस्नो-इश्क़, रिन्दो-मैख़ाना, और गुलो-बुलबुलकी दास्तानके अतिरिक्त न तो तत्कालीन घटनाओंका उल्लेख किया जाता है, न सामयिक विचारोंको महत्त्व दिया जाता है, और न अन्य लोकोपयोगी भावोंका समावेश होता है।

ग़ज़लगो शायर भरी बहारमें बैठे हुए बहारको रोते रहते हैं। देशमें चाहे आग लग रही हो, चाहे क्रान्तियाँ प्रस्फुटित हो रही हों, चाहे विप्लवोंकी आँधियाँ आ रही हों, चाहे भुखमरी और महामारियाँ ताण्डव नृत्य कर

रही हों, ग़ज़लगो शायर तब भी अपनी धुनमें मस्त मैखानेमें झूमते हुए, वीरानोंमें मजनूँनावार घूमते हुए और गुलशनोंमें रोते-बिसूरते हुए नज़र आयेंगे। ऐसे ही शायरोंसे खीजकर मौ० मुहम्मदहुसेन आज़ाद यह कहनेपर मजबूर हुए थे—

**हैफ़ आता है कि खोई उम्र मज़मूँ बाँध-बाँध।**
**ऐसी बन्दिशसे तो बेहतर था कि छप्पर बाँधते॥**

उक्त आक्षेप किन्हीं ग़ज़लगो शायरोंपर चस्पाँ हो सकते हैं, परन्तु सभीके लिए इस तरहकी धारणाएँ उचित नहीं, और अब तो ग़ज़लका क्षेत्र बहुत विस्तीर्ण होता जा रहा है और उसमें नित नये परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धन होते जा रहे हैं। ग़ज़लगो शायरोंने प्रायः सभी आवश्यकीय विषयोंपर प्रकाश डाला है। जीवन सम्बन्धी हर तथ्यपर उनकी दृष्टि रही है। बक़ौल शख़्से—

**ग़ज़लका मर्म**

**यह और बात है दुनिया उन्हें न पहचाने**

खेद है कि सर्वसाधारण उनके इन जौहरोंसे अनभिज्ञ हैं। सर्वसाधारण तो खैर सर्वसाधारण हैं, वे उन्हें परखनेको दिव्यदृष्टि कहाँसे लाते? आश्चर्य तो इसका है कि अच्छे-अच्छे सुखन फ़हम भी ग़ज़लका वास्तविक मूल्य न आँक सके। आजकी बात जाने दीजिए। पुराने ज़मानेमें ख़ुदाए-सुखन 'मीर'के समकालीनोंमें—सौदा, दर्द, सोज़, और नौजवानोंमें—क़ायम, यक़ीन, असर, ताबाँ, बेदार, ज़िया, हसन, बयान, अफ़सोस—जैसे ख्यातिप्राप्त शायर मौजूद थे। दिन-रात मुशायरोंकी धूम रहती थी। फिर भी 'मीर'को यह क़लक़ रहा कि उनके जौहरको परखनेवाले जौहरी न मिले। इस क़लक़को उन्होंने पचासों बार अनेक तरहसे व्यक्त किया है—

**किस-किस अदासे रेख्ते[1] मैंने कहे वलेक[2]—**
**समझा न कोई मेरी ज़बाँ इस दयारमें[3] ॥**

'मीर'का उक्त शिकवा बेजा नहीं है। ग़ज़लके शेरका वास्तविक आशय समझनेके लिए उसीके अनुकूल दिलो-दमाग़ और वातावरण होना चाहिए। शायरने जिस वातावरणसे प्रभावित होकर या जिस लक्ष्यको लेकर शेर कहा है। यदि उसे पढ़ते समय पाठकके मन एवं मस्तिष्ककी स्थिति भी तदनुरूप होगी तो उस शेरके जौहर पूरे आबोतावके साथ जलवागर हो जायेंगे, अन्यथा जैसे हज़ारों वस्तुएँ जीवनमें रोज़ाना नज़रोंसे गुज़रती रहती हैं, वैसे ही वह भी गुज़र जायगा और हम उसके वास्तविक तथ्यसे लाभान्वित न हो सकेंगे।

मेरी नज़रोंसे सैकड़ों शेर रोज़ गुज़रते हैं। मीर-ओ-ग़ालिब आदिके दीवान न जाने कितनी बार पढ़े हैं। जब भी पढ़े हैं, उनमें नई-नई ख़ूबियाँ नज़र आई हैं। पढ़ते समय जिस स्थितिमें मन एवं मस्तिष्क होता है, उसी तरहके शेर आँखोंमें चमकने लगते हैं। 'ग़ालिब'के इसी शेरको लीजिए—

**गो हाथमें जुम्बिश नहीं, आँखोंमें तो दम है।**
**रहने दो अभी साग़रो-मीना मेरे आगे[4] ॥**

उक्त शेर बज़ाहिर तो क़तई रिन्दाना है, और शेरके वाह्य अर्थसे आम आदमियोंके मनोंमें सम्भवतः यही भाव उदित होंगे कि शायर कितना

---

[1]उर्दू-शायरीका पहला नाम; [2]लेकिन; [3]संसारमें; [4]हाथमें साग़र एवं मीना उठानेकी शक्ति नहीं रही तो न सही, अभी आँखोंमें तो देखनेकी सामर्थ्य शेष है। पी नहीं सकता, मगर उन्हें देखनेका तो आनन्द उठा सकता हूँ। इसलिए साग़र एवं मीना सामने ही रखे रहने दिये जायें।

हविस परस्त एवं पियक्कड़ है कि पीनेकी सामर्थ्य न रखते हुए भी उसके मोहमें लिप्त है। इस शेरको 'शेरोशायरी'में देते हुए भी मैं इसके अन्तरंगसे परिचित था; परन्तु आप बीती घटनाने जो शेरका लुत्फ़ दिया, वह बयानसे बाहर है।

१४ अक्तूबरसे १५ दिसम्बर तक खाँसीकी पीड़ाके कारण मुझे चार-पाईपर पड़ना पड़ा। मौत जब बार-बार आकर झाँकने लगी तो डाक्टरों और हितैषियोंने लिखने-पढ़नेकी सख्त पाबन्दी लगा दी। शेरोसुख़नके २, ३, ४ भाग इलाहाबाद ला जर्नल प्रेसमें कम्पोज़ हो चुके थे। उनके प्रूफ़की मैं बहुत उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहा था। अपने जीवनकालमें ही उनके छपवानेकी लालसा मुझे कुरेद-कुरेदकर खाये जा रही थी। रुग्ण शैय्यापर पड़ा हुआ बहुत बे-सब्रीसे रोज़ाना प्रूफ़ आनेका इन्तज़ार-करता रहता था। प्रतीक्षा करते हुए जब कई रोज़ हो गये, तब मैंने ज्ञान पीठके मैनेजर श्री बाबूलालजी फागुल्लसे पूछा तो उन्होंने हिचकिचाते हुए कहा कि "प्रूफ़ तो कई रोज़से आये पड़े हैं, परन्तु डाक्टरके परामर्शानुसार आपको नहीं दिखाये गये हैं।" मैंने कहा—"कौन कम्बख़्त उन्हें पढ़ना चाहता है, मगर भगवान्के वास्ते तुम उन्हें मेरे सामने मेज़पर तो रख दो ताकि मैं उन्हें पड़ा-पड़ा निहार तो सकूँ।" फागुल्लजीने प्रूफ़ लाकर रखे ही थे कि कई हितैषी बन्धु आ गये। उन्होंने जो प्रूफ़ मेरे पास देखे तो फागुल्लजीको उठा ले जानेके लिए इशारा किया। मैंने रखे रहनेकी मिन्नत की, तो बोले—"जब प्रूफ़ पढ़नेकी इजाज़त नहीं है तो सामने रखनेसे क्या लाभ ?" हितैषियोंकी नासहाना नसीहत सुनकर मैं तड़प उठा और बेसाख्ता ग़ालिबका उक्त शेर मुँहसे निकल पड़ा। आँखें डबडबा आईं और मन भारी हो गया। हितैषियोंने मेरे मनकी व्यथाको समझा और प्रूफ़ वहीं पड़े रहने देकर मुझे मानसिक शान्ति पहुँचाई। इतने दिनों बाद मैं उस रोज़ ग़ालिबके उक्त शेरके अभिप्रायको महसूस कर सका, और यह भी यक़ीनी नहीं कि अब भी ठीक-ठीक समझ पाया हूँ।

ग़ज़ल इतनी भावपूर्ण कोमल कला है कि उसके वास्तविक रहस्यको पारखी दृष्टि ही जान सकती है। उसकी अपनी निजी भाषा, भाव, उपमा, अलंकार और शैली है। अपने भाव व्यक्त करनेका अपना निजी लबो-लहजा और ढंग है।

ग़ज़लका बार पत्थरकी तरह सीधा न होकर दुशालेमें लिपटा हुआ होता है। ग़ज़लगो शायर ख़ुदाकी बात कहे या शैतानकी, आध्यात्मिकताकी गुत्थियाँ सुलझाये या आधिभौतिकताकी, तात्विक विवेचन करे या राजनैतिक घात-प्रतिघातका वर्णन, उसे सब ग़ज़लकी सीमाके अन्तर्गत कहना पड़ता है। सीमाके बाहर कहा हुआ शेर ग़ज़लका शेर नहीं कहला सकता। वह तग़ज़्ज़ुल (ग़ज़लगोई)से गिरा हुआ शेर होगा। ग़ज़लमें सीधे भाव व्यक्त न करके परदेमें कहे जाते हैं।

**इक आफ़ते-ज़माँ है यह 'मीर' इश्क़े-पेशा।**
**परदेमें सारे मतलब, अपने अदा करे है॥**

ग़ज़ल संकेतात्मक शायरी है। चाहे उसमें कैसे ही भाव व्यक्त किये जायें; वे सब गुलो-बुलबुल, साक़ी-ओ-मैख़ाना एवं हुस्नो-इश्क़ आदिके परदेमें कहे जाते हैं। बक़ौल 'ग़ालिब'—

**हरचन्द हो मुशाहद-ए-हक़की गुफ़्तगू।**
**बनती नहीं है, बादा-ओ-साग़र कहे बग़ैर[1]॥**

और इन बादा-ओ-साग़रकी आड़में कहे हुए भावोंको समझना आसान नहीं—

---

[1]ईश्वरीय चर्चा (मुशाहद-ए-हक़की गुफ़्तगू) करनेके लिए भी शराब और सुराही जैसे शब्दोंका प्रयोग अनिवार्य है। ग़ज़लमें उसकी निश्चित उपमाओंका प्रयोग अत्यन्त आवश्यक है।

'मीर' साहबका हर सुख़न है रम्ज़[1]।
बे हक़ीक़त है शेख़ क्या जाने॥

जो बात कही जाय, वह रंगे-तग़ज़्ज़ुलमें कही जाय, यही ग़ज़लगो शायरका बहुत बड़ा कमाल है। यूँ तो अध्ययन एवं अभ्याससे और गुरुकी अनुकम्पासे जो चाहे, वही व्यक्ति ग़ज़ल कह सकता है; परन्तु तग़ज़्ज़ुल जिस भावपूर्ण एवं संकेतात्मक कलाका नाम है, उसमें सफलता प्राप्त करना हँसी-खेल नहीं। बक़ौल 'मीर'—

है नज़्मका सलीक़ा हरचन्द सबको लेकिन—
जब जाने कोई लावे यूँ मोतीसे पिरोकर॥

मोतीसे पिरोनेकी कलामें दक्षता प्राप्त करनेके लिए अपनेको डुबोना और खपाना पड़ता है। ग़ज़ल हुस्नो-इश्क़ एवं दर्दो-ग़मकी शायरी है। ग़ज़लका शेर प्रभावोत्पादक तभी होगा, जब वह उसीके अनुरूप दिलो-दमाग़ रखनेवाले शायरने कहा होगा।

मीर— 'मीर' तब गर्मे-सुख़न कहने लगा हूँ मैं कि इक उम्र।
जूँ शमअ सरे-शाम ता-सुबह जला हूँ॥

क्या करूँ शरह ख़स्ता जानीकी?
मैंने मर-मरके ज़िन्दगानी की॥

आबलेकी-सी तरह, ठेस लगी, फूट बहे।
दर्दमन्दीमें गई, सारी जवानी उसकी॥

इश्क़में खोये जाओगे तो बातकी तह भी पाओगे।
क़द्र हमारी कुछ जानोगे, दिलको कहीं जो लगाओगे॥

---

[1]संकेत, भेद, पेचीदा बात है।

**आज़ार खींचनेके मज़े आशिक़ोंसे पूछ।**
**क्या जाने वोह कि जिसका कहीं दिल लगा न हो॥**

हृदय प्रेमसे ओत-प्रोत हो, मन इतना संवेदनशील हो कि दीन-दुखियों-को देखकर द्रवित हो उठे। जीवनभर शमअकी तरह गलता रहे, तब कहीं कलाम प्रभावोत्पादक बन पाता है। रंग और तूलिकाके सहारे चित्र तो बन जाता है, परन्तु मुँह बोलती तसवीर नहीं बन पाती। यह तभी बन पाती है, जब चित्रकार अपनेको खो और डुबो देता है।

**दिल नहीं दर्दमन्द अपना 'मीर'।**
**आहोनाले असर करें क्योंकर॥**

गुलो-बुलबुल, साक़ी-ओ-मैख़ाना, हुस्नो-इश्क़ आदि रूपकोंद्वारा ग़ज़लका निर्माण होता है। यही ग़ज़लके प्राण हैं। इनको बग़ैर समझे ग़ज़लका वास्तविक मर्म हृदयंगम नहीं हो सकता। इन रूपकोंसे ही ग़ज़लके शेरमें रंगे-तग़ज़्ज़ुल आता है। इन्हीं रूपकोंसे सोज़ो-गुदाज़ पैदा होता है। यही हृदतंत्रीको झंकृत कर देनेकी उसे शक्ति देते हैं। यही उसमें शेरियत लाते हैं।

**ग़ज़लके रूपक**

## गुलो-बुलबुल

गुलो-बुलबुलकी आड़ लेकर ग़ज़लगो शायरोंने राजनैतिक दाव-घातों, शोषितों, पीड़ितों आदिके सम्बन्धमें इस ख़ूबीसे कहा है कि सब कुछ कहनेपर भी वे गिरफ़्तमें नहीं आ सकते। गुल, बुलबुल, गुलशन, बाग़बाँ, सैयाद, गुलचीं, क़फ़स, आशियाँ यह सब रूपक[1] हैं, जिन्हें ग़ज़लगो-शायर अपने मनोभाव व्यक्त करनेके लिए उपयोग करते हैं। जो शायर इन

---

[1]इन सब रूपकोंपर शेरोशायरी, पृ० ८०–९३में विस्तारसे प्रकाश डाला गया है।

रूपकोंके गूढ़ अर्थसे अपरिचित होते हुए भी शेर कहते हैं, वह स्वयं भी उपहास्पद होते हैं और शायरीको भी दूषित करते हैं। ऐसे ही शायरोंकी बदौलत ग़ज़ल बदनाम हुई। एक पुराने लखनवी शायरका शेर है—

**बाग़में जाते तो हो पहने गुलाबी टोपी।**
**बुलबुलें-बे-अदब आ बैठे न ऐ जाँ सरपर॥**

यह बेचारा शायर इतना ही जानता था कि बुलबुल गुलाबके फूलपर आशिक़ रहती है। अतः उसकी कल्पनाने ज़ोर मारा तो वह केवल इतनी उड़ान भर सका कि बुलबुल फूलके धोकेमें गुलाबी टोपीवालेके सरपर भी बैठ सकती है।

वह ग़रीब जब ग़ज़लके अन्तरंगसे और उसके रूपकोंके वास्तविक भावोंसे परिचित ही न था, तब इसके सिवा वह कहता भी क्या? अब रंगे-तग़ज़्ज़ुलके चन्द अशआ़र दिये जाते हैं—

दुबले-पतले महात्मा गांधी जब बन्दी किये गये तो देशमें एक मातम-सा छा गया था। उस भावनाको 'साक़िब' लखनवीके शब्दोंमें यूँ व्यक्त किया जा सकता है—

**कहनेको मुश्ते-परकी[1] असीरी[2] तो थी, मगर—**
**ख़ामोश हो गया है चमन बोलता हुआ॥**

बन्दी-गृहमें पड़े हुए भी यदि शत्रुका कोई भेद मालूम हो जाय तो जैसे भी बने उसे देशके कर्णधारों तक पहुँचा देना चाहिए—

**साक़िब— किसीका रंज देखूँ यह नहीं होगा मेरे दिलसे।**
**नज़र सैयादकी झपके तो कुछ कहदूँ अनादिलसे[3]॥**

---

[1]मुट्ठीभर परोंकी; [2]गिरफ़्तारी; [3]बुलबुलोंसे।

सोनेके पिंजरेमें पराधीन जीवन बितानेकी अपेक्षा रूखी-सूखी खाकर झोंपड़ेमें रहना हज़ार दर्जे बेहतर—

**आरज़ू— ऐ 'आरज़ू' ! इस बाग़में फूलोंके क़फ़ससे।**
**बहतर हमें वोह अपना नशेमन कि है ख़सका[1] ॥**

शरीफ़ों एवं लुच्चोंको एक लाठी हाँकनेवाला शासक अन्धा नहीं है तो और क्या है।

**आरज़ू— उड़ न थी, मगर अन्धी ज़रूर थी बिजली।**
**कि देखे फूल, न पत्ते, न आशियाँ, देखा ॥**

देशकी सुख-समृद्धिका उपयोग करनेवाले देशके दुर्दिनोंमें भी अपने देश-प्रेमका परिचय दें—

**जिगर— काँटोंका भी हक़ है आख़िर।**
**कौन छुड़ाये अपना दामन ॥**

हमारी आँखोंके सामने हज़ारों देश-भक्त गोलीसे भून दिये गये, फाँसी चढ़ा दिये गये और हम अशक्त बने सब कुछ देखते रहे। कैसी दयनीय स्थिति थी—

**सफ़ी— ज़ोर ही क्या था जफ़ा-ए-बाग़बाँ देखा किये।**
**आशियाँ उजड़ा किया हम नातवाँ देखा किये ॥**

चन्द शेर बग़ैर टीका-टिप्पणीके दिये जा रहे हैं। सुविधाके लिए उनके ऊपर शीर्षक लगा दिये हैं—

## अकर्मण्यता

**असर— यह सोचते ही रहे और बहार ख़त्म हुई।**
**कहाँ चमनमें नशेमन बने, कहाँ न बने ?**

---

[1]घास-फूसका।

## सामर्थ्यके अनुसार

आनंदनारायण मुल्ला— अपनी क़ूवत आज़माकर अपने बाज़ू तोलकर।
आशि-ए-हस्तीमें[1] उड़ना है तो उड़, पर खोलकर॥

## सहृदयता

महशर— तमाम उम्र इसी एहतयातमें[2] गुज़री।
कि आशियाँ किसी शाख़े-चमनपे बार[3] न हो॥

## सुखमें दुःख छिपा है

खुर्शीद— क़फ़स दूर ही से नज़र आ रहा है।
क़यामत है अपनी बुलन्द आशियाँनी[4]॥

## क्षण भंगुर वैभव

मीर— कहा मैंने "कितना है गुलका सबात"[5]?
कलीने यह सुनकर तबस्सुम[6] किया॥
देर रहनेको जा नहीं यह चमन।
बू-ए-गुल हो, सफ़ीरे-बुलबुल हो॥

## यह कृपालुता ?

अदीब सहारनपुरी—कौन इस तर्ज़े-जफ़ाये आसमाँकी दाद दे?
बाग़ सारा फूंक डाला, आशियाँ रहने दिया॥

---

[1]जीवन-आकाशमें; [2]सावधानीमें; [3]बोझ; [4]ऊँचाईपर घोंसला बनाना; [5]निवास, स्थायित्व; [6]मुसकान।

## साक़ी-ओ-मैख़ाना

ग़ज़लमें वर्णित, शराब, रिन्द, मैखाना, साक़ी आदिसे जनसाधारण वास्तविक मद्य-प्रसारका तात्पर्य्य समझते हैं। उन्हें क्या मालूम कि जिन ग़ज़लगो शायरोंने कभी शराब छूई तक नहीं, वे भी इस विषयपर जीवन पर्यन्त लिखते रहे। क्योंकि यह सब भी ग़ज़लके अत्यन्त आवश्यक रूपक हैं। इनके बग़ैर काम ही नहीं चल सकता। यहाँ हम चन्द शेर बग़ैर किसी टिप्पणीके पेश कर रहे हैं। आशा है उनके शीर्षकोंसे भावोंके समझनेमें कोई कठिनाई न होगी।

### हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य

मुल्ला— कभी तेग़े-क़लमसे भी मिटे हैं तिफ़रके[1] दिलके।
मिटाना है तो पहले रखके साग़र दरमियाँ समझो॥

### लालची

रियाज़— मक़सूद है कोई न पिये वोह हरीस[2] हूँ।
वाइज़ हुआ, मैं रिन्द क़दहख़्वार क्या हुआ॥

### दानीसे

अदम— शिकन न डाल जबींपर शराब देते हुए।
यह मुसकराती हुई चीज़ मुसकराके पिला॥

### आलोचकोंसे

दिल— तेरी फ़र्दे-अमल[3] हो पाक इस दुनियामें ऐ वाइज़!
कोई पीता है पीने दे, कहीं ढलती है ढलने दे॥

---

[1]वैमनस्य; [2]लालची, ईर्ष्यालु; [3]कर्मोंकी तालिका।

## शासन-व्यवस्थापकोंसे

मुल्ला— निज़ामे-मैकदा साक़ी ! बदलनेकी ज़रूरत है।
हज़ारों हैं सफें जिनमें, न मैं आई, न जाम आया ॥

वुसअ़ते-बज़्मे जहाँमें हम न मानेंगे कभी।
एक ही साक़ी रहे, और एक पैमाना रहे ॥

## ये छिद्रान्वेषी

ताविश सुलतानपुरी—जहाँवाले न देखें इसलिए छुप-छुपके पीता हूँ।
ख़ुदाका ख़ौफ़ कैसा? वोह तो इसयाँपोश[1] है साक़ी!

## कलके ढोंगी, आज नेता

मीर— मसजिदमें इमाम आज हुआ, आके वहाँसे।
कल तक तो यही 'मीर' ख़राबात नशीं[2] था ॥

## चेतावनी

मीर— ऐ वोह कोई जो आज पिये है शराबे-ऐश।
ख़ातिरमें रखियो कलके भी रंजो-ख़ुमारको ॥

## हुस्न-ओ-इ़श्क़

ग़ज़ल, हुस्नो-इश्क़ और सोज़ो-गुदाज़ (व्यथा-वेदना)की शायरी है। जिन ग़ज़लगो शायरोंको कभी किसीपर मरनेकी सआ़दत मयस्सर

---

[1]अपराधोंपर परदा डालनेवाला, पाप ढकनेवाला; [2]शराबख़ानेमें पड़ा रहनेवाला।

न हुई, उनको भी कूचये-हुस्नकी नरमासराई करना लाज़िमी होती है। क्योंकि ग़ज़लका निर्माण ही हुस्नो-इश्क़के तन्तुओंसे हुआ है।

ग़ज़लके बाह्य रूपसे ऐसा मालूम होता है कि ग़ज़लगो शायर कूच-ए-महबूब (प्रेयसीकी गली) में फटेहाल दीवानावार घूमते रहते हैं। माशूक़के दरबानोंसे पिटते हैं, ज़लीलो-ख्वार होते हैं; मगर वहाँसे टलनेका नाम नहीं लेते। महबूब (प्रेयसी) उनकी हरकतोंसे नालाँ है; मगर वे ख़तोंका ताँता बाँधे रखते हैं। ख़त ही नहीं भेजते, दरबानकी निगाह बचाकर स्वयं भी मकानमें कूद जाते हैं। माशूक़की गालियाँ खाते हैं, दुतकारे जाते हैं, मार सहते हैं, घायल होते हैं, मगर अपनी हरकतोंसे बाज़ नहीं आते। गोया ज़लीलोख्वार बने रहनेके अतिरिक्त उन्हें कोई अन्य कार्य्य नहीं हैं। न उनके पत्नी है, न बच्चे हैं, न गुरुजन हैं और न उनके पास कोई लोकोपयोगी कार्य है।

लेकिन शेरका अन्तरंग देखिये तो कुछ और ही आलम नज़र आता है। यह नहीं भूलना चाहिए कि ग़ज़लगो शायर हर बात इशारेमें और परदेमें बयान करता है। कभी वह विश्व-वेदनाको अपनी वेदना बनाकर ग़मे-जानाँके परदेमें पेश करता है[1] और कभी अपनी वेदनाको विश्वभरकी वेदना समझकर ग़मे-दौराँके रूपमें पेश करता है।[2] यानी जो वह संसारमें देखता और सुनता है, वह इश्क़ो-हुस्नके परदेमें बयान करता है। बक़ौल 'मीर'—

---

[1]जो ग़म हुआ, उसे ग़मे-जानाँ बना लिया

यानी सांसारिक आपदायें किसी भी कारणसे आयें, वे सब इश्क़की बजहसे आई। यही समझकर उसका उल्लेख ग़ज़लमें किया जाता है।

[2]हमपर अकेले ही यह आपदाओंका पहाड़ नहीं टूटा है, अपितु समस्त मानव-समाज इसके नीचे पड़ा कराह रहा है। उन सबका दुःख दूर होनेमें ही अपना कल्याण है। यही भावना ग़मे-दौराँ है।

**कहियेगा उससे क़िस्स-ए-मजनूँ।**
**यानी परदेमें ग़म सुनाइयेगा॥**

अर्थात्—ग़ज़लगो सब बातें रूपकोंद्वारा परदेमें कहता है। चन्द उदाहरण देखिये—

बादशाहत मिटनेपर मुग़लिया सल्तनतका मिट जाना, इतनी बड़ी घटना है कि उसपर नज़्मगो शायर पोथा लिख सकता है, परन्तु ग़ज़लगो शायरको तो एक ही शेरमें सब कुछ व्यक्त करना चाहिए और वह भी रंगे-तग़ज्ज़ुलमें। मुग़लिया सल्तनतनके मिटनेसे, शाहज़ादों और शाहज़ादियोंके इधर-उधर भटकनेसे और दिल्लीके उजड़नेसे प्रभावित होकर 'मीर'ने अपनी कई ग़ज़लोंमें इस तरहके भाव व्यक्त किये हैं—

**नाम आज कोई याँ नहीं लेता है उन्होंका।**
**जिन लोगोंके कल मुल्क यह सब ज़ेरे-नगीं था॥**

**था मुल्क जिनके ज़ेरे-नगीं साफ़ मिट गये।**
**तुम इस ख़यालमें हो कि नामो-निशाँ रहे॥**

**सब्ज़ाने-ताज़ा रौकी जहाँ जलवागाह थी।**
**अब देखिये तो वाँ नहीं साया दरख़्तका॥**
**दिल्लीमें आज भीक भी मिलती नहीं उन्हें।**
**था कल तलक दमाग़ जिन्हें ताजो-तख़्तका॥**

'मीर'के उक्त चारों शेर व्यथा-पूर्ण हैं और तत्कालीन इतिहासका एक झलकमें दिग्दर्शन करानेमें कमाल रखते हैं; किन्तु इन अशआरमें रंगे-तग़ज्ज़ुल नहीं दिखलाई देता। ग़ज़लके प्राण हुस्नो-इश्क़के रूपकका कहीं भी उल्लेख नहीं हुआ।

उजड़ी हुई दिल्लीमें बैठकर मिर्ज़ा 'ग़ालिब' इसी घटनाको रंगे-तग़ज़्ज़ुलमें देखिये किस सलीक़ेसे व्यक्त करते हैं—

**दिलमें ज़ौक़े-वस्लो-यादे-यार तक बाक़ी नहीं।**
**आग इस घरमें लगी ऐसी कि जो था जल गया[1]॥**

इतने बड़े विध्वंसकी बात 'ग़ालिब'ने किस ख़ूबी और सादगीसे कही है कि क़ानूनकी ज़दमें भी न आयें; सुख़न-फ़हम लुत्फ़ अन्दोज हो सकें और जनसाधारण ज़ौक़े-वस्लके चक्करमें ही पड़े रहें।

पिछले पृष्ठोंमें 'तग़ज़्ज़ुल' शब्द कई बार प्रयुक्त हुआ है। तग़ज़्ज़ुलसे हमारा आशय ग़ज़लगोईसे है। कवितामें जब तक कवित्त्व न हो, कविता नहीं। मिठाईमें मिठास, मेहदीमें लाली, फूलमें सुगन्ध और आदमीमें आदमीयत होना आवश्यक है तो ग़ज़लमें तग़ज़्ज़ुलका होना भी ज़रूरी है। तग़ज़्ज़ुलके बिना ग़ज़ल बेजान, बेमज़ा और फ़ीकी है। ग़ज़लमें उसके रूपकोंके मिश्रणसे रंगे-तग़ज़्ज़ुल पैदा होता है।

रंगे-तग़ज़्ज़ुल

## चन्द उदाहरण—

ज़ौक़की ग़ज़लका एक मशहूर शेर है—

**नाम मंजूर है तो फ़ैज़के असबाब बना।**
**पुल बना, चाह बना, मसजिदो-तालाब बना॥**

शेरके वज़नने शायरको इजाज़त नहीं दी, वरना मतब बना, मकतब

---

[1]अब हमारे हृदयमें ज़ौक़े-वस्ल (प्रेयसीके मिलनकी अभिलाषा) और यारकी याद तक बाक़ी नहीं है। क्योंकि हमारे हृदयरूपी घरमें ऐसी आग लगी है कि सर्वस्व भस्मीभूत हो गया।

बना, वग़ैरह और भी नेक कामोंकी फ़हरिस्त नज़्म की जा सकती थी। शायरने जिस भावनासे प्रेरित होकर शेर कहा है, उसमें वह सफल हुआ है, लेकिन इस शेरमें तग़ज़्ज़ुल तलाश करनेपर भी नहीं मिलता। ख़ालिस मौलवियाना रंगका शेर है। अगर मौलवियों-जैसी बेतुकी बातें शायर भी कहने लगें तो फिर उनकी विशेषता क्या रही? 'अज़ीज़' लखनवी नेक काम करनेकी प्रेरणा यूँ करते हैं—

पैदा वोह बातकर कि तुझे रोयें दूसरे।
रोना ख़ुद अपने हालपै यह ज़ार-ज़ार क्या?

शेरमें नेक कामोंकी कोई सूची नहीं है, फिर भी उसके पढ़नेसे मनको प्रेरणा मिलती है। आशिक़ सदैव रोता बिसूरता रहता है। ग़ज़लके इसी रूपकको देनेसे शेरमें तग़ज़्ज़ुल भी आ गया और चूँकि शायरने स्वयंको सम्बोधित करके लिखा है; ज़ौक़की तरह दूसरोंको नसीहत नहीं की। इसलिए मौलवियतके इलज़ामसे भी बरी रहे। इसी भावके द्योतक दो शेर 'मीर'के भी मुलाहिज़ा फ़रमाएँ—

बारे दुनियामें रहो ग़मज़दा या शाद रहो।
ऐसा कुछ करके चलो, यां कि बहुत याद रहो॥

कहता है कौन तुझको यां यह न कर तू वोह कर।
पर हो सके तो प्यारे टुक दिलमें भी जगह कर॥

अज़ीज़ने कहा है—

पैदा वोह बात कर कि तुझे रोयें दूसरे

आशय तो उनका यही था कि हम ऐसे भले काम करें कि दूसरे हमें याद करें। मगर 'याद'के बजाय उन्होंने 'रोयें दूसरे' नज़्म किया। दूसरोंके रोनेसे लानत-मलामतका भी आशय निकलता है कि लोग कहें "कम्बख़्त

ग़ौर किसी टीका-टिप्पणीके सुन लीजिये और मेरी तरह बैठे हुए सर धुनिये—

**इश्क़ आदममें नहीं कुछ छोड़ता।**
**हौले-हौले कोई खा जाता है जी॥**

मिर्ज़ा दाग़का एक शेर है—

**यहां भी तू, वहां भी तू, ज़मीं तेरी, फ़लक तेरा।**
**कहीं हमने पता पाया न हरगिज़ आजतक तेरा॥**

स्पष्ट है कि शेर ख़ुदाके लिए कहा गया है। अब देखिये इसी भावको 'मीर' मज़ाजी इश्क़में किस विश्वासके साथ फ़रमाते हैं—

**है इस चमनमें वोह गुल, सदरंग महव देखो।**
**देखो जहां वही है, कुछ उस सिवा न देखो॥**

'दाग़' यह जानते हुए भी कि ईश्वर सर्वत्र है, उसके जलवेसे वंचित रहते हैं। 'मीर' उसका जलवा सर्वत्र देखते हैं। दोनोंके विश्वास और प्यारमें पृथ्वी-आकाशका अन्तर है। इसके अतिरिक्त दाग़के शेरमें तग़ज़्ज़ुल नामको नहीं और 'मीर'का शेर चमन, गुल, सदरंग, महव आदि शब्दोंसे तग़ज़्ज़ुलका बेमिसाल शेर हो गया है।

मौलाना ज़फ़रअलीका एक शेर है—

**यह है पहचान ख़ासाने-ख़ुदाकी इस ज़मानेमें।**
**कि ख़ुश होकर ख़ुदा उनको गिरफ़्तारे-बला करदे॥**

प्रकट रूपमें तो इस शेरमें उसी पुरानी धारणाको नज़्म किया गया है कि ईश्वरभक्तों और भले मनुष्योंपर सदैव मुसीबतोंके पहाड़ टूटते रहे हैं, और यह सब इसलिए होता है, ताकि ईश्वर अपने असली-नक़ली भक्तों एवं अच्छे-बुरे मनुष्योंकी पहचान कर सके। वह महज़ आज़मानेके लिए यह सितमज़रीफ़ी करता है, क्या ख़ूब ?

**किसीकी जान गई आपकी अदा ठहरी**

यदि वह घट-घटका ज्ञाता है तो फिर उसे यह ज़हमत उठानेकी ज़रूरत भी क्या, किसीको बग़ैर सताये भी वह अपने दिव्यज्ञानसे सब कुछ जान सकता है। लेकिन नहीं, जिसपर वह बहुत खुश होता है, महरबानी फ़रमाकर उसे बलाओं-आफ़तोंमें घेर देता है।

खुदाकी इन्हीं सितमज़रीफियोंसे तंग आकर सर 'इक़बाल'ने उससे पूछा था—

**इसी कोकबकी ताबानीसे है तेरा जहाँ रोशन।**
**जवाले-आदमे-ख़ाकी ज़ियाँ तेरा है या मेरा[1]॥**

खुदाकी इन नाज़िल की हुई मुसीबतोंसे घिरे हुए मिर्ज़ा ग़ालिब कितने वेदना भरे स्वरमें कराह उठते हैं—

**ज़िन्दगी अपनी जब इस शक्लसे गुज़री या रब!**
**हम भी क्या याद रखेंगे कि ख़ुदा रखते थे॥**

'बहार'कोटीका यह उलाहना कितना व्यथापूर्ण है—

**वहीं हज़ारों बहिश्तें भी हैं ख़ुदाबन्दा!**
**सिसक-सिसकके कटी ज़िन्दगी जहाँ मेरी॥**

लेकिन आशिक़के मनमें यह भाव भी आना अधर्म है कि मुझ निरपराधको किन पापोंकी सज़ा मिल रही है। बक़ौल राज़ यज़दानी—

---

[1]इसी नक्षत्रके प्रकाश (कोकबकी ताबानी)से तेरा संसार जग-मग हो रहा है। फिर भी तू इसीको मिटा रहा है। मैं पूछता हूँ, तेरी इस हरकतसे स्वयं तेरा नुक़सान हो रहा है या मेरा? जब तू खुदा-खुदा कहनेवालोंको मिटा डालेगा, तब तुझे खुदा कौन कहेगा? इन्हींकी बदौलत तो तू खुदा बना हुआ है।

**सज़ाको झेलनेवाले यह सोचना है गुनाह ।**
**कोई क़ुसूर भी तुझसे कभी हुआ कि नहीं ॥**

हम भी कहाँकी बात कहाँ ले गये । हमें कहना सिर्फ़ इतना था कि मौ० ज़फ़रअलीका ज़ाहिरा आशय केवल इतना है कि ख़ुदा जिनपर महरबान होता है । ख़ुश होकर उन्हें बलाओंमें फँसा देता है । यानी उन्होंने ख़ुदाकी आड़में उस हक़ीक़तको उजागर किया है, जो कि हमारे जीवनमें अक्सर घटित होती रहती है । यानी हमारे महरबान, शुभचिन्तक, प्यारे-मीठे ही हमें अक्सर मुसीबतोंमें फँसाते रहते हैं । बक़ौल किसीके—

**दोस्तोंसे हमने वोह सदमे उठाये जानपर ।**
**दिलसे दुश्मनकी अदावतका गिला जाता रहा ॥**

ज़फ़रअली और उक्त शायरने एक बातको दो तरीक़ोंसे बयान किया है, और उसमें वे बेहद कामयाब हुए हैं । मगर तग़ज़्ज़ुलकी चाश्नीके बग़ैर शेरमें शेरियत नहीं आ पाती । अब ज़रा 'मीर'का रंगे-तग़ज़्ज़ुल भी मुलाहिज़ा फ़रमायें—

**जफ़ा उसपै करता है हदसे ज़ियादा ।**
**जिसे यार अहले-वफ़ा जानता है ॥**

उक्त शेरका लुत्फ़ स्वानुभवी ही उठा सकते हैं । पत्नी या प्रेयसीके बिगड़ने-रूठने, ज़िद करने या तंग करनेपर उससे कहा गया हो कि "जब देखो तुम हमारे सरपर चढ़ी रहती हो, हमें इतना तंग न किया करो ।" तब उसका तेवर बदलकर कहना—"तुम्हारे सिवा मेरा और है ही कौन, जिसपर मैं झूँझल उतारती फिरूँ? अपनेपर ही तान टूटती है, दूसरा कौन सुनता है ?"

'मीर'का शेर पढ़िये और प्रयत्न कीजिये कि आपका भी कोई ऐसा अपना हो, जो आपपर जफ़ा करना अपना हक़ समझता हो । तब शायद

आप 'बासित' भोपालीके इस शेरको पढ़नेके हक़दार हो सकें—

**उस ज़ुल्मपै क़ुर्बां लाख करम, उस लुत्फ़पै सदक़े लाख सितम।**
**उस दर्दके क़ाबिल हम ठहरे, जिस दर्दके क़ाबिल कोई नहीं॥**

शब्दोंके रख-रखावकी यही वह कोमल कला है, जो ग़ज़लको कहीं-से-कहीं पहुँचा देती है। मश्क़े-सुख़नसे ग़ज़ल तो हर कोई कह सकता है। मगर उसमें जान नहीं डाल सकता। जान डालनेके लिए अपनी जान खपानी पड़ती है। दर्दे-दिलसे परिचित हुए बिना दास्ताने-ग़म बयान नहीं हो सकती। बक़ौल 'मीर'—

**लज़्ज़तसे दर्दकी जो कोई आश्ना नहीं।**
**सौ लुत्फ़ क्यों न जमा हों, उनमें मज़ा नहीं॥**

**नई ग़ज़ल गोई**

वर्त्तमान युगीन ग़ज़लमें कितना अभूतपूर्व संशोधन, परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धन हुआ है? उसका बाज़ारी इश्क़, हरजाई माशूक़, बुलहविस आशिक़ परिवर्त्तित होकर कितने बुलन्द हो गये हैं? ग़ज़लमें कैसे-कैसे अछूते मज़मूनोंका समावेश हुआ है, और ग़ज़लगो शायरोंने कैसे-कैसे बेदाग़ हीरे तराशे हैं? लगे हाथ एक नज़र उनको भी देखते चलिये।

उद्धरणमें इसी युगके शायरोंके शेर दिये जा रहे हैं, ताकि वर्त्तमान युगीन ग़ज़लगोईकी प्रगतिका सही-सही अन्दाज़ा लग सके। तुलनाके लिए पुरानी शायरीका उल्लेख करते समय उसी युगके शेर उद्धृत किये जा रहे हैं, और जहाँ नवीन शायरीमें पुरानी शायरीकी झलक मालूम होती है, वहाँ तुलनाके लिये फुटनोटमें प्राचीन शायरोंमें सर्वश्रेष्ठ 'मीर'के अशआर दिये जा रहे हैं; ताकि पुरानी और नई शायरीकी गति-विधिका ठीक-ठीक आभास मिल सके।

उर्दू-ग़ज़लमें हरजाई एवं बाज़ारी माशूक़का तसव्वुर दरबारी-वाता-

वरण, तत्कालीन वेश्यासक्तिकी आम प्रथा और फ़ारसी-शायरीके अन्ध अनुकरणके कारण आया। यदि तत्कालीन ग़ज़लगो शायर हिन्दी-कविता-

**पाक इश्क़**

का अनुसरण करना अपनी शानके खिलाफ़ समझते थे, अथवा हिन्दीसे अनभिज्ञ होनेके कारण उसके गुणोंसे परिचित नहीं थे, तो भी यदि वे फ़ारसीके बजाय अरबी-शायरीका अनुकरण करते तो उर्दू-शायरी पाक इश्क़से मालामाल हुई होती।

अरबी-शायरीका इश्क़ भी इन्सानी इश्क़ है, किन्तु वह कामुकता एवं वासनाके दोषसे मुक्त है। प्रेमी-प्रेमिका एकान्तमें बैठे हुए हैं, किसीकी दृष्टि पड़नेका भी उन्हें खटका नहीं है; परन्तु क्या मजाल कि दोनोंमें-से किसीके हृदयमें भी काम-वासना निहित हो। दोनों प्रेम-विभोर हुए बैठे हैं। यह बात प्रसिद्ध है कि एक बार ऐसे ही अवसरपर किसी प्रेमीने अपनी कामवासना व्यक्त की तो प्रेमिका क्रुद्ध होकर बोली—"क्या इसी लिए तुम मुझसे प्रेम करते थे ?" प्रेमिकाके यह शब्द सुनकर प्रेमी गद्-गद् हो गया। उसे अपने भाग्यपर अभिमान हुआ कि उसे इतनी पवित्र और सुशीला नारीसे प्रेम करनेका सौभाग्य प्राप्त हो सका। फिर उसने अपनी प्रेयसीपर वास्तविक बात प्रगट कर दी कि उसने परीक्षास्वरूप ऐसा प्रस्ताव किया था। यदि तनिक भी स्वीकृतिका संकेत मिला होता तो उसे महान क्लेश पहुँचता और यह खंजर उसने सीनेमें उतार लिया होता।[1]

प्रेयसीसे शादी करना या वासना तृप्त करना, प्रेम नहीं, प्रेमका शव पीटना है, कामुकताको प्रेम कहना शैतानको ख़ुदा कहना है—

आरज़ू— हविसकार[2] आशिक़ भी ऐसा है जैसे—
वोह बन्दा कि रख ले ख़ुदा नाम अपना॥

---

[1]मजामीन पृ० २६; [2]कामुक।

बिना किसी वासना या स्वार्थके प्रेममें आठों पहर भीगा रहे, वही प्रेम शुद्ध प्रेम है—

असर— इश्क़ है इक निशाते-बेपायाँ[1]।
शर्त यह है कि आरज़ू[2] न रहे॥

आसी— आशिक़ीमें है महवियत[3] दरकार।
राहते-वस्ल[4]-ओ-रंजे-फ़ुरक़त[5] क्या॥

जिगर— वोह भी है इक मुक़ामे-इश्क़ जहाँ—
हर तमन्ना[6] गुनाह[7] होती है॥

असर— मज़ाक़े इश्क़ हो कामिल तो सूरते-शबनम[8]।
कनारे-गुलमें रहे और पाकबाज़[9] रहे॥

आरज़ू— दरयूज़ागरे-हिर्स[10] न बन राहे-तलबमें[11]।
दिल इश्क़से ख़ाली है तो कासा[12] है गदाका[13]॥

उम्मीद— अरे सूदो-ज़ियाँ[14] देखा नहीं जाता मुहब्बतमें।
यह सौदा और सौदा है यह दुनिया और दुनिया है॥*

---

*मीर— चाहतका इज़हार[1] किया सो अपना काम ख़राब किया।
इस परदेके उठ जानेसे उसको हमसे हिजाब[2] हुआ॥

[1]स्थाई सुख; [2]अभिलाषा, वासना; [3]तन्मयता; [4]मिलन-सुख; [5]विरह-दुःख; [6]इच्छा; [7]अपराध; [8]ओसकी तरह; [9]फूलपर रहती हुई भी अछूती—अलग—रहती है; [10]तृष्णाके कारण दर-दरका भिखारी; [11]अभिलाषाओंके मार्गमें; [12]-[13]भिक्षुकका पात्र; [14]लाभ-हानि।

---

[1]इच्छा प्रकट की; [2]लाज, संकोच।

यह निःस्वार्थ और पवित्र प्रेम सरल नहीं, इसमें जीवनभर तपना पड़ता है—

जिगर— यह इश्क़ नहीं आसाँ, इतना ही समझ लीजे।
इक आगकी दरिया है, और डूबके जाना है॥

आरज़ू— मुहब्बत नहीं, आगसे खेलना है।
लगाना पड़ेगा, बुझाना पड़ेगा॥*

जब इस प्रेमरूपी आगमें मनुष्य तप लेता है, तभी वह सचमुच इन्सान बन पाता है—

शाद— नहीं रहते रिया-ओ-क़बह फिर भूलेसे भी दिलमें।
मुहब्बत यारकी इन्सा बना देती है इन्साको॥†

---

†मीर— सजदा उस आस्ताँका[1] न जिसको हुआ नसीब।
वोह अपने एतक़ादमें[2] इन्सान ही नहीं॥

*मीर— क्या जानिये कि छाती जले है कि दाग़े-दिल।
इक आग-सी लगी है कहीं, कुछ धुआँ-सा है॥
हम तेरे इश्क़से वाक़िफ़ नहीं हैं लेकिन—
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है॥
आतिशे-इश्क़[3] जिसके दिलको लगी।
शमअ्-साँ[4] आप ही को खाता है॥
इश्क़के दो गवाह ला, यानी—
जर्दि-ए-रंगो-चश्मेतर[5] है शर्त॥
चाहतमें[6] दख़ल मत दे ज़िनहार[7] आरज़ूको[8]।
करदे है दिलकी ख़्वाहिश[9] बीमार रफ़्ता-रफ़्ता॥

---

[1]प्यारेकी चौखटको प्रणाम करना; [2]हमारी सम्मतिमें; [3]प्रेम-अग्नि; [4]मोमबत्तीकी तरह स्वयंको जलाता रहता है; [5]चेहरा पीतवर्ण और नेत्र अश्रुपूर्ण; [6]प्यारमें, इश्क़में; [7]कदापि; [8]अभिलाषाको; [9]इच्छा।

यही शुद्ध प्रेम 'तू', 'मैं' और अपने-परायेका भेद भी मिटा देता है। सर्वत्र अपने प्यारेका जलवा नज़र आता है—

**इसलामो-कुफ़ कुछ नहीं आता ख़यालमें।**
**मुद्दतसे मुब्तला हूँ मैं आप अपने हालमें॥***

प्रेममें कहीं-न-कहीं कसर होती है, तभी उपेक्षाका आभास होता है—

**राज रामपुरी— नियाजे-इश्क़में ख़ामी कोई मालूम होती है।**
**तुम्हारी बरहमी क्यों बरहमी मालूम होती है॥**

अगर इश्क़में कहीं ख़ामी नहीं है, तो फिर बरहमी महसूस होनेके क्या मानी? इश्क़ तो इन्सानको उस बुलन्दीपर पहुँचा देता है कि—

**नाजिश परतापगढ़ी—शिकवा, न शिकायत, न तसव्वुर, न ख़यालात।**
**अल्लाहरे यह मेरी मुहब्बतके मुक़ामात॥†**

---

***मीर— दिल साफ़ हो तो जलवागहे-यार क्यों न हो।**
**आईना हो तो क़ाबिले-दीदार क्यों न हो॥**

**दिया दिखाई मुझे तो उसीका जलवा 'मीर'।**
**पड़ी जहानमें जाकर जहाँ नज़र मेरी॥**
**जिस्मे-ख़ाकीका जहाँ परदा उठा।**
**हम हुए वोह 'मीर' सब, वोह हम हुआ॥**

**†मीर— हमें इश्क़में 'मीर' चुप लग गई है।**
**न शुक्रो-शिकायत, न हर्फ़ो-हिकायत॥**

---

[1]यदि मनमन्दिर स्वच्छ है तो उसमें प्यारेका निवास क्यों न होगा? मन दर्पण होगा तो वह दर्शन-योग्य होगा ही।

वोह युग समाप्त हुआ, जब इश्क़को बवाले-जान समझकर उससे बचनेकी ताक़ीद की जाती थी—

वसीयत 'मीर'ने मुझको यही की।
"कि सब कुछ होना तू आशिक़ न होना" ॥

अब तो बग़ैर इश्क़ इन्सान, इन्सान नहीं बन पाता—

असर— इन्सानको बेइश्क़ सलीक़ा नहीं आता।
जीना तो बड़ी चीज़ है, मरना नहीं आता ॥

राधेनाथ क़ौल—इश्क़ जन्नत है आदमीके लिए।
इश्क़ नेमत है आदमीके लिए ॥*

प्रेम-विभोर प्रेमीको प्रेमका मार्ग बतानेके लिए पथ-प्रदर्शककी आवश्यकता नहीं—

दिल— रहनुमाकी[1] क्या ज़रूरत इश्क़ कामिल[2] चाहिए।
दिल जहाँ तड़पे समझ लेना वही है कूए-दोस्त[3]॥

सच्चा प्रेमी घुट-घुटके मर जायगा, किन्तु कोई भी इच्छा ऐसी व्यक्त नहीं करेगा, जो उसकी प्रेयसीको अरुचिकर हो—

---

[1]पथ-प्रदर्शककी; [2]पूर्ण; [3]प्रेयसीका स्थान;

*मीर— क्या हक़ीक़त कहूँ कि क्या है इश्क़।
हक़शनासोंका[1] हाँ ख़ुदा है इश्क़ ॥
इश्क़से जा[2] नहीं कोई ख़ाली।
दिलसे ले अर्शतक[3] भरा है इश्क़ ॥

---

[1]इन्साफ़ पसन्दोंका; सत्यवादियोंका; [2]स्थान; [3]आकाशतक।

आरज़ू— ऐसी हसरत[1] ही से बाज़ आना है ख़ूब।
जो मुझे मरग़ूब[2] उनको नापसन्द ॥

जिगर—शौक़का मर्सिया न पढ़, इश्क़की बेबसी न देख।
उसकी ख़ुशी, ख़ुशी समझ, अपनी ख़ुशी, ख़ुशी न देख ॥

अर्शी— जब उन्हें अर्ज़े-अलमपर[3] मुज़तरिब[4] पाता हूँ मैं।
जो न पीनेके हैं आँसू वोह भी पी जाता हूँ मैं ॥

लुत्फ़ी रिज़वाई—नज़र किसीकी नदामतसे[5] क्या झुकी 'लुत्फ़ी' !
कि याद मुझको ख़ुद अपने ही सब क़ुसूर आये ॥

यदि प्रेमीके किसी बर्तावसे प्रेयसीके हृदयको ठेस पहुँचे या उसकी आँखोंसे आँसू आ जायें तो यह उसका अपराध क्षमा योग्य नहीं—

जिगर— हश्रके दिन वोह गुनहगार न बख़्शा जाये।
जिसने देखा तेरी आँखोंका पशेमाँ[6] होना ॥

प्रेमी मन ही मनमें घुटता रहता है, परन्तु मनकी बात मुँहपर इस भयसे नहीं लाता कि कहीं उसकी प्रेयसीकी प्रतिष्ठामें बाल न आ जाये—

ख़ुर्शीद फ़रीदाबादी—आ जाये न उनकी निगहे-मस्तपे इल्ज़ाम।
ऐ दोस्त ! न कर तज़करि-ए-गर्दिशे-ऐयाम ॥*

---

[1]इच्छासे; [2]रुचिकर; [3]अपनी व्यथाओंके प्रकट करनेपर;
[4]बेचैन; [5]शर्मिन्दगीसे; [6]शर्मिन्दा; [7]मुसीबतोंका वर्णन।

*मीर— गिला लबतक न आया 'मीर' हरगिज़।
खपा जी ही में ग़म सारा हमारा ॥
तुरबतसे आशिक़ोंकी न उट्ठा कभी ग़ुबार।
जीसे गये वले[1] न गईं राज़दारियाँ[2] ॥

---

[1]लेकिन; [2]भेदकी बातें किसीको न बताईं।

सच्चा प्रेमी 'मोमिन'की तरह अपनी प्रेयसीको बदनाम करनेकी धमकी नहीं देता है—

**मुझसे मिल वरना, रक़ीबोंसे मैं सब कह दूँगा।**
**दुश्मनी अबकी तेरी और वह पहला इख़लास॥**

बल्कि बदनामीको स्वयं ओढ़कर प्रेयसीकी मान-प्रतिष्ठाको अक्षुण्य बनाये रखता है—

**अर्शी—** **ज़माना कहता है बरबादे-आरज़ू मुझको।**
**ख़ुदा करे कोई इलज़ाम उनपै आ न सके॥**
**अस्मते-कोनीन[1] उस बरबादे-उलफ़तपर[2] निसार[3]।**
**उनके दामनको बचाकर ख़ुद जो रुसवा[4] हो गया॥**

और यदि प्रेमी अपनेमें इतनी सामर्थ्य नहीं पाता है, तो उसे जीवित रहनेका अधिकार नहीं—

**हसरत—** **उस शोख़का शिकवा किया, 'हसरत' यह तूने क्या किया ?**
**इससे तो ऐ मर्दे-ख़ुदा ! बेहतर था मर जाना तेरा॥**

शिकवे-शिकायतकी पाकइश्क़में गुंजाइश ही नहीं। वहाँ तो सच्चे आशिक़की हालत यह होती है—

**फ़ानी—** **अब लबपै वोह हंगामि-ए-फ़रियाद नहीं है।**
**अल्लाहरे तेरी याद कि कुछ याद नहीं है॥**

**अर्शी—** **आपके अहदे-करमका भी तसव्वुर है गराँ[5]।**
**उन मुक़ामातपै अब आपका सौदाई[6] है॥**

---

[1]संसारकी प्रतिष्ठा; [2]प्रेममें बरबाद हुए पर; [3]न्योछावर; [4]बदनाम; [5]आपकी कृपाओंके क्षण भी ध्यानमें नहीं रहे हैं; [6]आपका यह दीवाना आशिक़ इतनी बुलन्दीपर पहुँच गया है।

**बाक़ी सद्दीक़ी**— यह कैसी बेख़ुदी है लिख गया हूँ।
मैं अपने नामके बदले तेरा नाम॥

**मसरूफ़ अलम**—उनके तसव्वुरातका[1] अल्लाहरे करम।
तनहा[2] न एक लमहेको रहने दिया मुझे॥

**असग़र**— होश किसीका भी न रख, जलवागहे नियाज़में[3]।
बल्कि ख़ुदाको भूल जा सजद-ए-बेनियाज़में[4]॥*

**महबूबका मर्त्तबा**

ग़ज़लका इश्क़ जब इतना पाक और बेलौस होता जा रहा है, तब उसके माशूक़ (महबूब, प्यारे)का मर्तबा कितना बुलन्द, महान एवं गौरवास्पद होना चाहिए? यह जिज्ञासा सहज-में ही बलवती हो उठती है। आलमे-इश्क़में महबूब ही सब कुछ है। आशिकके लिए महबूबकी चौखट काबा और उसको बार-बार निहारना ही नमाज़ है—

**शाद**— तेरी गलीके क़अ्दह-क़यामकी[5] क्या बात?
इसीको दिलकी ज़बाँमें नमाज़ कहते हैं॥

---

[1]ध्यानका; [2]अकेला; [3]प्रेम-मन्दिरमें; [4]प्रेमकी तल्लीनतामें; [5]बैठने, रहनेकी।

*मीर— महव कर आपको यूँ हस्तीमें उसकी, जैसे—
बून्द पानीकी नज़र आती नहीं पानीमें॥
सदा हम तो खोये-गये-से रहे।
कभू आपमें तुमने पाया हमें?
जौक़े-ख़बरमें हम तो बेहोश हो गये थे।
क्या जाने कब वोह आया, हमको नहीं ख़बर कुछ॥
कुछ होश न था मिम्बरो-महराबका हमको।
सद शुक्र कि मसजिदमें हुए मस्तोंमें वारिद॥

**जलील—** दैरो-काबेकी ज़ियारत[1] तो फ़क़त हीला[2] है।
जुस्तजू[3] तेरी लिये फिरती है घर-घर मुझको ॥

**यगाना—** मंज़िलकी फ़िक्र क्यों हो, जब तू हो और मैं हूँ।
पीछे न फिरके देखूँ, काबा भी हो तो क्या है ॥

**माहिर—** हम भी ज़रूर काबेको चलते पर अब तो शेख़!
क़िस्मतसे बुतकदेमें ही दीदार हो गया ॥

**असग़र—** हम एक बार जलवये-जानाँना[4] देखते।
फिर काबा देखते न, सनमख़ाना देखते ॥*

'असग़र' तो अपने हबीबकी तलाशमें इतने लीन हैं कि उसे खोजनकी धुनमें वे मन्दिरों-मसजिदोंकी ओर भी नहीं देखते। उन्हें अपने लक्ष्यकी प्राप्तिमें बाधा समझते हैं—

दैरो-हरम[5] भी कूचये-जानाँमें[6] आये थे।
पर शुक्र है कि बढ़ गये दामन बचाके हम ॥

जिन्हें कूचये-महबूब नसीब हो गया है, उनकी क़िस्मतका क्या कहना? कूचये-जानाँके सामने फ़िरदौस (जन्नत, स्वर्ग)की भी क्या हक़ीक़त?

---

[1]यात्रा, दर्शन करना; [2]बहाना; [3]तलाश, खोज; [4]प्रेयसीका रूप; [5]मन्दिर,मसजिद; [6]प्रेयसीके स्थानतक पहुँचनेके मार्गमें।

***मीर—** हज़ार मर्त्तबा बेहतर है बादशाहीसे।
अगर नसीब तेरे कूचेकी गदाई हो ॥
रहनेकी अपनी जा तो, न दैर है न काबा।
उठिये जो उसके दरसे तो हूजिये किधरके?
देखा करूँ तुझीको, मंज़ूर है तो यह है।
आँखें न खोलूँ तुझ बिन मक़दूर है तो यह है ॥

हसरत मोहानी—वल्लाह तुझे छोड़के ऐ कूचये-जानाँ !
'हसरत'से तो फ़िरदौसमें जाया नहीं जाता ॥*

बेनज़ीरशाह— वोह तेरी गलीकी क़यामतें कि लहदसे[1] मुर्दे निकल गये।
वोह मेरी जबोने-नियाज़[2] थी कि वहीं धरी-की-धरी रही ॥

महबूबका मर्त्तबा खुदासे कम नहीं, बक़ौल किसीके—

दावरके[3] सामने बुते-काफ़िरको क्या कहूँ ?
दोनोंकी शक्ल एक है, किसको खुदा कहूँ ॥

और 'बहज़ाद' लखनवी तो महबूबको ही खुदा समझते हैं—

---

[1]क़ब्रसे; [2]नतमस्तक; [3]खुदाके।

*मीर— फ़िरदौसको[1] भी आँख उठा देखते नहीं।
किस दरजा सैरे-चश्म[2] हैं कूए-बुताँसे हम ?
जन्नतकी मिन्नत उनके दमाग़ोंसे कब उठें ?
ख़ाके-रह[3] उसको, जिसके कफ़नका अबीर हो ॥
फ़रो[4] न आये सर उसका तवाफ़े-काबासे[5]।
नसीब जिसको तेरे दरकी जिबहसाई[6] हो ॥
किसको कहते हैं, नहीं मैं जानता इसलामो-कुफ़्र।
दैर हो या काबा, मतलब मुझको तेरे दरसे है ॥

बैठने दे है कौन फिर उसको ?
जो तेरे आस्ताँसे उठता है ॥
यूँ उठे उस गलीसे हम—
जैसे कोई जहाँसे उठता है ॥

---

[1]जन्नतको; [2]तृप्त; [3]मार्ग-रज; [4]नीचे; [5]काबेकी प्रदक्षिणासे; [6]मस्तक रगड़ना।

आ मेरी कायनाते-दिल![1] मेरी बहारे-ज़िन्दगी !
आ कि मैं यह न कह सकूं "मुझको ख़ुदा न मिल सका" ॥

अपने प्यारेके ध्यानमें दिन-रात लीन रहना ही प्रेम-धर्म है—

हसरत मोहानी—शब[2] वही शब है, दिन वही दिन है ।
जो तेरी यादमें गुज़र जाये ॥

आसी— जिनमें चर्चा न कुछ तुम्हारा हो ।
ऐसे अहबाब[3] ऐसी सुहबत क्या ?*

अपने प्यारेके चिन्तन और स्मरणके अतिरिक्त प्रेमीको अन्य कुछ भी नहीं सुहाता—

हसरत— हम क्या करें अगर न तेरी आरज़ू करें !
दुनियामें और कोई भी तेरे सिवा है क्या ?

---

[1]दिलकी दुनिया; [2]रात; [3]इष्ट-मित्र ।

*मीर— गई तसबीह[1] उसकी नज़अमें[2] कब 'मीर'के दिलसे ?
उसीके नामकी सुमरन थी, जब मनका ढलकता था ॥
हर सुबह उठके तुझसे माँगूं हूँ मैं तुझीको ।
तेरे सिवाय मेरा कुछ मुद्दआ नहीं है ॥
रहते हो तुम आँखोंमें, फिरते हो तुम्हीं दिलमें ।
मुद्दतसे अगर्चे याँ, आते हो न जाते हो ॥
हमनशीं[3] ! क्या कहूँ, उस रश्के-महे-ताबाँ[4] बिन ।
सुबहे-ईद अपनी है, बदतर शबे-मातमसे भी ॥

---

[1]माला, सुमरन; [2]प्राणान्त समयमें; [3]पड़ौसी; [4]जिसके सौन्दर्य्य-पर चन्द्रमाको भी ईर्ष्या हो ।

जलील— मुझे तमाम ज़मानेकी आरज़ू क्यों हो ?
बहुत है मेरे लिए एक आरज़ू तेरी ॥

फ़ानी— एक आलमको देखता हूँ मैं।
यह तेरा ध्यान है मुजस्सिम[1] क्या ॥

जिगर मुरादाबादी—
यूँ ज़िन्दगी गुज़ार रहा हूँ तेरे बग़ैर।
जैसे कोई गुनाह किये जा रहा हूँ मैं ॥

जिगर बरेलवी— तुम नहीं पास कोई पास नहीं।
अब मुझे ज़िन्दगीकी आस नहीं ॥

दिल— नज़रका इक इशारा चाहिए अहले-मुहब्बतको।
जबीने-शौक़ झुक जाये जिधर कहिये, जहाँ कहिये ॥

**महबूबका जमाल**

प्रेयसीके रूप, हाव-भाव (जमाल)का वर्णन करना बहुत ही नाज़ुक एवं कोमल कला है। तनिक-सी असावधानीसे अश्लीलताके धब्बे उभर आते हैं। ऐसा कौन विवेक-हीन कलाकार होगा, जो अपनी प्रियतमाके गुप्तांगोंका चित्रण करे। लेकिन ग़ज़लगो शायर ऐसा करते रहे हैं। पिछले वक़्तोंके बाज़-बाज़ शायरोंने तो अपनी कामुक मनोवृत्तिका बहुत ही कुरुचिपूर्ण परिचय दिया है। कई स्थलोंपर तो ऐसा मालूम होता है कि उन्होंने अपनी प्रियतमाको नग्न करके चौराहेपर खड़ा कर दिया है—

निज़ाम रामपुरी— वोह जानुओंमें सीना छुपाना सिमटके, हाय !
और फिर सम्भालना वोह दुपट्टा, छुड़ाके हाथ ॥

---

[1]पूर्णरूपेण ।

ग़—— हर अदा मस्ताना सरसे पाँवतक छाई हुई।
उफ़ तेरी काफ़िर जवानी, जोशपर आई हुई॥

अब ज़माना बदल गया है। वर्त्तमान युगमें प्रियतमाको जो उच्चासन प्राप्त है, उसीके अनुरूप उसके सौन्दर्यका उल्लेख हुआ है।

रियाज़—— लें वोह दामनमें क्या गुलाबके फूल।
बारे-दामन[1] जिन्हें गुलाबका रंग॥
रंगका उसके पूछना क्या है।
जिसका साया भी दे गुलाबका रंग॥

नाज़ुक कलाइयोंमें हिनाबस्ता मुट्ठियाँ[2]।
शाख़ोंपै जैसे मुंह बँधी कलियाँ गुलाबकी॥

असर—— अब मैं समझा मुराद जश्नतसे।
आप जिस राहसे गुज़र जायें॥
फूल डूबा हुआ गुलाबमें था।
उफ़! वोह चेहरा हिजाबआलूदा[3]॥
दमे-ख़्वाब[4] है दस्ते-नाज़ुक[5] जबींपर[6]।
किरन चाँदकी गोदमें सो रही है॥

जिगर मुरादाबादी—ज़ूं जहाँ नाज़से क़दम रख दे।
वोह ज़मीन आसमान है प्यारे॥

जलील—— निगाह बर्क़[7] नहीं, चेहरा आफ़ताब[8] नहीं।
वोह आदमी है मगर, देखनेकी ताब नहीं॥

---

[1]दामनका बोझ; [2]मेंहदी लगी हुई मुट्ठियाँ; [3]शर्मसे भीगा हुआ; [4]सोते हुए; [5]कोमल हाथ; [6]मस्तकपर; [7]बिजली; [8]सूर्य्य।

दिल— सरे-तूर एक बर्क़े-हुस्न लहराती नज़र आई।
ज़रा शोख़ीसे झटका था, किसीने अपने दामांको॥
ऐ हुस्न ! जो सज़ाये-तमन्ना हो, वह क़बूल।
लेकिन तेरी नज़रको फिर एक बार देखकर॥

ईमानकी बात तो यह है कि उसके रूपका वर्णन हो ही नहीं सकता। बक़ौल 'असग़र' गोण्डवी—

अगर ख़मोश रहूँ मैं तो तू ही सब कुछ है।
जो कुछ कहा तो तेरा हुस्न हो गया महदूद[1]॥

अब चन्द जमालयाती शेर ख़ुदा-ए-सुख़न 'मीर'के तबर्रुकन (प्रसाद-स्वरूप) सुनिये—

नज़र उठती नहीं कि जब ख़ूबाँ[2]।
सोतेसे उठके आँख मलते हैं॥

यूँ अर्क़[3] जलवागर[4] है उस रुख़पर[5]।
जिस तरह ओस फूलपर देखो॥

नाज़ुकी उसके लबकी क्या कहिए।
पंखड़ी इक गुलाबकी-सी है॥

'मीर' उन नीमबाज़[6] आँखोंमें।
सारी मस्ती शराबकी-सी है॥

पहुँचे हैं कोई उस तने-नाज़ुकके लुत्फ़को।
गो गुल चमनमें जामेसे अपने निकल पड़ा॥

---

[1]सीमित; [2]हसीन; [3]पसीना; [4]उजागर; [5]कपोलपर; [6]अधखुली।

शब[1] नहाता था जो वोह रश्के-क़मर[2] पानीमें।
गुथी महताबसे[3] उठती थी लहर पानीमें॥
साथ उस हुस्नके देता था दिखाई वोह बदन।
जैसे झमके है पड़ा गोहरे-तर[4] पानीमें॥

यह चाँदके-से टुकड़े छुपते नहीं छुपाये।
हरचन्द अपने मुँहको बुर्क़ेमें तुम छुपाओ॥

यूसुफ़से कोई क्योंकर उस माहको[5] मिला दे?
है फ़र्क़ रात-दिनका अज़दीदा-ता-शुनीदा[6]॥

आँखोंमें ही रहे हो, दिलसे नहीं गये हो।
हैरान हूँ यह शोख़ी आई तुम्हें कहाँसे?

शम्सो-क़मरके[7] देखे, जी उसमें जा रहे है।
उस दिल-फ़रोज़के भी रुख़सार ऐसे ही थे॥

गुल भी है महबूब लेकिन कब है उस महबूब-सा।
आगे उस क़दके है सरो-बाग़ बेउसूल बसा॥

रश्के-ख़ूबीका[8] उसीके, जिगरे-महमें[9] है दाग़।
वोह जो एक ख़ाल[10] पड़ा है तेरे रुख़सारके[11] बीच॥

देख उसे हो, मलिकसे[12] भी लग़ज़िश।
हम तो दिलको सम्भाल लेते हैं॥

---

[1]रातको; [2]सौन्दर्य्यमें जिससे चन्द्रमा भी ईर्ष्या करे; [3]चन्द्रमासे; [4]मोती; [5]चन्द्रमुखीको; [6]देखने और सुननेमें; [7]सूर्य्य-चन्द्रमाके; [8]सौन्दर्य्यकी ईर्ष्याके कारण; [9]चन्द्रमामें कालिमाका; [10]तिल; [11]कपोलके; [12]देवतासे।

लुत्फ़ कहाँ, वोह बात कहे पर फूलसे झड़ने लग जावें।
सुर्ख़ कली भी गुलकी अगर्चे यारके लाले-लब-सी है॥

जी ही मला जाता है अपना 'मीर' समाँ यह देखेसे।
आँखें मलते उठते हैं, बिस्तरसे दिलबर जब सोकर॥

देखी थी एक रोज़ तेरी मस्त अँखड़ियाँ।
अँगड़ाइयाँ ही लेते हैं अब तक ख़ुमारमें॥

खिलना कम-कम कलीने सीखा है।
उसकी आँखोंकी नीमख़्वाबीसे[1]॥

पिछले ज़मानेमें जब इश्क़ जी का रोग समझा जाता था, तब इश्क़का रोगी शबे-हिज्रमें रोता-बिसूरता था, आहो-नाले करता था और अपने रंजोग़मकी दास्तान बड़-बड़ाता रहता था। बक़ौल मीर—

**रोना-बिसूरना**

कभू 'मीर' उस तरफ़ आकर जो छाती कूट जाता है।
ख़ुदा शाहिद[2] है, अपना तो कलेजा टूट जाता है॥

रोते फिरते हैं सारी-सारी रात।
अब यही रोज़गार है अपना॥

वर्त्तमानमें इश्क़ इन्सानके लिए ज़रूरी चीज़ बन गया है। रोने-धोनेसे दामने-इश्क़में धब्बा लगता है—

जिगर मुरादाबादी—इश्क़की अज़मत[3] न हरगिज़ जीते जी कम कीजिये।
जान दे दीजे मगर आँखें न पुरनम[4] कीजिये॥

---

[1]अधखुली; [2]साक्षी। [3]प्रतिष्ठा, महानता; [4]अश्रुपूर्ण।

दिल— मुहब्बत बेअसर उसकी, मुहब्बत रायगाँ उसकी।
कि जिसने उम्रभर पूछे हैं आँसू अपने दामांसे॥

रंजो-ग़ममें रोने-धोनेके क्या मानी ? मर्द वह है जो इनका हँसते हुए स्वागत करता है। चन्द नमूने मुलाहिज़ा फ़रमायें—

साक़िब— जवाब ज़ख़्मे-जिगर दे रहा है हँस-हँसकर।
"वही तो दिल है कि जो ख़ुश रहे मुसीबतमें"॥

रियाज़— असर बढ़ जाय या रब ! इस क़दर सोज़े-मुहब्बतमें।
जहन्नुममें हर अंगारेको समझूँ फूल जन्नत का॥

असर— ग़म नहीं तो लज़्ज़ते-शादी नहीं।
बे असीरी[1] लुत्फ़े-आज़ादी नहीं॥

फ़ानी— ज़िन्दगी यादे-दोस्त है, यानी—
ज़िन्दगी है तो ग़ममें गुज़रेगी॥

मौजोंकी सयासतसे[2] मायूस[3] न हो 'फ़ानी'।
गिरदाबकी[4] हर तहमें साहिल[5] नज़र आता है॥

रस्मे-बेदाद-दोस्त[6] आम हुई।
तल्ख़िये-ज़ीस्त[7] भी हराम हुई॥

यगाना चंगेज़ी— ज़ीस्तके हैं यही मज़े वल्लाह।
चार दिन शाद[8] चार दिन नाशाद॥

---

[1]बन्धनके दुःख देखे बिना; [2]लहरोंके बढ़नेसे, वेगसे; [3]निराश; [4]भँवरकी; [5]तट, किनारा; [6]प्रियतमाके अत्याचार करनेकी प्रथा; [7]ज़िन्दगीकी कड़ुवाहट; [8]ख़ुश।

शाद— अपनी हस्तीको ग़मो-दर्द मुसीबत समझो।
मौतकी क़ैद लगा दी है ग़नीमत समझो॥

पुकारकर वहशियोंसे कह दो, "ख़िज़ाँका भी दौर है ग़नीमत।
क़बाके दामनको ढाँक तो लें अगर न मौक़ा मिले रफ़ूका"॥

आज़ाद अन्सारी— ग़ैर फ़ानी ख़ुशी अता कर दी।
ऐ ग़मे-दोस्त! तेरी उम्र दराज़॥

फ़ानी— तूने करम किया तो ब-उनवाने-रंजे-दोस्त!
ग़म भी मुझे दिया तो ग़मे-जाविदाँ न था॥
ग़म भी गुज़श्तनी है, ख़ुशी भी गुज़श्तनी।
कर ग़मको अख़्तियार कि गुज़रे तो ग़म न हो॥
मेरी हविसको ऐशे-दो आलम भी था क़बूल।
तेरा करम कि तूने दिया दिल दुःखा हुआ॥

आरज़ू— एक दिलमें ग़म ज़माने भरका क्योंकर भर दिया?
ख़ू-ए-हमदर्दीने[1] कूज़ेमें समन्दर[2] भर दिया॥

दिल— ऐ दिले-नाकाम रफ़-ए-ग़मकी सूरत है यही।
वाक़ियाते-ज़िन्दगीको भूल जाना चाहिए॥

अर्शी— जब कभी दर्दे-मुहब्बतमें कमी पाई है।
अपनी हालतपै मुझे आप हँसी आई है॥

मुहम्मद 'असर'—हज़ार ऐशकी सुबहें निसार हैं जिसपर।
मेरी हयातमें[3] ऐसी भी इक शबे-ग़म[4] है॥

---

[1]विश्व-समवेदनाकी आदतने; [2]गागरमें सागर; [3]जीवनमें; [4]दुःखकी रात।

ख़िज़ाँ प्रेमी—ग़म एक इम्तहान था इन्सानके लिए।
जो लोग अहले-ज़ौक़ थे, वोह मुसकरा दिये ॥

दर्द सईदी—

यह क्यों फ़िज़ापर[1] है यासतारी,[2] यह हर तरफ़ क्यों उदासियाँ हैं ?
अभी तो अपनी तबाहियोंपर मैं आप भी मुसकरा रहा हूँ ॥

नाज़िश परतापगढ़ी—

वोह तो ख़ैरियत गुज़री जो ग़मने गोद फैला दी।
वरना हज़रते-'नाज़िश' कौन आपका होता ?
यह लुटा-लुटा-सा आलम, यह उड़ी-उड़ी-सी रंगत।
कहीं छिन न जाय मुझसे मेरे ग़मकी ताज़गी भी ॥
मेरे दर्दमें निहाँ[3] है, वोह निशाते-जाँविदानी[4]।
कि निचोड़ दूँ जो आहें तो टपक पड़े तबस्सुम ॥

राज रामपुरी—

इन आँसुओंकी हक़ीक़तको कौन समझेगा।
कि जिनमें मौत नहीं, ज़िन्दगीका मातम है ॥

हुरमतुल इकराम—

मुझसे हर बार मसर्रतने छुड़ाया दामन।
मुझको सौ बार दिया ग़मने सहारा ऐ दोस्त !

अज्ञात—

किसको होती है अता इस शानकी बरबादियाँ।
आशियाँ हम क्या बचाते, बिजलियाँ देखा किये ॥

---

[1]वायुमण्डलमें; [2]निराशा छाई है; [3]छुपी हुई; [4]स्थाई सुख।

पिछले ज़मानेके अक्सर शायरोंने जहाँ माशूक़को क़ातिल एवं बेवफ़ा[1] चित्रण किया है; वहाँ आशिक़को भी बहुत ज़्यादा ज़लीलो-ख़्वार किया है।[2] यहाँतक कि आशिक़ो-माशूक़ शब्द इतने घृणित और उपहास्पद हो गये हैं कि यह भनक पड़ते ही कि अमुक युवक-युवतीका परस्पर इश्क़ है तो भद्रसमाजमें उनपर उँगलियाँ उठने लगती हैं, चेमेगोइयाँ होने लगती हैं; और उन्हें आवारा, उच्छृङ्खल एवं चरित्रहीन समझ लिया जाता है। यहाँतक कि कुटुम्बी जन उनके अस्तित्वको अभिशाप समझने लगते हैं।

**आशिक़ -ओ-माशूक़की तसवीर**

अब जब कि हुस्नो-इश्क़का मर्तबा बहुत बुलन्द तसव्वुर किया जाने लगा है तो आशिक़ो-माशूककी तसवीरें भी उसी मेयारपर बनाई जा रही हैं। पिछले ज़मानेके माशूक़ विरह-व्यथासे पीड़ित अपने आशिक़की

---

१— दाग़— अपने बिस्मिलका सर है ज़ानूपर।
किस मुहब्बतसे जान लेते हैं॥

मोमिन—दरबाँको आने देनेमें मेरे न कीजे क़त्ल।
वरना कहेंगे सब कि यह कूचा हरम न था॥

२— ग़ालिब—दे वोह जिस क़दर ज़िल्लत हम हँसीमें टालेंगे।
बारे-आश्ना निकला उनका पासबाँ अपना॥

वाँ जो पहुँचा भी तो उनकी गालियोंका क्या जवाब।
याद थीं जितनी दुआएँ सर्फ़े-दरबाँ हो गईं॥

दाग़— देखते ही मुझे महफ़िलमें उन्हें ताब कहाँ?
ख़ुद खड़े हो गये कहते हुए "बाहर-बाहर"॥

अज्ञात— कल जो उठते थे बिठानेके लिए।
आज बैठे हैं उठानेके लिए॥

परिचर्य्या करना तो दरकिनार उनकी मिज़ाज पुर्सीको आना भी शायाने-शान नहीं समझते थे।

**तसलीम—** गर उन्हें है ख़ौफ़ अर्ज़े-आरज़ू।
दूरसे आकर तमाशा देख लें॥

लेकिन इश्क़ अगर सादिक़ है तो नामुमकिन है कि माशूक़को उस चाहतका पता न लगे और आशिक़के रंजो-ग़ममें उसकी आँखें न डबडबा आयें—

**साक़िब—** नज़अ़ इक ईद है, वोह रोते हुए आये हैं।
ऐ दिले-ज़ार! यही वक़्त है मर जानेका॥

**अर्शी—** अब देखिये पहुँचती हैं बरबादियाँ कहाँ?
उनकी हसीन आँखोंमें अश्क आ गये हैं आज॥

**अज्ञात—** तेरी आँखोंसे यह आँसूका ढलकना तौबा!
मैंने गिरती हुई कोनैनकी क़िस्मत देखी॥

वर्त्तमान युगोंने शायर जहाँ सुशीला, सहृदया और नेक प्रेयसीका चित्रण कर रहे हैं; वहाँ प्रेमीके बेलौस प्रेम और स्वाभिमानी व्यक्तित्वका भी नक़्श उभार रहे हैं। यह माना कि प्रियतमा ही काबा-ओ-काशी है। उसकी यादमें लीन रहना ही नमाज़ो-उपासना है। मगर प्रेमी भी तो आख़िर मनुष्य है। वह प्रियतमाकी चाहतमें मर मिटेगा, जीवनभर सुलगता रहेगा; किन्तु जानबूझकर की गई उपेक्षा या तौहीनको वह नहीं सह सकेगा। वह मनुष्य है और मनुष्यताका अपमान सहन करना मनुष्यता नहीं पशुता है। इस हीन स्थितिमें वह किसी भी क़ीमतमें रहनेको प्रस्तुत नहीं।

आनन्दनारायण मुल्ला—

तूने फेरी लाख नरमीसे नज़र।
दिलके आईनेमें बाल आ ही गया॥*
किसीके पाँवका रौंदा हुआ नहीं 'मुल्ला'।
वोह है तो गर्द, मगर राहे-कारवाँमें नहीं॥

शाद अज़ीमाबादी—

दिले-मुज़तरिब! तुझे क्या कहूँ, अबस उनके पाँवपे सर रखा।
जो ख़फ़ा भी हो गये थे तो क्या, कि वोह आदमी थे, ख़ुदा न थे॥†

जिगर— हमसे नज़र फेर ली उस शोख़ने।
हम भी हैं इन्सान ख़फ़ा हो गये॥*

फ़ानी— रस्मे-ख़ुद्दारीसे गो वाक़िफ़ न थी दुनियाए-इश्क़।
फिर भी अपना ज़ख़्मे-दिल शरमिन्द-ए-मरहम न था॥

आरज़ू— उनकी बेजा भी सुनूँ आप बजा भी न कहूँ।
आख़िर इन्सान हूँ मैं भी, कोई दीवार नहीं॥

---

*मीर— याँ अपने जिस्मे-ज़ारपे तलवार-सी लगी।
उसने जो बेदमाग़ीसे अबरूको ख़म किया॥

†मीर— ख़ाक ऐसी आशिक़ीपर ठुकराये भी गये कल।
पावों कने-से उसके पर 'मीरजी' न सरके॥

*मीर— बाहम सलूक था तो उठाते थे नर्म-गर्म।
काहेको 'मीर' कोई दबे जब बिगड़ गई॥
खाना ख़राब 'मीर' भी कितना ग़यूर था?
मरते मुआ पर उसके कभू घर न जा फिरा॥

यगाना— बन्दगीका सबूत दूँ क्योंकर ?
इससे बेहतर है कीजिये इनकार ॥

जब स्वाभिमानका यह आलम है कि बन्दगीका सबूत चाहे जानेपर बन्दगीसे भी इनकार कर दिया जाता है। तब उसका स्वाभिमानी व्यक्तित्व किसीका भी अहसान कैसे उठाये और क्यों किसीसे याचना करे ?

साक़िब— पेशे-अरबाबे-करम हाथ वोह क्या फैलाता ?
जिसको तिनकेका भी अहसान गवारा न हुआ ॥*

नियाज़— हमें ख़ुदाके सिवा कुछ नज़र नहीं आता।
निकल गये हैं बहुत दूर जुस्तजूसे हम ॥

असर— रहमपर ग़ैरके जीना कैसा ?
ज़िन्दगीका यह क़रीना कैसा ?

आरज़ू— दरे-दिल[1] 'आरज़ू'! दरवाज़-ए-काबेसे बेहतर था।
यह ओ ग़फ़लतके मारे ! तूने पेशानी कहाँ रख दी ?
धूप सह लेना है अच्छा, बारे-अहसाँ[2] कौन उठाय।
छाँव इक गिरती हुई दीवार है मेरे लिए ॥
माँग जो खोके आन-बान न माँग।
क़त्ल हो जा मगर अमान[3] न माँग ॥
आलूदगी-ए-गर्दे-तमा से[4] ख़ुदा बचाय।
जाते हैं झाड़ते हुए दामन चमनसे हम ॥

---

*मीर— आगे किसीके क्या करें दस्ते-तमअ़ दराज़।
यह हाथ सो गया है सिराहने धरे-धरे ॥

[1]हृदय-द्वार; [2]अहसानका बोझ; [3]जीवन-रक्षा; [4]अभिलाषा-रूपी धूलकी लिप्सासे।

यगाना— आँख नीची हुई अरे यह क्या ?
क्यों ग़रज़ दरमियानमें आई ?
बन्दा वोह् जो दम न मारे।
प्यासा खड़ा हो दरिया किनारे ॥

अदीब मालीगाँवी—

अपना अदाशनास बन, अपना जमाल भी तो देख।
तुझमें कमी है कौन-सी, तुझमें कमी कोई नहीं ॥

कौसर क़ुरैसी—मुझे आता है 'कौसर' हश्रगाहोंमें गुज़र जाना।
मैं इन्साँ हूँ, मेरी तौहीन है, घुट-घुटके मर जाना ॥

अपने प्यारेका विरह नारकीय यन्त्रणासे भी अधिक दुःखद होता है। हर प्रेमीकी अभिलाषा रहती है कि वह अपने प्यारेके पास निरन्तर बैठा रहे, एक क्षणको भी पृथक न रहे; परन्तु विधिका विधान ही कुछ ऐसा है कि वियोग ही जीवनभर सहना पड़ता है, मिलन यदि होता भी है तो क्षणिक होता है। पिछले शायरोंमें बहुतोंने विरहपर बहुत अतिशयोक्तिपूर्ण कहा है। जिसे सुनकर सहानुभूति उदित होनेके बजाय खीज-सी होती है। कोई विरह-व्यथा सहते-सहते इतने दुर्बल हो गये है कि वक़ौल किसीके—

हिज्रे-यार

बिस्तरपै ढूँढ़ती फिरी शबभर क़ज़ा मुझे

कोई विरह-ज्वालामें इतने तप रहे है कि वक़ौल 'अमीर' मीनाई—

फूल गर मुरझाये तो मुझसे न करना कुछ गिला।
ले सबा चलनेको मैं, चलता हूँ गुलशनकी तरफ़ ॥

कोई विरह-व्यथामें ऐसे खोये गये हैं कि जड़-मूर्ति समझकर परिन्दोंने उनके सरपर घोंसले बना लिये है। बक़ौल आरिफ़—

जानकर मजनूँ मुझे एक लैलि-ए-गुलफ़ामका।
आके बुलबुलने बनाया आशियाँ बालाए-सर॥

अब आधुनिक युगके चन्द स्वाभाविक शेर विरहपर दिये जा रहे हैं—

अर्शी— बेताबिये-दिलके उन नाज़ुक लमहोंका तसव्वुर तो कीजे।
जब अहदे-मुहब्बत होते ही फ़ुरक़तका ज़माना आ जाये॥

असर— फिर न आये जो वादा करके गये।
आजका दिन है और वोह दिन है॥
याद कर ले भूलनेवाले मेरे।
अब तो बिछुड़े एक मुद्दत हो गई॥

जलील— तुम जो याद आये तो सारी कायनात[1]।
एक भूली-सी कहानी हो गई॥
क़ासिद! पयामे-शौक़को देना न बहुत तूल।
कहना फ़क़त यह उनसे कि "आँखें तरस गईं"॥

'शाद' अज़ीमाबादी—

शबे-हिजराँकी सख़्ती हो तो हो, लेकिन यह क्या कम है।
कि लबपै रातभर रह-रहके तेरा नाम आयेगा॥

हसरत— कहीं वोह आके मिटा दें न इन्तज़ारका लुत्फ़।
कहीं क़ुबूल न हो जाय इल्तजा[2] मेरी॥

नसरीं— वाह क्या कैफ़े-तसव्वुर[3] है कि अक्सर हिज्रमें।
यूँ हुआ महसूस गोया वोह अचानक आ गये॥

---

[1]दुनिया; [2]इच्छा, प्रार्थना; [3]ध्यानावस्था।

अज्ञात— रुख़सतके वाक़ियातका इतना तो होश है।
देखा किये हम उनको जहाँ तक नज़र गई॥
दरतक तो आ चुके थे, मगर आके फिर गये।
ऐ जब्ते-दिल ! असरमें कहाँपर कमी रही॥

अदीब मालीगाँवी—
उस जाने-बहाराँने[1] जबसे मुँह फेर लिया है गुलशनसे।
शाखोंने लचकना छोड़ दिया, ग़ुंचे भी चटखना भूल गये॥

एक ख़ातून— बे तुम्हारे मैं जी गई अबतक।
तुमको क्या ख़ुद मुझे यक़ीन नहीं॥*

अर्शी— तेरी नीची नज़रकी यादका आलम अरे तौबा !
चुभोकर दिलमें जैसे तोड़ डाले कोई पैकाँको[2]॥
आग़ाज़े-आशिक़ीका[3] अल्लाहरे ज़माना।
हर बात बहकी-बहकी हरगाम वालहाना॥

पुरानी ग़ज़लोंमें निराशा एवं असफलता (यास-ओ-हिरमान)की बहुत अधिक भरमार है। वे शायर भी जो जीवन पर्यन्त ऐश करते रहे; ता-उम्र निराशाके गीत गाते रहे है। अक्सर पुराने शायरोंने जीवनके बजाय मृत्यु चाही।† प्रायः सभीने पुरुषार्थके बदले अकर्मण्यताको अहमियत

यास-ओ-हिरमान

---

[1]बहाररूपी प्रियतमाने; [2]तीरको; [3]प्रेमासक्तिका प्रारम्भ।

*मीर— इश्क़में वस्लो-जुदाईसे नहीं कुछ गुफ़्तगू।
क़र्बो-बाद[1] उस जा बराबर है, मुहब्बत चाहिए॥

†—ग़ालिब— मरते हैं आरज़ूमें मरनेकी।
मौत आती है, पर नहीं आती॥

---

[1]नज़दीकी-दूरी।

दी।† लेकिन अब करो या मरोका युग है। अकर्मण्योंको सावधान करते हुए 'यगाना' चंगेज़ी फ़रमाते हैं—

**ख़ुदा ऐसे बन्दोंसे क्यों फिर न जाये।**
**जो बैठा हुआ माँगना जानता है॥**

जो हाथ-पाँव नही हिलाता, उसके मुँहमें ग्रास देने ईश्वर भी नहीं आता। जो पुरुषार्थ करते हैं, उन्हें सहायक मिल ही जाते हैं। इसी भावको 'यगाना' चंगेज़ी यूँ व्यक्त करते हैं—

**जो रो सकते तो आँसू पूछनेवाले भी मिल जाते।**
**शरीके-रंजो-ग़म, दामनसे पहिले आस्तीं होती॥**

जो व्यक्ति असफलताओंसे निराश हो बैठते हैं, उनके लिए यह अशआर देखिये कितने प्रेरणादायक हैं—

**शाद अज़ीमाबादी—**

**यह मुमकिन है कि लिक्खी हो क़लमने फ़तह आख़िरमें।**
**जो हैं अहबाबे-हिम्मत ग़म नहीं करते शिकस्तोंमें॥**

**वत्तात्रिय कैफ़ी—हाँ-हाँ मगर ऐ दोस्त! तू तद्बीर किये जा।**
**यह भी तेरी तक़दीरके दफ़्तरमें लिखा है॥**

जो स्वयं नहीं उठता, उसे कोई भी सहारा नही देता। इसी भावको 'शाद' अज़ीमाबादी देखिये किस ख़ूबीसे रिन्दाना अन्दाज़में पेश करते है—

**समझता है इस दौरमें कौन किसको?**
**करें रिन्द ख़ुद अहतराम[1] अपना-अपना॥**

---

† **आतिश—क़िस्मतमें जो लिखा है, वोह आयेगा आपसे।**
**फैलाइये न हाथ न दामन पसारिये॥**

[1]आदर-सत्कार।

जो क़ौमें स्वयं अपनी प्रतिष्ठायें बढ़ानेका प्रयत्न नहीं करतीं, उनकी आजतक किसी दूसरी क़ौमने इज्ज़त नहीं की। 'शाद' अज़ीमाबादीने कितना तथ्यपूर्ण भेद बतलाया है—

**यह बज़्मे-मै[1] है याँ कोताहदस्तीमें है महरूमी[2]।**
**जो बढ़कर ख़ुद उठा ले हाथमें मीना उसीका है॥**

समय रहते जो कर लिया सो ही थोड़ा—

**क्या ग़लत ज़ोम है, बाद अपने किसे ग़म अपना।**
**हाथ क़ाबूमें है कर ले अभी मातम अपना॥**

यह हमारी कम हिम्मती अथवा अकर्मण्यता है जो हम इस शोचनीय स्थितिमे है। अन्यथा वक़ील 'शाद' अज़ीमाबादी—

**हिम्मते-कोताहसे[3] दिल, तंगे-ज़िन्दाँ[4] बन गया।**
**वरना था घरसे सिवा, इस घरका हर गोशा[5] वसीअ[6]॥**

**सफ़ी लखनवी**—इन्सान मुसीबतमें हिम्मत न अगर हारे।
आसाँसे वोह आसाँ है, मुश्किलसे जो मुश्किल है॥
दुनियाकी तरक़्क़ी है इस राज़से[7] वाबिस्ता[8]।
इन्सानके क़ब्ज़ेमें सब कुछ है अगर दिल है॥

**असर लखनवी**—कौन कहता है कि मौत अंजाम[9] होना चाहिए।
ज़िन्दगीका ज़िन्दगी पैग़ाम होना चाहिए॥

**नज़ीर बनारसी**—खा-खाके शिकस्त फ़तह पाना सीखो।
गिरदाबमें[10] क़हक़हा लगाना सीखो॥

---

[1]मधुशाला; [2]पीछे हाथ रखनेसे वंचित रह जाओगे; [3]कम-हिम्मतीकी वजहसे दिल; [4]संकीर्ण बन्दीगृह; [5]कोना; [6]विस्तृत; [7]भेदसे; [8]सम्बन्धित; [9]परिणाम; [10]भँवरमे।

**शाद अज़ीमाबादी—नज़र आये न आये कोई आँसू पूछनेवाला।**
**मेरे रोनेकी दाद ऐ बेकसी! दीवारो-दर देंगे॥**

**आनन्दनारायण मुल्ला—कबतक किसीसे माँगकर हम अख़्तियार लें?**
**अब जीमें है कि शेरसे लड़कर कछार लें॥**

**रक़ाबत**

पुरानी शायरीमें रक़ीबों[1] (उदूओं)की बहुत भरमार रही है। अक्सर यही माशूक़की नज़रे-इनायतके हक़दार होते थे। माशूक़ इन्हें महफ़िलोंमें अपने नज़दीक बिठाते थे। सबके सामने प्यार-ओ-मुहब्बतका इज़हार करते थे और अपने हक़ीक़ी चाहनेवाले आशिक़की तरफ़ रुख़ भी नहीं करते थे। उन्हें महफ़िलमें बुलाना तो दरकिनार अपने कूचेमें भी नहीं फटकने देते थे। और मसलहतन कभी महफ़िलमें बैठने भी दिया तो उनके सामने ही रक़ीबसे इज़हारे-उल्फ़त करते थे और बेचारे आशिक़ उनकी इन हरकतोंको देख-देखकर कुढ़ते थे। इसी कुढ़न, ग़ैरत, जलन, ईर्ष्या, स्पर्द्धा आदिको 'रक़ाबत' कहते हैं।

वर्त्तमान युगमें रक़ाबतकी वह लानत ख़त्म होती जा रही है। क्योंकि जब माशूक़ा पाकदामाँ और बावफ़ा होती जा रही है तब रक़ीबों-उदूका ख़यालो-ख़्वाब भी नहीं आ सकता।

पृष्ठ ४६ में यह उल्लेख हुआ है कि उर्दू-शायरीमें बाज़ारी माशूक़का तसव्वुर फ़ारसी-शायरीके अन्ध-अनुकरणकी वजहसे भी आया। यदि उर्दू-शायरोंने फ़ारसीके बजाय अरबीका अनुसरण किया होता तो बुलहविस आशिक़ों एवं हरजाई माशूक़ोंसे उर्दू-शायरीका दामन बेदाग़ रहा होता।

मिर्ज़ा ग़ालिब फ़ारसीका अनुसरण करते हुए फ़रमाते हैं—

---

[1]माशूक़का दूसरा चाहनेवाला, जिसे माशूक भी प्यार करे, उसे रक़ीब, उदू, ग़ैर, मुद्दई, दुश्मन आदि कहा जाता है।

**क़यामत है कि होवे मुद्दईका हमसफ़र, 'ग़ालिब' !**
**वोह काफ़िर जो ख़ुदाको भी न सौंपा जाय है मुझसे[1] ॥**

इस शेरमें साफ़-साफ़ हरजाई माशूक़का ज़िक्र हुआ है। 'मीर' अरबी-नस्ल था। अब देखिये उसके यहाँ यही मज़मून कितने पाकीज़ा सलीक़ेसे नज़्म हुआ है—

**इश्क़ उनको है, जो यारको अपने वमे-रफ़्तन।**
**करते नहीं ग़ैरतसे ख़ुदाके भी हवाले[2] ॥**

'मीर'की प्रेयसी पवित्र एवं सती है, किन्तु वह इतनी अनुपम, लावण्यवती और यकताँ है कि किसीपर भी विश्वास नहीं किया जा सकता। उसे देखकर संभव है ख़ुदाकी नीयत भी ऐन-ग़ैन हो जाय।

'मीर'का कमाल यह है कि वह अपनी प्रेयसीको शंकित दृष्टिसे नहीं देखते। मगर उनकी हिन्दुस्तानी ग़ैरत इजाज़त नहीं देती कि उनके सिवा कोई दूसरा उसे मुहब्बतकी नज़रसे देखे। चाहे वह ख़ुदा ही क्यों न हो। उन्हें अपनी माशूक़की पाक दामनीपर पूरा एतमाद है। मगर दूसरोंकी नीयतपर यक़ीन नहीं। वे उस पाश्चात्य सभ्यताके क़ायल नहीं, जो अपनी पत्नियोंको दूसरोंके साथ नाचते-हँसते-खेलते देखकर खुश होते हैं। अपनी प्रेयसीपर 'मीर' किसीकी भी कुदृष्टि नहीं पड़ने देना चाहते। उनके सिवा कोई और भी उनकी प्रेयसीको चाहतकी दृष्टिसे देखने लगे, यह बेग़ैरती वे बरदाश्त करनेको तैयार नहीं।

---

[1]ऐ ग़ालिब ! मेरे लिए तो आज प्रलयका दिन है। मेरे जैसा शंकित हृदय अपनी जिस प्रेयसीको ख़ुदाके हवाले करते हुए भी झिझकता, वही मेरे प्रतिद्वन्द्वीके साथ भ्रमणको निकली है।

[2]पवित्र और स्थाई प्रेम उन्हींका है जो स्वाभिमानवश अपनी प्रेयसीको ख़ुदाके संरक्षणमें भी रखनेको प्रस्तुत नहीं होते। रक़ीबका तो ज़िक्र ही क्या ?

**हम देखें तो देखें उसे, फिर परदा बेहतर है यानी—**
**और करें नज़्ज़ारा उसका, हमको यह मंज़ूर नहीं ॥**

यहाँतक कि 'मीर' अपनी प्रेयसीको पत्र भी नहीं लिखते। क्योंकि वे जानते हैं कि पत्र-वाहककी नीयत भी फिसल सकती है—

**ख़त लिखके उसको सादा न कोई मलूल हो।**
**हम तो हों बदगुमान जो क़ासिद रसूल हो ॥**

रक़ाबतपर 'मोमिन'का यह शेर मशहूर है—

**उस नक़्शे-पाके सजदेने क्या-क्या किया ज़लील।**
**मैं कूच-ए-रक़ीबमें भी सरके बल गया[1] ॥**

'मोमिन'के यह बहुत बहतरीन शेरोंमें-से एक है। इसी मज़मूनको 'ग़ालिब'ने यूँ ज़ाहिर किया है—

**जाना पड़ा रक़ीबके दरपर हज़ार बार।**
**ऐ काश जानता न तेरी रहगुज़रको मैं ॥**

'ग़ालिब' कूचये-रक़ीबमें अपने माशूकके नक़्शे-पाका सजदा करते हुए नहीं जाते हैं। वे तो महज़ बदगुमानी और रक़ाबतकी वजहसे कूचये-

---

[1]प्रेयसी प्रतिद्वन्द्वीके घर थी। अतः उसके चरणचिह्नोंको सजदा करते हुए मुझे प्रतिद्वन्द्वीके घरतक जाना पड़ा। प्रेयसीके चरण-चिह्नोंको सजदा देना प्रेम-धर्म है। इससे तो मुझे प्रसन्नता हुई, परन्तु मलाल तो इस बातका है कि मुझे सजदा करते हुए शत्रुके दर्वाज़ेतक जाना पड़ा। जो मेरी ग़ैरतको गवारा नहीं था। ज़िल्लतका सबब यह हुआ कि रक़ीबके कूचेमें सरके बल जानेसे लोग समझे कि रक़ीबसे रहमका ख़्वाहिशमन्द है और उसके कूचेमें नाक रगड़ता है।

रक़ीबमें जाते हैं। ताकि वहाँ माशूक़को रँगे-हाथ देखकर उसे ज़लीलो-ख्वार कर सकें।

मगर किसी भी भले और शरीफ़ आशिक़की ग़ैरत यह कब गवारा करेगी कि वह अपने माशूक़को किसी ग़ैरके पहलूमें खुद अपनी आँखोंसे देखे। वह मर जाना पसन्द करेगा, मगर ऐसे ज़लील मंज़रको देखना पसन्द नहीं करेगा, अब 'मीर'की खुद्दारी देखिये—

**इतना रक़ीबे-ख़ाना बर अन्दाज़से सलूक ?**
**जब आ निकलते हैं, यह सुनते हैं कि घर नहीं ॥**

बदगुमानी और रश्कका यह हाल है कि 'मीर' नहीं चाहते कि माशूक़ा कहीं जाय। वह किसी भी कामसे ख्वाह अपनी रिश्तेदारीमें ही जाती है। 'मीर'को रक़ीबके यहाँ जानेका शक होता है। क्योंकि आशिक़ शक्की मिज़ाज होता है। मगर खुद्दार एवं स्वाभिमानी इतने हैं कि उसकी टोह लेनेके लिए कहीं नहीं जाते।

'मीर'का एक शेर और दिया जा रहा है। मगर इस शेरसे लुत्फ़ अन्दोज़ वही हो सकेंगे, जिन्होंने ३०–३५ वर्ष पूर्वका ज़माना देखा है। जब कि शादीसे पूर्व पत्नीका मुख देख सकना असंभव था। कई-कई बच्चे हो जानेपर भी पत्नीके मायकेमें उसके दीदार नसीब नही होते थे। पत्नीकी एक झलक दिखा देनेके लिए सालियों-सलेहजोंकी खुशामदें की जा रही हैं। सरदर्दका बहाना करके पड़े हुए हैं। मगर क्या मजाल जो पत्नीकी झलक किसी दीवारो-दरके सूराखसे भी नज़र आ जाय। दिल उसे देखनेको तड़प रहा है, मगर अन्तरंग यही चाहता है कि मेरी पत्नी इतनी लज्जाशील और बाहया हो कि वह मुझे दिखाई न दे। अन्यथा उसके पीहरवाले उसे बेहया कहेंगे, और उसकी ग़ैरत और मर्दानगीको यह गवारा नहीं कि उसकी पत्नीपर कोई नुक्ताचीनी करे। अतः ऊपरसे मिलनेका प्रयत्न करते हुए भी वह नहीं चाहता कि उसकी पत्नी सामने आये।

इसी तरह पत्नी भी नहीं चाहती कि उसके पतिपर कोई उँगली उठाये। वह भी अपने पतिकी आँखोंमें लाजका पानी चाहती है। उसके पतिने अपने बड़ोंके सामने असावधानीवश बच्चा गोदमें ले लिया तो एकान्तमें व्यंग करते हुए चेतावनी दी कि तुमने यहाँ तो बच्चेको गोदमें ले लिया, कहीं मेरे पीहरमें ऐसी भूल न कर बैठना, वरना माँ-भावज मुझे चूँट-चूँट खायेंगी।"

अब 'मीर'का शेर मुलाहिज़ा फ़रमायें—

**दाग़ हूँ रश्के-मुहब्बतसे कि इतना बेताब।**
**किसकी तसकींके लिए घरसे तू बाहर निकला ?**

अपने प्यारेका आगमन सुनकर उसे देखनेकी आतुरतामें बदहवासीसे प्रियतमा बाहर निकल आई है। उसकी यह हरकत प्रेमीकी धारणाके विपरीत हुई। क्योंकि वह तो अपनी प्रियतमाको असूर्य स्पृश्या समझता था। हज़ार प्रयत्न करनेपर भी झलक दिखेगी या नहीं। यही शंकित हृदय लेकर वह आया था। मगर यहाँ आकर उसे कुछ दूसरा ही आलम नज़र आया। आशिक़ आख़िर आशिक़ है, शक्की उसका स्वभाव है। वह यह तो कल्पना भी नहीं कर सकता कि उसकी प्रेयसी इतनी निर्लज्ज है कि उसे देखनेको भी बाहर आ सकती है। शक्की स्वभावके कारण वह सशंकित हो उठता है और माशूकसे बेताबीमें पूछ बैठता है—

किसकी तसकींके लिए घरसे तू बाहर निकला[1]।

ग़ज़लपर एक आक्षेप यह भी किया जाता है कि उसमें सामयिक घटनाओंका उल्लेख नहीं मिलता। यह आक्षेप किसी हदतक ठीक है।

**सामयिक घटनाएँ**

क्योंकि ग़ज़लका निर्माण जिन तन्तुओंसे हुआ है, उनका मेल इस तरहकी शायरीसे नहीं

---

[1]ध्यान रहे उर्दू-शायरीकी प्रथाके अनुसार माशूकके लिए प्रयुक्त क्रिया आदि पुल्लिग लिखे जाते हैं।

बैठता। ग़ज़लका अस्तित्व चिरकाल तक होना चाहिए, इसलिए उसमें उन घटनाओंको नज़्म करनेसे परहेज़ किया जाता है, जो आँधीके समान बढ़ती-घटती हैं।

फ़ारसीके मशहूर शायर हाफ़िज़के जीवनकालमें उसका देश ५ बार विजित हुआ। कभी किसी विजेताने उसे वीरान कर दिया। कभी किसीने उसे चमन बना दिया। विजेता आँधी-तूफ़ानकी तरह आये और विलीन हो गये। हाफ़िज़ने यह सब इन्क़लाब अपनी आँखोंसे देखे। मगर एक भी घटनाका उल्लेख उन्होंने अपनी शायरीमें नहीं किया। फिर भी क्यों उनकी शायरी इतनी बुलन्द और प्रभावशाली है कि सदियाँ गुज़र जाने-पर भी पहिलेकी तरह तरो-ताज़ा बनी हुई है। बार-बार पढ़नेपर भी मन लालायित बना रहता है?

इसका कारण यही है कि उन्होंने जो इन्क़लाब अपने जीवनमें देखे, उन्हें देखकर वे बिलखे नहीं। चुपचाप सहते गये और स्वयं साकार व्यथा बन गये। परिणाम इसका यह हुआ कि जो भी बोल व्यथित हृदतंत्रीसे निकला अमर हो गया!

समुद्र मन्थनसे निकले हुए विषको देखकर बाबा भोलेनाथ चीख़ उठते तो उन्हें महादेव कौन कहता? महादेव तो वे तभी समझे गये, जब संसारका ज़हर वे स्वयं पीकर बैठ गये।

नज़्म-गो और ग़ज़लगो-शायरोंमें यही अन्तर है। नज़्म-गो शायर आपदाओंको देखकर उससे प्रभावित होता है, और जो देखता है, उसे बढ़ा-चढ़ाकर दूसरोंपर ज़ाहिर करता है। ग़ज़ल-गो शायर आपदाओंको अपनेमें जज़्ब कर लेता है, फिर जो जज़्बात उसके मुँहसे प्रस्फुटित होते हैं। वही ग़ज़ल कहलाते हैं।

उर्दूके अमर शायर मीर, ग़ालिब ऐसे ही शायर हुए हैं। उनके जीवन-कालमें बादशाहतें मिटीं, दिल्ली लुटी, और न जाने कितने इन्क़लाब आये। सब उतार-चढ़ाव अपनी आँखोंसे देखे। निरुपाय बने घुटते रहे, मिटते रहे।

उन इन्क़लाबातने जो हश्र बरपा किया, उनके बारेमें 'मीर' इतना कहकर चुप हो गये—

**दीदनी है शिकस्तगी दिलकी।**
**क्या इमारत ग़मोंने ढाई है॥**

और ग़ालिब इससे ज़्यादा क्या कहते ?—

**चिराग़े-मुर्दा हूँ मैं बे ज़बाँ गोरे-ग़रीबाँका—**

उनके जीवनमें जितनी मुसीबतें आ सकती थी, आई। वे मृत्युकी प्रतीक्षा करते रहे—

**हो चुकीं ग़ालिब ! बलायें सब तमाम।**
**एक मर्गे-नागहानी और है॥**

लेकिन ऐसा भी नहीं है कि गज़लगो शायरोंने सामयिक घटनाओंपर कुछ भी नही कहा हो ! कहा है, परन्तु बहुत संक्षेपमें और नपे-तुले शब्दोंमें। 'मीर'के जीवनकालमें क़ादिर रहीलाने शाहआलम बादशाहकी आँखोंमें नीलकी सलाइयाँ फेरकर उन्हें ज्योतिहीन कर दिया था। इस दर्दनाक घटनाको 'मीर'ने अपनी ग़ज़लके एक शेरमें यूँ व्यक्त किया है—

**शहाँ कि कुहले-जवाहर थी ख़ाके-पा जिनकी।**
**उन्हींकी आँखोंमें फिरती सलाइयाँ देखी[1]॥**

इस घटनाको 'मीर'ने इतने संक्षेपमें बयान किया है, कि कुछ कहनेको शेष नहीं रहा। इसी घटनाको इक़बालने नज़्ममें प्रस्तुत किया है, जिसमें काफ़ी अशआर हैं।

---

[1]जिन बादशाहोंकी पाँवकी खाक जवाहरका सुर्मा समझी जाती थी। उन्हीं बादशाहोंकी आँखोंमें सलाइयाँ फिरती देखी गईं।

वर्त्तमान युगीन ग़ज़लगो शायरोंमें यह भावना उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है कि ग़ज़लमें भी सामयिक घटनाओं, लोकोपयोगी कार्यों और अन्य आवश्यकीय विषयोंका समावेश किया जाय, ताकि ग़ज़ल अधिक-से-अधिक उपयोगी और समृद्धिशाली बन सके और वह मानसिक भूख मिटानेके अतिरिक्त भी हर तरहसे जीवनोपयोगी बन सके। इस तरहके हज़ार-हा शेर 'शेरो-सुख़न'के चारों भागोंमें मिलेंगे। विषयको स्पष्ट करनेके लिए चन्द शेर शीर्षकके साथ यहाँ दिये जा रहे हैं; ताकि उस तरहके अशआर पुस्तकमें सुगमतापूर्वक खोजे जा सकें। साथ ही ग़ज़लका शेर अपने अन्दर कितने भाव रखता है, यह भी दृष्टि प्राप्त हो सके।

## नैतिक

असर लखनवी—ईमां ग़लत, उसूल ग़लत, इद्दुआ[1] ग़लत।
इन्सांकी दिल दही[2] अगर इन्सां न कर सके॥

वोह काम कर बुलन्द हो, जिससे मज़ाक़े-ज़ीस्त[3]।
दिन ज़िन्दगीके गिनते नहीं महो-सालसे॥

क्या-क्या दुआएँ माँगते हैं सब मगर 'असर'।
अपनी यही दुआ है, कोई मुद्दआ[4] न हो॥

नज़्म तबातबाई—क़ाबूसे नफ़्सेबदको निकलने कभी न दो।
फिर शेर है जो यह सगे-बेगाना[5] छुट गया॥

अहसान ले न हिम्मते-मर्दाना छोड़कर।
रस्ता भी चल तो सब्ज़-ए-बेगाना[6] छोड़कर॥

---

[1]दावा; [2]दिल रखना; [3]जीवनका लक्ष; [4]इच्छा; [5]पागल कुत्ता; [6]हरीभरी घासको।

आरजू लखनवी—

फैल गई बालोंमें सुफ़ेदी, चौंक ज़रा करवट तो बदल ।
शामसे ग़ाफ़िल सोनेवाले ! देख तो कितनी रात हुई ।।

इज्ज़त कुछ और शै है, नुमाइश कुछ और चीज़ ।
यूँ तो यहाँ ख़ुरोसके[1] सरपर भी ताज है ।।

शबनमके[2] आँसुओंपर क्या हँस रहे हैं ग़ुंचे[3] ।
उनसे तो कोई पूछे कबतक हँसा करेंगे ।।

मिले भी कुछ तो हैं बहतर तलबसे इस्तग़ना[4] ।
बनो तो शाह बनो, 'आरजू' गदा[5] न बनो ।।

हुस्ने-सीरतपर[6] नज़र कर, हुस्ने-सूरतको[7] न देख ।
आदमी है नामका गर ख़ूं नहीं इन्सानकी ।।

ग़ुबार उठता है यह कहता हुआ गोरे-ग़रीबाँसे[8] ।।
"जहाँमें एक दिन सबका यही अंजाम होना है ।।"

ग़म दिया है कि मसर्रत दी है, सबमें इक तरहकी लज्ज़त दी है ।
हँस न इतना कि ख़ुशी ग़म हो जाये, शै हरइक हस्ब ज़रूरत दी है ।।

शाद अज़ीमाबादी—

गुलोंने ख़ारोंके छेड़नेपर सिवा ख़मोशीके दम न मारा ।
शरीफ़ उलझें अगर किसीसे तो फिर शराफ़त कहाँ रहेगी ।।

हवाये-दहर[10] बिगाड़े हज़ार फूलोंको ।
न हो वोह रंग शराफ़तकी कुछ तो बू होगी ।।

---

[1]मुर्ग़ेके; [2]ओसके; [3]कलियाँ; [4]सन्तोष; [5]भिक्षुक; [6]सुन्दर स्वभावपर; [7]सुन्दर मुखको; [8]स्वभाव; [9]क़ब्रिस्तानसे; [10]दुनियाकी हवा ।

किसीके हम न काम आये, न कोई अपने काम आया।
तअ़ाज्जुब है कि तो भी ज़ुमर-ए-इन्साँमें[1] नाम आया॥

बशरके दिलमें न पड़ता जो आरज़ूका दाग़।
ख़ुदा गवाह कि अनमोल यह नगीं होता॥

भलाई इसलिए चाही कि हों भले मशहूर।
ग़रज़ कि अपने ही मतलबके आश्ना थे हम॥

गुलोंपर क्या है, काँटों तकका मैं दिलसे दुआ गो हूँ।
ख़ुदा बन्दा! न टूटे दिल किसी दुश्मन-से-दुश्मनका॥

यह दुनिया है ऐ 'शाद'! नाहक़ न उलझो।
हर इक कुछ तो अपनी-सी आख़िर कहेगा॥

मुर्दोंकी क़नाअ़तोंपै[2] है रश्क[3]।
पहने रहे इक कफ़न हमेशा॥

अनवर साबरी—अमने-आलम[4] तो मुश्किल नहीं है।
आदमी, आदमी हो तो जाये॥

अब्र अहसनी— ग़मो-दर्दपै बढ़के क़ब्ज़ा जमाले।
कि इसपर नहीं मुनइमोंका[5] इजारा[6]॥
अगर अब भी ज़िल्लतमें गुज़रे तो क़िस्मत।
ख़ुदी भी हमारी ख़ुदा भी हमारा॥

अशअ़र मलीहाबादी—चमनमें बहे लाख शबनमके[7] आँसू।
कली सीखती ही रही मुसकराना॥

---

[1]मनुष्योंकी श्रेणीमें; [2]सन्तोषपर [3]ईर्ष्या; [4]विश्वशान्ति; [5]धनिकोंका; [6]दावा; [7]ओसके।

**असद भोपाली**—'असद' चलो कि बदल दें हयातकी[1] तक़दीर।
हमारे साथ ज़मानेका फ़ैसला होगा॥

**ख़लिश दर्दी**— खेलते हैं जो मज़लूमोंकी[2] जानोंसे।
हैवान अच्छे हैं ऐसे इन्सानोंसे॥

**दर्द सईदी टोंकी**— अभी आदमी-आदमीका है दुश्मन।
अभी ख़ुदको समझा नहीं आदमीने॥

जहाँ सैकड़ों बुतकदे[3] ढा दिये हैं।
ख़ुदा भी तराशे हैं कुछ बन्दगीने॥

**आनन्दनारायण मुल्ला**—

ख़ूने-जिगरके क़तरे, और अश्क बनके टपके?
किस कामके लिए थे, किस काम आ रहे हैं?

## ख़ुदापर व्यंग

**नक़्श सहराई**— सफ़ीनेका[4] नहीं, मुझको यह ग़म है।
जो शह दे[5] नाख़ुदाको,[6] वोह ख़ुदा क्या॥

**यगाना चंगेज़ी**— आई को टाल दे जभी जानें।
दम-ब-ख़ुद है तो फिर ख़ुदा क्या है॥

**बिस्मिल सईदी**—

इलाही दुनियामें और कुछ दिन अभी क़यामत न आने पाये।
तेरे बनाये हुए बशरको[7] अभी मैं इन्सां बना रहा हूँ॥

---

[1]ज़िन्दगीकी; [2]सताये हुओंकी; [3]मन्दिर; [4]नावका; [5]संकेत, इशारा; [6]मल्लाहको; [7]आदमीको।

## उपासनायें

बिस्मिल सईदी—

नहीं अपने किसी मक़सदसे[1] ख़ाली कोई भी सजदा[2]।
ख़ुदाके नामसे करता है इन्साँ बन्दगी अपनी॥

आरज़ू लखनवी— जाते-ख़ुदा में यूँ हो महव।
नामे-ख़ुदाको भूल जा॥

यगाना चंगेज़ी—बन्दे न होंगे जितने ख़ुदा हैं ख़ुदाईमें।
किस-किस ख़ुदाके सामने सजदा करे कोई॥

## धन कुबेरोंसे

मुख़्तार अदीबी—

तुम्हें मुबारक हो क़सरो-ईवाँ,[3] यह ऐशो-मस्तीके साज़ो-सामाँ।
हैं झोपड़ोंसे मुझे मुहब्बत, मैं ग़मके मारोंका साथ दूँगा॥

साक़िब लखनवी—

मकाँ मुनअ़मका[4] सोनेसे, यह ख़ूने-दिलसे बनता है।
ख़सो-ख़ाशाकका[5] घर भी बड़ी मुश्किलसे बनता है॥

आरज़ू लखनवी—

मुझे रहनेको वोह मिला है घर कि जो आफ़तोंकी है रहगुज़र[6]।
तुम्हें ख़ाकसारोंकी[7] क्या ख़बर, कभी नीचे उतरे हो बामसे[8]?

---

[1]मतलबसे; [2]नमाज़-उपासना; [3]महल; [4]धनिकका महल; [5]घास-फूँसका; [6]मार्ग; [7]दीन-दुखियोंकी; [8]कमरेसे।

## निर्धनता

रियाज़ ख़ैराबादी— मुफ़लिसोंकी ज़िन्दगीका ज़िक्र क्या ?
मुफ़लिसीकी मौत भी अच्छी नहीं ।।

यगाना चंगेज़ी— ख़्वाह पियाला हो, या निवाला हो ।
बन पड़े तो झपट ले, भीक न माँग ।।

## पराई आग

दत्तात्रिय कैफ़ी— ग़म रहा उनका जो दोज़ख़में पड़े जलते हैं ।
मेरे ख़ुश होनेका जन्नतमें भी सामाँ न हुआ ।।

रियाज़ ख़ैराबादी— मेरे सिवा नज़र आये न कोई दोज़ख़में ।
किसीका जुर्म हो, मालिक मुझे सज़ा देना ।।

## मनुष्यकी मजबूरियाँ

राज यज़दानी— अजब करम है, कि बे अख़्तियारियाँ देकर ।
अ़ता किया है दो आलमपै अख़्तियार मुझे ।।

शेरी भोपाली—न जीनेपर ही क़ाबू है, न मरनेका ही इमकाँ है ।
हक़ीक़तमें इन्हीं मजबूरियोंका नाम इन्साँ है ।।

## अपनी भाषा

यगाना— समझमें कुछ नहीं आता,
पढ़े जाऊँ तो क्या हासिल ?
नमाज़ोंका है कुछ मतलब तो
परदेशी ज़बाँ क्यों हो ?

## ये नसीहतकार

अयूब— जो हुस्नो-इश्क़की रूदादसे[1] हैं बेगाने[2]।
वोह क्या समझके चले आये मुझको समझाने॥

## नागरिकता

तसव्वुर किरतपुरी—
कुछ मेरे बाद और भी आयेंगे क़ाफ़िले[3]।
काँटे यह रास्तेसे हटा लूँ तो चैन लूँ॥

## साम्यवाद

आनन्दनारायण मुल्ला—
महर[4] वोह है ख़ाकके ज़र्रे जो करदे ज़रनिगार[5]।
ऊँची-ऊँची चोटियोंपर, नूर[6] बरसानेसे क्या॥

न जानें कितनी शमएँ गुल हुईं, कितने बुझे तारे।
तब इक ख़ुरशीद[7] इतराता हुआ बाला-ए-बाम[8] आया॥

## भक्त वत्सलता

असर— उसकी रहमतको[9] नाज़[10] हो जिसपर।
तुझसे ऐसी 'असर' ख़ता न हुई॥

आरज़ू— करमपै[11] तेरे नज़रकी तो ढै गया सब ग़रूर।
बढ़ा था नाज़ कि हदका गुनहगार हूँ मैं॥

---

[1]कहानीसे; [2]अनभिज्ञ; [3]यात्रीदल; [4]सूर्य्य; [5]प्रकाशमान; [6]प्रकाश; [7]सूर्य्य; [8]कमरेके ऊपर; [9]दयालुताको; [10]अभिमान; [11]कृपापर।

## मज़हबसे बेज़ारी

यगाना— दुनियाके साथ दीनकी बेगार अलअमाँ।
इन्सान आदमी न हुआ, जानवर हुआ॥

बस एक नुक़्त-ए-फ़र्ज़ीका नाम है काबा।
किसीको मरकज़े-तहक़ीक़का पता न चला॥

मज़हबसे दग़ा न कर, दग़ासे बाज़ आ।
किस कामका हज ! मकरो-रियासे बाज़ आ॥
ईमान तो कहता है कि इन्साँ बन जा।
बन्देकी मददको आ, ख़ुदासे बाज़ आ॥

## फ़िरक़ा-परस्ती

यगाना— पढ़के दो कलमे अगर कोई मुसलमाँ हो जाय।
फिर तो हैवान भी दो रोज़में इन्साँ हो जाय॥

सब तेरे सिवा काफ़िर, आख़िर इसका मतलब क्या ?
सिर फिरा दे इन्साँका ऐसा ख़ब्ते-मज़हब क्या ?

महराबोंमें सजदा वाजिब, हुस्नके आगे सजदा हराम।
ऐसे गुनहगारोंपै ख़ुदाकी मार नहीं तो कुछ भी नहीं॥

आनन्दनारायण मुल्ला—
मैं फ़क़त इन्सान हूँ, हिन्दू-मुसलमाँ कुछ नहीं।
मेरे दिलके दर्दमें तफ़रीक़े-ईमाँ कुछ नहीं॥

असर लखनवी— मसजिदेवाज़से इक रिन्द यह कहते उठ्ठा—
"काफ़िर अच्छे हैं दिलाज़ार मुसलमानोंसे"॥

निशात सईदी— है दिल वबाये फ़िरक़ा परस्तीका है शिकार।
इन्सानियतकी मौत नुमायाँ अभीसे है॥

## सर्व धर्म समभाव

अजीज लखनवी—

मंज़रे-जज़्बात[1] है, ख़िलवत सरा-ए-दैर[2] भी।
काबेवालो फ़र्ज़ है तुमपर वहाँकी सैर भी॥

यगाना— खड़े हैं दुराहेपै दैरो-हरमके[3]।
तेरी जुस्तजूमें सफ़र करनेवाले॥

अजीज लखनवी—

जहनमें आया न फ़र्क़े-इम्तयाज़ी[4] आजतक।
मुद्दतों देखा है हमने काबा-ओ-दैर भी॥

## अहिंसा

आनन्दनारायण मुल्ला—

तशद्दुदको[5] तशद्ददसे दबालें यह तो मुमकिन है।
मगर शोलेको[6] शोलेसे बुझाया जा नहीं सकता॥

दिखा सकेगी न हरगिज़ जहाँको अम्नकी[7] राह।
सितमगरीकी वोह मशअ़ल[8] जो दूरसे[9] हो सियाह॥

इन्साँकी जहालतका अभी है वही मेयार।
है सबसे सिवा पुख़्ता दलील आज भी तलवार॥

---

[1]-[3]मन्दिरकी एकान्त शान्ति देखने योग्य है; [3]मन्दिर-मसजिदके; [4]भेद, अन्तर; [5]हिंसाको; [6]आगको; [7]शान्तिकी; [8]मशाल; [9]धुएँसे।

भारत-विभाजन, स्वराज्य-प्राप्ति, बापूकी शहादत आदि सामयिक और प्रेरणात्मक शायरीपर 'नई लहर' और 'मुशायरा' शीर्षक परिच्छेदोंमें लिखा जा चुका है। पुनरावृत्तिकी यहाँ आवश्यकता नहीं।

प्रसंगके अनुसार जो अशआर ज़हनमें आये, वे इस परिच्छेदमें दिये गये हैं। ऐसे हज़ारों शेर शेरो-सुख़नके पाँचों भागोंमें यत्र-तत्र मिलेंगे। यह तो एक झलक मात्र है। बक़ौल दिल शाहजहाँपुरी—

**मेरा हाल था जहाँतक, वोह अदा हुआ ज़बाँसे।**
**जो कहेंगे अश्के-रंगी, वोह अलग है दास्ताँसे॥**

१६ अप्रेल १९५४ ई० ]

# नई करवट

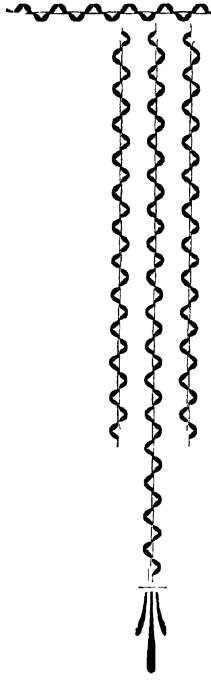

[ वर्त्तमान युगीन वयोवृद्ध और युवक शायर ]

# तिलोकचन्द 'महरूम'

[१८८७—ई०]

लाला तिलोकचन्द 'महरूम' भगत रामदयालके सुपुत्र हैं। आपका जन्म ईसाखेल ज़ि० मियांवाली (पाकिस्तान) में १८८७ ई०में हुआ। ७ वर्षकी आयुमें शिक्षा प्रारम्भ हुई। बी० ए० पास है। भारत-विभाजनसे पूर्व आप रावलपिण्डीमे मिडिल स्कूलके हेडमास्टर थे। अब दिल्लीमें रहते है। शायरीकी ओर रुचि आपकी बचपनसे है। आपकी नज़्मोंसे प्रभावित होकर 'अकबर' इलाहाबादीने लिखा था—

**है दादका मुस्तहक़ कलामे-'महरूम'।**
**लफ़्ज़ोंका जमाल और मानीका हुजूम॥**
**है उनका सुख़न मुफ़ीद दानिश आमोज़।**
**उनकी नज़्मोंकी है बजा मुल्कमें धूम॥**

१९१५में आपकी धर्मपत्नीका स्वर्गवास हो गया। उनकी मृत्युपर जो आपने करुणापूर्ण नज़्म लिखी, उसके चन्द शेर देखिये—

. . . . . .

**यह हाथ जोड़के मुझसे मुआफ़ियाँ कैसी ?**
**छिड़ी है आज यह रुख़सतकी दास्ताँ कैसी ?**

. . . . . .

मुझे तो रोकते हो बार-बार रोनेसे।
रुकोगे क्या न मेरे ज़ार-ज़ार रोनेसे ?

. . . . . .

किया था अहदे-वफ़ा मुझसे उम्रभरके लिए।
अभीसे हो गये तैयार क्यों उधरके लिए॥
गुज़रने पाये हैं मुश्किलसे पाँच साल अभी।
शबाबपर है तुम्हारा तो बाल-बाल अभी॥
उरूजपर[1] है उरूसाना[2] चाल-ढाल अभी।
न लाओ मौतका दिलमें ज़रा ख़याल अभी॥
तुम्हारे मरनेके ऐ जान ! यह दिन नहीं हरगिज़ !
जहाँसे उठनेको यह साल-ओ-सिन नहीं हरगिज़॥

. . . . . .

लो उठके बैठो कि 'विद्या' सिराहने आई है।
तुम्हारे मुँहसे वोह दामन उठाने आई है॥
अदाये-तिफ़लीको[3] ही तो दिखाने आई है।
कि हँसती आई है तुमको हँसाने आई है॥
वोह चलके आई है घुटनोंपै, थक गई होगी।
तुम्हारे प्यारसे फिर उसको ताज़गी होगी॥

. . . . . .

## नूरजहाँका मज़ार

नूरजहाँके टूटे-फूटे मज़ारको देखकर कहते हैं—

. . . . . .

तुझ-सी मलकाके लिए यह बारहदरी है ?
ग़ालीचा सरेफ़र्श है न कोई दरी है॥

. . . . . .

---

[1]उन्नतिपर; [2]दुलहनों जैसी; [3]बचपनकी अदा।

ऐसी किसी जोगनकी भी कुटिया नहीं होती।
होती हो मगर यूँ सरे-सेहरा नहीं होती॥

. . . . . .

चौपाये जो घबराते हैं, गरमीसे तो अक्सर।
आराम लिया करते हैं, इस रोजेमें आकर॥
और शामको बालाई सियह खानोंसे[1] शप्पर[2]।
उड़-उड़के लगाते हैं दरो-बामपै चक्कर॥

मामूर है यूँ महफ़िले-जाना न किसीकी।
आबाद रहे गौरे-गरीबाँ न किसीकी॥

आरास्ता[3] जिनके लिए गुलजारो-चमन[4] थे।
जो नाजुकीमें दाग़ दहे-बर्गे-समन थे॥
जो गुलरुखो-गुलपैरहनो-गुंचा दहन थे।
शादाब गुलेतरसे कहीं जिनके बदन थे॥
पजमुर्दा वोह गुल दबके हुए खाकके नीचे।
ख्वाबीदा हैं, खारो-खसो खाशाकके नीचे॥

. . . . . .

जो कुछ थे कभी थे, मगर अब कुछ भी नहीं हैं।
टूटे हुए पिंजरेसे पड़े जेरे-जमीं हैं॥

. . . . . .

आपका नज़मगो शायरोंमें बहुत बुलन्द मर्त्तबा है। कभी-कभी ग़ज़ल भी कह लेते हैं। आपकी ग़ज़लें नैतिक और पवित्र प्रेमसे ओत-प्रोत होती हैं। चन्द अशआर मुलाहिज़ा फरमायें—

ऐ हमरहाने-दस्ते-मुहब्बत[5]! बढ़े चलो।
अपना तो पाये-शौक़ सलासिलमें[6] रह गया॥

---

[1]अँधेरी छतोंसे; [2]चमगीदड़; [3]सजे हुए; [4]उद्यान वाटिकायें; [5]प्रेममार्गके साथियो; [6]ज़ंजीरमें।

ऐ दिल ! यह क्या फ़सुर्दगी[1] आग़ाज़े-इश्क़में[2] ।
गुल क्यों तेरा चराग़ सरेशाम हो गया ॥

हो दौरेग़म कि अहदेख़ुशी दोनों एक हैं ।
दोनों गुज़श्तनी[3] हैं ख़िज़ाँ क्या, बहार क्या ॥

समझमें आया न राज़ेसनअ़त[4] ज़रा भी सूरतगरे अजलका[5] ।
बना रहा है मिटा-मिटाकर, मिटा रहा है बना-बनाकर ॥
अगर है मंज़ूरे-सर बुलन्दी तो दूर नज़रोंसे कर बुलन्दी ।
कि ओज[6] शम्सो-क़मरने[7] पाया है सरको अपने झुका-झुकाकर ॥

है-है ! किसीकी बज़्म मुझे याद आगई ।
वाइज़ ख़ुदाके वास्ते ज़िक्रे-जनाँ[8] न छेड़ ॥
दुनियामें ऐ ज़बाँ ! रविशे-सुलह कुल न छोड़ ।
जिससे किसीको रंज हो ऐसा बयाँ न छेड़ ॥
हमदम ! कहीं न हसरते-ख़्वाबीदा जाग उठे ।
ऐयामे-हुस्नोइश्क़की फिर दास्ताँ न छेड़ ॥

किससे सुनूँ ? जो तुम न करो बात प्यारकी ।
किससे कहूँ ? जो तुम न सुनो माजराये-दिल ॥

है सुबह और आज परीशाँ अभीसे है ।
यानी शबे-फ़िराक़के सामाँ अभीसे है ॥

---

[1]मुर्झायापन; [2]प्रेमके प्रारम्भमें; [3]नाशवान; [4]कला-भेद; [5]विधाताका; [6]उच्चता, उन्नति; [7]सूर्य-चन्द्रने; [8]जनाकी चरचा ।

कोहो-सहरा[1]-ओ-साहिले-दरिया[2] ।
बे ठिकानोंके सौ ठिकाने हैं ॥

बचूँ तेरी आतिशे-इश्क़से[3] यह मजालो-ताब कहाँ मुझे ।
मेरे दिलका और तेरे हुस्नका, है खसो-शररका[4] मुआमला ॥

नज़रकर खन्दये-गुलपर[5] रियाजे-दहरमें[6] ग़ाफ़िल !
निहायत मुख़्तसर है, जो घड़ी है याँ मसर्रतकी[7] ॥

बाद तर्के-आरज़ू[8] बैठा हूँ क्या मुतमइन[9] ।
हो गई आसाँ हरइक मुश्किल ब-आसानी मेरी ॥

शबे-फ़ुरक़तकी दास्ताँ है तवील[10] ।
नींद अलमुख़्तसर नहीं आती ॥

ख़लिशने[11] दिलको मेरे कुछ मज़ा दिया ऐसा ।
कि जमा करता हूँ मैं ख़ार[12] आशियाँके लिए ॥

तुम्हींसे ली है सबाने भी शोख़िये-रफ़्तार[13] ।
चराग़े-गौरेग़रीबाँ[14] न क्यों बुझाके चले ?
रहेगी हाजते-शरहे-जफ़ा[15] न महशरमें ।
इसी अदासे जो तुम सामने ख़ुदाके चले ॥

---

[1]पर्वत-जंगल; [2]दरियाका किनारा; [3]प्रेम-अग्निसे; [4]फूँस-आगका; [5]फूलोंकी मुसकानपर; [6]संसाररूपी उद्यानमें; [7]सुखकी, खुशीकी; [8]अभिलाषाओंके त्याग करनेके बाद; [9]निश्चिन्त; [10]बड़ी; [11]चुभनने; [12]काँटे; [13]चालकी चंचलता; [14]क़ब्रोंके दीपक; [15]अत्याचारोंका भाष्य करनेकी आवश्यकता ।

दिखाई देते हैं ख़ूबोंके ऐब भी अच्छे।
कि चाके-दामने-गुलको नहीं रफ़ू करते॥

कोई सोता हो जैसे डूबती किश्तीके तख़्तेपर।
अगर कुछ है तो बस इतनी है इस दुनियाकी राहत[1] भी॥

किस मुँहसे जाके शिकवये-जौरो-जफ़ा[2] करें।
मरते हैं और उनकी पशेमानियोंसे हम॥

हो जाते हैं दौरे-आशिक़ीमें।
हालात तमाम नामुआ़फ़िक़॥

अब जहाँमें उनकी क़बरोंके निशाँ मिलते नहीं।
उम्रभर जो फ़िक्रे-तसख़ीरे-जहाँ[3] करते रहे॥

पहलूमें दिल है दर्दकी दुनिया कहें जिसे।
पर इसक़दर उजाड़ कि सहरा कहें जिसे॥
वोह रौबे-हुस्न था कि बन आई न हमसे बात।
यूँ हाले-दिल कहा कि न कहना कहें जिसे॥

साक़ी! तेरा अक्से-रुख़ है वरना—
सहबा[4] रंगीं न जाम[5] रंगीं॥

जिनकी तक़दीसकी[6] खाते हैं फ़रिश्ते भी क़सम।
हम गुनहगारोंमें होते हैं वोह इन्साँ पैदा॥

---

[1]सुख-चैन; [2]अत्याचारोंकी शिकायतें; [3]संसार-विजय; [4]शराब; [5]प्याला; [6]पवित्रताकी।

ज़ीस्तकी[1] दुश्वारियोंने यह तो अहसाँ कर दिया।
मौत-सी मुश्किलको मेरे हक़में आसाँ कर दिया॥

किस मुँहसे शिकवा उनके न आनेका कीजिये।
जब जा सके न उनके न आयेपै जाँसे हम॥

ज़माना ख़ाकसारीका[2] नहीं, ख़ुद्दार[3] बनकर उठ।
मिटा वोह राहे-मंज़िलमें जो बैठा नक़्शे-पा[4] होकर॥

ज़िन्दगी नाकामियोंकी इक मुसलसल[5] दास्ताँ।
मौत क्या है ज़िन्दगीकी दास्ताँका ख़ात्मा॥

दर्दे-दिल, सोज़े-जिगर, अश्के-रवाँ, दाग़े-फ़िराक़।
सच तो यह है आपके अहसाँ हैं मुझपर बेशुमार॥

तेरी नज़रोंसे गिर जाना, तेरे दिलसे उतर जाना।
यह वोह अफ़साना है, जिससे बहुत अच्छा है मर जाना॥

जो तू ग़मख़्वार हो जाये तो ग़म क्या?
ज़माना क्या ज़मानेके सितम क्या॥

हविसे-गुलमें बढ़ाया न कभी मैंने हाथ।
न किसी ख़ारसे उलझा कभी दामन मेरा॥

---

[1]जीवनकी।

इसी भावको एक शायरने यूँ नज़्म किया है—

निबाहे-इश्कमें ख़ामी कोई मालूम होती है।
तुम्हारी बरहमी क्यों बरहमी मालूम होती है॥

[2]नम्रताका; [3]स्वाभिमानी; [4]चरणचिह्न; [5]क्रमबद्ध।

कहाँ अफ़सानये-हस्तीका आग़ाज़ ।
सुनाते आये हैं सब दरमियाँसे ।।

तुझसे राहत छीन ली जायेगी कल उसके लिए ।
ऐ दिले-राहततलब ! जो तालिबे-ईज़ा[1] है आज ।।

बादेबहार ! तुझसे उमीदे-निशात क्या ?
बस इस क़दर कि ज़ख़्मे-कुहनको हराकरे ।।

महफ़िलमें उनकी ग़ैर हैं, जलिये कि बैठिये ?
'महरूम' ! देख शमअ़को, यानी कि जलके चल ।।

२२ अगस्त १९५३ ]

—निगार जनवरी १९४१

---

[1]दुःखोंके इच्छुक ।

# 'ताजवर' नजीबाबादी

[१८९४–१९५१ ई०]

मौलाना ताजवर नजीबाबादी उर्दूके बहुत बड़े हितैषी, प्रसारक और प्रामाणिक विद्वान थे। आपके निधनसे उर्दू-संसारकी बहुत अधिक हानि हुई है। आप जीवन पर्यंत उर्दूके प्रसार, निर्माण, और नोक-पलक निकालनेमें लगे रहे।

आपका पूरा नाम अहसानअलीख़ाँ और उपनाम 'ताजवर' था। उत्तर-प्रदेशके बिजनौर ज़िलेकी तहसील नजीबाबादमें आपका १८९४में जन्म हुआ। देवबन्दके प्रसिद्ध मुस्लिम विद्यालय 'दारुल अलूम'की अरबी-फ़ारसी और मजहबी, शिक्षामें पारंगत होनेके बाद १९१४ ई०में २० वर्षकी अवस्थामें आप लाहौर चले गये और वहाँ ता-उम्र साहित्य-सेवा करते रहे। पंजाबियोंकी कट्टर प्रान्तीयताके कारण आपको पग-पगपर विघ्न-बाधाओंने घेरा; परन्तु आप मर्दानावार मैदानमें डटे रहे और अपने लक्ष्यकी ओर बराबर बढ़ते रहे। पंजाबमें 'उर्दू-बोलो' आन्दोलनके आप मुख्य प्रेरक थे। आपने अपने विचारोंके प्रसारके लिए मख़ज़न, हिमायूँ, शाहकार और अदबी दुनिया-जैसे प्रसिद्ध पत्रोंका संपादन, प्रकाशन किया। आपके आलोचनात्मक, गवेषणात्मक, खोजपूर्ण लेखों और साहित्यिक निबन्धोंको बहुत चावसे पढ़ा जाता था। पंजाब यूनिवर्सिटीसे आपका सदैव सम्बन्ध रहा। आपके अनेक शिष्य पाकिस्तान और भारतमें ख्याति-

प्राप्त साहित्यिक विद्वान हैं। आप आत्म-विज्ञापनसे सदैव बचते रहे। यहाँतक कि अपने कलामका संकलन तक नहीं छपवाया। शिष्योंको आस्मानमें चढ़ा दिया, परन्तु स्वयं एकाग्र होकर कार्य करते रहे।

मन बहलावके लिए कभी-कभी शेर भी कह लेते थे। नमूनेके तौरपर चन्द शेर दिये जा रहे हैं। उर्दू-संसारमें आपका मर्त्तबा गद्य-लेखक और सम्पादकके नाते बहुत बुलन्द है।

अब आप बनेंगे अपनी दुनिया।
दुनिया तुझे भूल जायेंगे हम॥

शामकी तनहाईमें जब वोह ख़्वाबे-हसीं याद आता है।
यूँ ही बैठे-बैठे दिलको जाने क्या हो जाता है?

तेरी मुहब्बतमें मेरे चेहरेसे है नुमायाँ[1] जलाल[2] तेरा।
हूँ तेरे जलवोंमें महव[3] ऐसा कि तेरा आइनादार[4] हूँ मैं॥

अहले-चमनको क़ैदे-क़फ़सकी है आरज़ू।
सैयादसे भी बढ़के सितम बाग़बाँके हैं॥

यह लुटी हुई-सी बहार क्यों है, कहाँ वह जाने-बहार है?
यह चमनसे कौन चला गया, कि कली-कलीको फ़िशार[5] है?

महफ़िले-हश्र भी सूनी नज़र आती है मुझे।
ढूँढ़ती हैं जिसे नज़रें, वही महशरमें नहीं॥

है मेरे ख़ाकके ज़र्रोंमें फिर नमूदे-हयात[6]।
कहीं उन्हें तो नहीं याद आ रहा हूँ मैं?

---

[1]प्रकट; [2]रूप-गौरव; [3]लीन; [4]प्रतिविम्ब; [5]सिकुड़ी हुई-सी हैं। [6]जीवनके चिह्न।

मुहब्बत आह, मुहब्बतकी ज़िन्दगी मत पूछ।
बड़ी मुसीबतोंमें मुब्तला[1] रहा हूँ मैं॥

मान लिया कि ताजवर ! वोह नहीं अख़्तयारमें।
कहिये तो अपने दिलपै है, आपको अख़्तियार क्या ?

न दिल बदला, न दिलकी आरज़ू बदली न वोह बदले।
मैं कैसे ऐतबारे-इन्क़लाबे-आसमाँ कर लूँ ?
सबब हर एक मुझसे पूछता है मेरे रोनेका।
इलाही सारी दुनियाको मैं क्योंकर राज़दाँ[2] कर लूँ ?

ख़लिशे-इश्क़[3] मिटेगी मिरे दिलसे जबतक।
दिल ही मिट जायेगा, ऐसा नज़र आता है मुझे॥

मलामतगरो ! उनको ज़िदपै तुम्हारी।
नहीं भी अगर चाहता, चाहता हूँ॥
ख़ुदा मुझको तुझसे ही महरूम कर दे।
जो कुछ और तेरे सिवा चाहता हूँ॥
नज़रभरके जो देख सकते है मुझको।
मैं उनकी नज़र देखना चाहता हूँ॥

बस इतनी दाद देना बाद मेरे मेरी उल्फ़तको।
कि याद आऊँ तो अपने आपको तुम प्यार कर लेना॥

ख़ुद्दारिये-जुनूँने न जाने दिया वहाँ।
कम्बख़्त राहे-दोस्तमें दीवार हो गई॥

---

[1]घिरा हुआ; [2]भेदी; [3]प्रेम-चुभन।

मिटा न मुझको मुहब्बतकी ख़ुद-फ़रामोशी[1] ।
कि अपने भूलनेवालेकी यादगार हूँ मैं ।।

कहीं रुसवा न हो अब शाने-इस्तग़ना मुहब्बतकी[2] ।
मेरी हालत तुम्हारे रहमके क़ाबिल न बन जाये ।।

यह सितम ? क़ैदे-क़फ़समें सैयाद !
किसने पूछा था बहार आई है ?

५ जनवरी १९५३ ई०]

सैय्याद

---

[1]अपनेको भूल जानेकी स्थिति; [2]प्रेमकी बेपरवाहीकी शान ।

# 'अलम' मुज़फ़्फ़रनगरी

[१८९४ — ई०]

मौलाना मुहम्मद इसहाक़ 'अलम' मुज़फ़्फ़रनगर निवासी हैं। आप अल्लामा 'सीमाब' अकबराबादीके सुयोग्य शिष्य हैं। अपने जीवन-कालमें ही अल्लामा सीमाबने आपको मसनदे-उस्तादी अता कर दी थी। उस्तादकी वृद्धावस्थामें आप ही अपने गुरु भाइयोंके कलामका संशोधन करते रहे हैं और उनकी मृत्युके बाद भी यह क्रम चालू है। आपके अपने शिष्य भी काफ़ी हैं। आपके संशोधन बहुत मार्केके होते हैं। आपके एक शिष्य श्री कुलभूषण जैन 'कौसर' डालमियानगरमें क़याम फ़र्माते हैं। मुझे उनके कलामपर आपकी दी हुई इसलाहें देखनेका इत्तफ़ाक़ होता रहता है। उस बिनापर मुझे कहना पड़ता है कि आप अपने शिष्योंके साथ बहुत ही सहृदयताका व्यवहार रखते हैं और उन्हें काफ़ी प्रोत्साहन देते रहते हैं। बतौर नमूना चन्द इसलाहें यहाँ दी जाती हैं—

**कौसर— बाग़े-हस्तीमें सबक़ फूलसे लें अहले-नज़र।**
**जिसने की उम्र तबस्सुमसे बसर ख़ारोंमें॥**

**अलम— बाग़े-हस्तीमें सबक़ गुलसे लें अहले-शिकवा।**
**जिसने हँस-खेलके की उम्र बसर ख़ारोंमें॥**

कौसर— बख़्ते-ख़ुफ़्ता तेरा सदशुक्र तेरे फ़ैज़से हम।
ख़्वाबे-ग़फ़लतसे गुज़रकर हुए बेदारोंमें॥

अलम— बख़्ते-ख़ुफ़्ता ! यह हक़ीक़त है तेरे फ़ैज़से हम।
नींदसे जागके शामिल हुए बेदारोंमें॥

कौसर— किसीको साग़रे-ज़रसे, किसीको ओकसे साक़ी !
मिटाया इस तआ़स्सुबने तेरे तहज़ीबे-इन्साँको॥

अलम— किसीको साग़रे-ज़रसे किसीको ओकसे साक़ी।
सरे-महफ़िल न यूँ बरबाद कर तहज़ीबे-इन्साँको॥

कौसर— ग़ारूरे-हुस्न उनका ख़ूनके दरिया बहा देता।
सरे-महफ़िल मगर यूँ कहिये आईना मुक़ाबिल था॥

अलम— ग़ारूरे-हुस्न उनका सैकड़ों फ़ितने जगा देता।
सरे-महफ़िल मगर यूँ कहिये आईना मुक़ाबिल था॥

कौसर— क़ुसूर उनका नहीं, जो मुझको महफ़िलसे निकलवाया।
ख़ता मेरी ही थी नावाक़िफ़े-आईने-महफ़िल था॥

अलम— क़ुसूर उनका नहीं, जो मुझको महफ़िलसे निकलवाया।
ख़ता मेरी थी, मैं ना वाक़िफ़े-आईने-महफ़िल था॥

कौसर— इन्तहा ग़मकी है ग़ाफ़िल ! इब्तदा-ए-हद्दे-ऐश।
राज़ यह समझा है जाके मैंने ज़िन्दानोंके पास॥

अलम— सुबहे-इशरत शामे-ग़मके बाद आती है नज़र।
राज़ यह समझा है जाके मैंने ज़िन्दानोंके पास॥

अलम साहब द्वारा किये गये शब्दोंके तनिक-से हेर-फेर, परिवर्तन एवं संशोधनसे उक्त अशआरमें क्या बात पैदा हो गई है, विज्ञ पाठकोंको यह बतानेकी आवश्यकता नहीं।

आप गद्य लिखनेमें भी सिद्धहस्त हैं। भारतके प्रायः सभी प्रसिद्ध उर्दू पत्र-पत्रिकाओंमें आपके आलोचनात्मक और गवेषणापूर्ण लेख छपते रहते हैं। नज़्ममें भी बहुत अच्छी महारत रखते हैं।

'अलम' साहबने अरबी-फ़ारसीकी उच्च शिक्षा प्राप्त की है और वर्त्तमानमें मुज़फ़्फ़रनगरके इसलामियाँ इण्टर मीजियट कॉलेजमें लेक्चरर हैं। यूँ आप क़सीदे, मसनवी, रुबाई, नज़्म, ग़ज़ल सभीमें महारत रखते हैं। मगर ग़ज़लकी तरफ़ विशेष रुचि है। आपके कलामके निम्न दो संकलन अभी तक प्रकाशित हुए हैं —

१. **सलसबील**—आलमगीर बुकडिपो लाहौर (१९४८ ई०) पृ० २५६। १६६ पृष्ठोंमें ग़ज़लें और शेष पृष्ठोंमें नज़्में हैं।

२. **कौसरो-तसनीम**—नाज़िम दारुल इशाअ़त फ़रदौस मंज़िल—मुज़फ़्फ़रनगर (१९५१ ई०) पृ० २२३। १३१ पृष्ठोंमें नज़्में और शेषम ग़ज़लें हैं।

इन्हीं दोनों संकलनोंसे पहले हम चन्द ग़ज़लोंके शेर चुनकर दे रहे हैं। 'अलम' साहब सूफ़ी मुसलमान हैं। अतः आपके यहाँ रंगे-तसव्वुफ़ काफ़ी नज़र आता है—

**ऐसे बीमारे-मुहब्बतका ख़ुदा हाफ़िज़ है।**
**नींद आई तो उसे मौतका सामाँ समझा॥**

**शोरे-नाक़ूसे-बिरहमन[1] हो कि हो बाँगे-हरम[2]!**
**छुपके हर आवाज़में तुझको सदा[3] देता हूँ मैं॥**

---

[1]पुजारीके शंखकी ध्वनि; [2]मसजिदकी अज़ान; [3]आवाज़।

बड़ी आफ़त है दमभरका सकूँ[१] भी राहे-उल्फ़तमें।
जो हर मंजिलपै ठहरे, वोह हमारा हमसफ़र क्यों हो॥

है उन्हींका अक्से-रुख़ हर जलवये-दैरो-हरम[२]।
किस तरह फिर इम्तयाज़े-कुफ़्रो-ईमा[३] कीजिये॥

सब ही निगाहमें रहें अपने हों या कि ग़ैर हों।
महफ़िले-नाजमें तेरी ऐसा निज़ाम[४] चाहिए॥

बहुत-से व्यक्ति ऐसे भी हैं जो ईश्वरोपासनामें तो लीन रहते हैं, मगर उसके बन्दोंकी उपेक्षा करते हैं। ईश्वरको पतितपावन, दलितोद्धारक कहते नहीं थकते; परन्तु स्वयं पतितों एवं दलितोंसे घृणित और दुर-दुरका व्यवहार करते हैं। इसी भावनाको लक्ष करके सर इक़बालने फ़र्माया था—

ख़ुदाके बन्दे तो हैं हज़ारों, बनोंमें फिरते हैं मारे-मारे।
मैं उनका बन्दा बनूँगा जिनको, ख़ुदाके बन्दोंसे प्यार होगा॥

इसी भावको देखिये 'अलम' किस ख़ूबीसे व्यक्त करते हैं —

है फ़र्ज़ तुझपै फ़क़त बन्दये-ख़ुदाकी तलाश।
ख़ुदाकी फ़िक्र न कर, वोह मिला, मिला न मिला॥

तलाशो-जुस्तजूकी सरहदें अब ख़त्म होती हैं।
ख़ुदा मुझको नज़र आने लगा इन्साने-कामिलमें॥

---

[१]चैन; [२]मन्दिर-मजसिदका चमत्कार; [३]धर्म-अधर्ममें भेद-भाव; [४]प्रबन्ध-व्यवस्था।

अत्याचारी शासकोंको देखिये' 'अलम साहबने रंगे-तग़ज्ज़ुलमें कितनी बड़ी चेतावनी दी है—

**कहीं यही न हो बुनियादे-इनक़लाबे-चमन।**
**चमनकी ख़ाकमें यूँ ख़ाके-आशियाँ न मिला॥**

**न दे तू तानये-उफ़्तादगी[1] पाबन्दे-मुश्किलको[2]।**
**यह उट्ठा तो उठेगा साथ लेकर तेरी महफ़िलको॥**

अदूरदर्शी अथवा ग़लत नेताके कारण जनता आपत्तियोंके भँवरमें फँस जाती है। फिर भी वह अज्ञानवश उसके चंगुलसे निकलनेका प्रयत्न नहीं करती। जो व्यक्ति नाख़ुदाको[3] ख़ुदा समझ ले, उसके दुर्भाग्यका उपाय भी क्या ?

**नाख़ुदाको मैं ख़ुदा उस वक़्त भी समझा किया।**
**जब मुझे ख़ुद नाख़ुदाने ज़ेरे-तूफ़ाँ कर दिया॥**

लेकिन 'अलम' साहब इसका भी उपाय बताते हैं। यानी आप ज़हर-की दवा ज़हर बताते है—

**और भी आसान होंगी राहकी दुश्वारियाँ।**
**हर अमीरे-कारवाँको[4] राहज़न[5] होने भी दे॥**

'अलम' साहबके इश्क़का तसव्वुर मुलाहिज़ा फ़र्मायें—

**मैं अब वाक़िफ़ हुआ हूँ, है कमाले-इश्क़ वोह मंज़िल।**
**जहाँ इन्सानको महसूस होती है कमी अपनी॥**

---

[1] ख़स्ता हालतके ताने; [2]असहाय स्थितिमें पड़े हुए को, लाचारको; [3]केवटको, मल्लाहको; [4]यात्रीदलके नेताको; [5]लुटेरा।

कहाँ वोह ऐ 'अलम' ! रंजे-हयाते-आशिक़ी[1] समझे।
जो मर जाना मुहब्बतमें कमाले-ज़िन्दगी समझे॥

बेनियाज़ी[2] थर-थरा उट्ठी मिज़ाजे-हुस्नकी।
दिलने जिस दम बारगाहे-इश्क़में[3] सजदा[4] किया॥

अक्सर ग़ज़लमें वर्णित आशिक़ अपनी वफ़ाओंकी तारीफ़ें और माशूक़के जौर-ओ-तग़ाफ़ुलकी शिकायतें करते हुए नहीं थकता था। लेकिन वर्त्तमान युगमें ग़ज़लका लबोलहजा बदल गया है। आजका शायर दूसरों के छिद्रान्वेषण करने की अपेक्षा स्वयं अपनी त्रुटियाँ खोजनेका प्रयत्न करता है—

मुझे क्यों छोड़ जाता बेसहारे दस्ते-ग़ुरबतमें[5]।
ज़रूरत कुछ अगर महसूस करता कारवाँ[6] मेरी॥

कुछ नीति पूर्ण शेर

हुआ करती हैं दुश्वारी ही से आसानियाँ पैदा।
बड़े नादान हैं, मुश्किलको जो मुश्किल समझते हैं॥

ग़मो-इशरतके[7] हर पहलूको रखते हैं, निगाहोंमें।
अज़लसे[8] जो मआले-गर्दिशे-आलम[9] समझते हैं॥

ख़ाकसारीका[10] है ग़ाफ़िल ! बहुत ऊँचा मर्तबा।
यह ज़मीं वोह है कि जिसपर आसमाँ कोई नहीं॥

---

[1]प्रेमी-जीवनकी व्यथा; [2]उपेक्षा; [3]प्रेम-मन्दिरमें; [4]प्रणाम; [5]यात्रा-मार्गमें, परदेशमें; [6]यात्रीदल; [7]दुःख-सुखके; [8]सृष्टिके प्रारम्भसे; [9]संसारचक्रका कारण; [10]नम्रता, सेवाभावका।

बन सके तो शमअ़ बनकर रौनक़े-काशाना[1] बन ।
वरना जलकर दफ़अ़तन ख़ाकिस्तरे-परवाना[2] बन ।।

ज़ेब[3] देती नहीं इन्सानको तलख़ीये-कलाम[4] ।
गुफ़्तगूको सबबे-बरहमी-ए-दिल[5] न बना ।।

बेफ़ायदा है, सजदागुज़ारी[6] सुबह -ओ-शाम ।
जब दिल ही झुक सका न सरे-बन्दगीके साथ ।।

हदसे ज़्यादा चमने-दहरमें[7] उड़नेवाले ।
देगी धोका तुझे बेज़ाब्तए-परवाज़[8] कहीं ।।

तलबमें[9] दोनों आलमकी[10] झुका रक्खा है क्यों सरको ?
यह रस्मे-बन्दगी[11] इक दिन अज़ाबे-दायमी[12] होगी ।।

वोह अपने हर क़दमपर है कामयाबे-मंज़िल[13] ।
आज़ाद हो चुका जो तक़लीदे-कारवाँसे[14] ।।

ऐ महवे-निशाते फ़स्लेगुल[15]! अंजामे-ख़ुशी[16] राम होता है ।
फूलोंकी तरह जो हँसते हैं, इक रोज़ वोह गिरियाँ[17] होते हैं ।।

तदबीर[18] ही तेरी नाक़िस[19] थी, तक़दीरको तू इलज़ाम न दे ।
कर सब्र ज़रा, कारे-मुश्किल[20], सब वक़्तपर आसाँ होते हैं ।।

---

[1]मकानकी शोभा; [2]या प्रेमदीपपै जलकर पतंगेकी ख़ाक बन; [3]शोभा; [4]कटु वचन; [5]हृदयको चोट पहुँचानेका कारण; [6]नतमस्तक होकर ईश्वरके आगे गिरना; [7]संसाररूपी उद्यानमें; [8]बेसोची-समझी उड़ान; [9]अभिलाषामें; [10]इहलोक-परलोककी; [11]दिखावटी उपासना; [12]स्थाई परेशानी; [13]सफलयात्री; [14]यात्रीदलके अनुकरणसे; [15]सुखमें तल्लीन मौसमी फूल ! [16]ख़ुशीका परिणाम आख़िर; [17]रोते हैं; [18]पुरुषार्थ; [19]व्यर्थ, हीन; [20]कठिन कार्य ।

उनको तो जगाया सोते थे, जो राहमें ऐ फ़रियादे-जरस[1] !
जो चलते-चलते सोते हैं, उनको भी जगाना आता है ?

तू ख़ुद रहबर[2] है, ख़ुद बाँगेजरस[3] है, ख़ुद ही मंज़िल है।
मुसाफ़िर ! फिर यह तक़लीदे-अमीरे-कारवाँ[4] कब तक ?

सूरते-नक़्शे-रहगुज़र[5] आजिज़ीं[6] अख़्तियार कर।
अर्शकी[7] रफ़अ़तोंपें[8] गर तुझको मुक़ाम चाहिए ॥

चन्द भिन्न-भिन्न रंगके शेर

जहाँमें सोज़े-मुहब्बतका[9] तर्जुमा[10] न मिला।
ज़बाने-शमअ़पै परवानेका बयाँ न मिला ॥

कहाँ था नब्ज़शनासे-चमन वोह दुनियामें।
बहारेगुलमें जिसे पहलुए-ख़िज़ाँ न मिला ॥

मैं रहनेजब्र हूँ, तू अख़्तियारका मालिक।
मेरे फ़सानेसे यह अपनी दास्ताँ न मिला ॥

अज़लसे गर्मेसफ़र हूँ, मगर मुझे अबतक।
बिछड़ गया था मैं जिससे, वोह कारवाँ न मिला ॥

क़फ़समें और नशेमनमें रहके देख लिया।
कहीं भी चैन मुझे ज़ेरे-आसमाँ न मिला ॥

---

[1]यात्रीदलके ऊँटके गलेमें बँधी घण्टीने; [2]पथप्रदर्शक; [3]घण्टीकी आवाज़; [4]यात्रीदलके नेताका अनुकरण; [5]पदचिह्नोंकी तरह; [6]नम्रता; [7]आकाशकी; [8]ऊँचाइयोंमें। [9]प्रेम-ज्वालाका; [10]बतानेवाला।

सभीने उनसे कहा हश्रमें फ़सानये-दिल।
मुझे यहाँ भी 'अलम' मौक़ये-बयाँ न मिला ॥

हरेक नक़्शे-क़दम रोजे-हश्र देख लिया।
तलाश जिसकी थी मुझको वोह बेवफ़ा न मिला ॥

देख ऐ मुनअ़म[1] ! यही था मुझमें-तुझमें इम्तयाज[2]।
तेरा क़ब्जा था जहाँपर, मेरा क़ब्जा दिलपै था ॥

न देख इन गहरी नज़रोंसे मुझे ऐ देखनेवाले !
भरम खुल जायगा ज़ालिम ! मेरे जज़्बाते-पिन्हाँका[3] ॥

दबा रक्खा है सीनेमें जिसे तेरे असीरोंने[4]।
कभी गुलशनमें वोह नाला[5] क़फ़सकी दास्ताँ होगा ॥

मैं नालए-दिलसे काम लूँगा मुझीसे होगा यह काम मेरा।
सबाको[6] है क्या ग़रज़ कि उनतक वोह लेके जाये पयाम[7] मेरा ॥

जो डूबना हो तो काफ़ी है एक आँसू भी।
तेरा क़ुसूर कि तू ग़र्क़े-आब[8] हो न सका ॥

अब बयाबाँसे गुलिस्ताँकी तरफ़ जायेंगे क्या ?
तेरे दीवाने फ़रेबे-रंगो-बू खायेंगे क्या ?
मुस्तक़िल कोई न देगा क्या सबूते-सोज़े-इश्क़ !
जितने परवाने हैं सब ही जलके मर जायेंगे क्या ?

---

[1]धनिक; [2]अन्तर, भेद; [3]अन्तरंग भावनाओंका; [4]क़ैदियोंने; [5]रुदन, आह; [6]हवाको; [7]सन्देश; [8]पानीमें डूब न सका।

उनको तो जगाया सोते थे, जो राहमें ऐ फ़रियादे-जरस[1] !
जो चलते-चलते सोते हैं, उनको भी जगाना आता है ?

तू ख़ुद रहबर[2] है, ख़ुद बाँगेजरस[3] है, ख़ुद ही मंज़िल है।
मुसाफ़िर ! फिर यह तक़लीदे-अमीरे-कारवाँ[4] कब तक ?

सूरते-नक़्शे-रहगुज़र[5] आजिज़ी[6] अख़्तियार कर।
अर्शकी[7] रफ़अतोंपै[8] गर तुझको मुक़ाम चाहिए ॥

चन्द भिन्न-भिन्न रंगके शेर

जहाँमें सोज़े-मुहब्बतका[9] तर्जुमा[10] न मिला।
ज़बाने-शमअ़पै परवानेका बयाँ न मिला ॥

कहाँ था नब्ज़शनासे-चमन वोह दुनियामें।
बहारेगुलमें जिसे पहलुए-ख़िज़ाँ न मिला ॥

मैं रहनेजब्र हूँ, तू अख़्तयारका मालिक।
मेरे फ़सानेसे यह अपनी दास्ताँ न मिला ॥

अज़लसे गर्मेसफ़र हूँ, मगर मुझे अबतक।
बिछड़ गया था मैं जिससे, वोह कारवाँ न मिला ॥

क़फ़समें और नशेमनमें रहके देख लिया।
कहीं भी चैन मुझे ज़ेरे-आसमाँ न मिला ॥

---

[1]यात्रीदलके ऊँटके गलेमें बँधी घण्टीने; [2]पथप्रदर्शक; [3]घण्टीकी आवाज़; [4]यात्रीदलके नेताका अनुकरण; [5]पदचिह्नोंकी तरह; [6]नम्रता; [7]आकाशकी; [8]ऊँचाइयोंमें। [9]प्रेम-ज्वालाका; [10]बतानेवाला।

सभीने उनसे कहा हश्रमें फ़साने-दिल।
मुझे यहाँ भी 'अलम' मौक़ये-बयाँ न मिला॥

हरेक नक़्शे-क़दम रोजे-हश्र देख लिया।
तलाश जिसकी थी मुझको वोह बेवफ़ा न मिला॥

देख ऐ मुनअ़म[1] ! यही था मुझमें-तुझमें इम्तयाज[2]।
तेरा क़ब्ज़ा था जहाँपर, मेरा क़ब्ज़ा दिलपै था॥

न देख इन गहरी नज़रोंसे मुझे ऐ देखनेवाले !
भरम खुल जायगा ज़ालिम ! मेरे जज़्बाते-पिन्हाँका[3]॥

दबा रक्खा है सीनेमें जिसे तेरे असीरोंने[4]।
कभी गुलशनमें वोह नाला[5] क़फ़सकी दास्ताँ होगा॥

मैं नालए-दिलसे काम लूँगा मुझीसे होगा यह काम मेरा।
सबाको[6] है क्या ग़रज़ कि उनतक वोह लेके जाये पयाम[7] मेरा॥

जो डूबना हो तो काफ़ी है एक आँसू भी।
तेरा क़ुसूर कि तू ग़र्क़े-आब[8] हो न सका॥

अब बयाबाँसे गुलिस्ताँकी तरफ़ जायेंगे क्या ?
तेरे दीवाने फ़रेबे-रंगो-बू खायेंगे क्या ?
मुस्तक़िल कोई न देगा क्या सबूते-सोज़े-इश्क़ !
जितने परवाने हैं सब ही जलके मर जायेंगे क्या ?

---

[1]धनिक; [2]अन्तर, भेद; [3]अन्तरंग भावनाओंका; [4]क़ैदियोंने; [5]रुदन, आह; [6]हवाको; [7]सन्देश; [8]पानीमें डूब न सका।

सुन चुके जब दास्ताने-दर्द तो कहने लगे—
"और भी इसके सिवा कुछ आप फ़रमायेंगे क्या ?"
आशियाँ जिनका है जेरे-आतिशे-गुल बाग़बाँ !
हमलाहाये-बर्क़ोबारांसे[1] वोह घबरायेंगे क्या ?
दारपर दुनिया चढ़ा ही देगी क्या मंसूरको ?
वाक़िफ़ानेराज़ सब ख़ामोश हो जायेंगे क्या ?

वोह कहाँ लज्ज़ते-सोज़े-ग़मे-पिन्हा समझा ?
हिज्रमें जीनेसे मरनेको जो आसाँ समझा ॥
ज़र्रा-ज़र्रा था चमन अक्सेरुख़े-लैलासे ।
क़ैस दीवाना गुलिस्ताँको बयाबाँ समझा ॥

उस दिन 'अलम'को फ़ितरते-ग़म[2] मरहमत[3] हुई ।
जिस रोज़ यह ज़मीन बनी, आसमाँ बना ॥

हमारी ख़ाकसारी बादमुर्दन भी नुमायाँ है ।
गलीमें उनकी उड़ता है, बहुत नीचा ग़ुबार अपना ॥

बहरे हस्तीका अज़लसे[4] हूँ शनावर[5] लेकिन ।
आजतक वाक़िफ़े-राज़े-तहे-दरिया[6] न हुआ ॥

नज़अमें[7] बहुत धीमी जुम्बिशें नफ़सकी[8] है ।
है क़रीब मंज़िलके आज कारवाँ अपना ॥

परफ़िशानीका[9] क़फ़समें मुझे मौक़ा न मिला ।
नोच डाला मेरे सैयादने जो पर निकला ॥

---

[1]बिजली-वर्षके आक्रमणोंसे; [2]दुखी स्वभाव; [3]प्रदान; [4]अनादिकालसे; [5]परिचित; [6]नदीके अन्तस्थलसे परिचित; [7]प्राणान्तकालमें; [8]इन्द्रियाँ शिथिल हो रही हैं; [9]उड़ानका ।

देखिये अब कौन-सा तूफ़ाँ जगाता है हमें।
मुँह छुपाके सो रहे हैं दामने-साहिलसे[1] हम॥
सामने मंज़िल है और आहिस्ता उठते हैं क़दम।
पास आकर हो रहे हैं दूर फिर मंज़िलसे हम॥
कामयाबीमें भी ह नाकामयाबे-ज़िन्दगी।
ऐन मंज़िलपर नहीं है, आश्ना[2] मंज़िलसे हम॥

मज़ाक़े-ग़म न पैदा कर सका मैं उनकी फ़ितरतमें।
सुनाई बाग़वालोंको क़फ़सकी दास्ताँ बरसों॥

तेरी मरज़ीपै छोड़ दूँ किस तरह तूफ़ानमें किश्ती ?
तुझे ऐ नाख़ुदा ! नावाक़िफ़े-साहिल समझता हूँ॥

कोई रिन्दोंके इस ज़र्फ़ो-नज़रकी[3] वुसअ़तें[4] देखे।
हरइक टूटे हुए साग़रको जामेजम समझते हैं॥
निसारे-शमअ़ होकर बज़्ममें कहते हैं परवाने—
"कोई समझे न समझे, हम मआ़ले-ग़म समझते हैं"॥

जो बयाने-इश्क़ भी समझे, ज़बाने-हुस्न भी।
आपकी महफ़िलमें ऐसा, राज़दाँ[5] कोई नहीं॥

वफ़ाके परदेमें क्या-क्या जफ़ाएँ देखी हैं।
निगाहे-लुत्फ़पर अब मुझको ऐतमाद[6] नहीं॥
मुझे यक़ीं है मगर दिलको क्या करूँ कि उसे।
किसीके वादये-फ़रदापै[7] ऐतमाद नहीं॥

---

[1]नदी- तटसे; [2]परिचित; [3]दृष्टिकोणकी; [4]उदारताएँ; [5]जानकार; [6]भरोसा; [7]भविष्यके वायदेपर।

नज़र हैरां, ज़बाँ बहकी हुई-सी।
यह आप आख़िर कहाँसे आ रहे हैं ?
बयाँ करके सबब जोरो-जफ़ाका।
वफ़ाओंको मेरी शरमा रहे हैं॥

दिलके इत्मीनानका यूँ ही कोई सामाँ करें।
ऐतबारे-इनक़लाबे-गर्दिशे-दौराँ करें॥

मेरी तूफ़ाँशनासी नाख़ुदा ! मुझको बचायेगी।
मैं तूफ़ाँमें निगाहे-मौजे-तूफ़ाँ देख लेता हूँ॥

क़ैदमें भी है मयस्सर ऐ जुनूँ ! लुत्फ़े-चमन।
ख़ूनके छींटोंसे ज़िन्दाँको[1] सजा देता हूँ मैं॥

दिल मेरा बहलता है, तेरे ही तसव्वुरसे[2]।
इश्क़के नतीजोंसे गर्चे आश्ना[3] हूँ मैं॥

नहीं आदाबे-जुनूँसे यह बहारेंवाक़िफ़।
वरना गुल बाग़में यूँ चाक गरेबाँ कर दें ?

मेरी परवाज़ क्या आये नज़र तुमको चमनवालो !
तसव्वुरमें जो उड़ता हो, वोह महदूदे-नज़र क्यों हो ?

मिली तो क्या मिली सैयाद ! ऐसी आज़ादी।
जब एक शाख़े-नशेमनपै अख़्तयार न हो॥

हम अपने दिलको महफ़ूजे-तमन्ना क्यों न रहने दें।
यह इक क़तरा लहू, सरगुश्तये-आहो-फ़ुगाँ[4] क्यों हो ?

---

[1]कारागारको; [2]ध्यानसे, चिन्तनसे; [3]परिचित; [4]आह-रुदनसे दुःखी।

बदनसे रूह जाती है तो दिलको साथ ले जाये।
अमानत इश्क़ है जिसमें, वोह हिस्सा रायगाँ[1] क्यों हो ?

दिलको बना हरमनशीं[2], तौफ़े-हरम[3] नहीं, न हो।
मानीये-बन्दगी[4] समझ, सूरते-बन्दगी[5] न देख ॥

न पूछ उसके तहम्मुलकी[6] वुसअ़तें[7] सैयाद !
कि दर्से-ज़ब्ते-फ़ुग़ाँ,[8] जिसने जेरे-दाम[9] लिया ॥

कहीं बिजली, कहीं गुलचीं, कहीं सैयादका ख़तरा।
फले-फूलेगी इस गुलशनमें शाख़े-आशियाँ क्योंकर ॥

तवज्जह[10] सर्फ़[11] करता वाक़ई गर नाख़ुदा[12] अपनी।
तो क्यों साहिलसे टकरा करके किश्ती डूबती अपनी ॥

जुनूँवालोंकी उरियानीपै[13] यूँ हँसना नहीं अच्छा।
मनायें ख़ैर अपने पैरहनकी[14] पैरहनवाले ॥

है जाहिर उसपै चमनकी हक़ीक़तें जिसने—
शगुफ़्ता[15] लाल-ओ-गुलका मआल[16] देखा है ॥
नहीं है दिलमें तमन्नाये-वस्ल तक बाक़ी।
फ़िराक़े-यारमें इतना मलाल देखा है ॥

---

[1]व्यर्थ नष्ट; [2]काबेमें लीन कर [3]तीर्थकी प्रदक्षिणा; [4]उपासनाका तात्पर्य्य; [5]बाह्य उपासनाओंको, [6]वरदाश्तकी, सब्रकी; [7]विशालता; [8]आहको रोकनेका पाठ; [9]जालमें; [10]ध्यान; [11]देता; [12]मल्लाह; [13]फटेहालपै, नग्नतापै; [14]परिधानकी, लिवासकी; [15]खिले हुए; [16]परिणाम।

सुना है फिर वोह सुनने आ रहे हैं, दास्ताँ मेरी ।
इलाही आज तो रंगे-असर लाये ज़बाँ मेरी ।।

ज़ंजीरे-आहनीको[1] समझते थे शाख़े-गुल ।
वोह हौसले शिकस्ता दिलोंमें कहाँ रहे ?

ज़र्फ़[2] उस क़तरये-नाचीज़का देखे कोई ।
ऐन दरिया हो मगर, सूरते-दरिया न बनें ।।
ग़र्क़ हो-होके कई बार तो उभरे लेकिन ।
फिर भी हम राज़शनासे-तहे-दरिया[3] न बने ।।

—सलसबील

थके-माँदे भी मंज़िलपर पहुँच जायें ब-आसानी ।
कोई तदबीर ऐसी ऐ अमीरे-कारवाँ ! कर लें ।।

मुझको न देख शानेकरमपर[4] निगाह कर ।
मुझसे ख़ता हुई है, मगर बेबसीके साथ ।।

मंज़िले-अर्शपै दम लेनेको ठहरूँ तो मगर,
दम भी लेने दे मुझे लज़्ज़ते-परवाज़ कहीं ।।

हरइक ज़र्रेमें जिसके सैकड़ों गुलशन हैं पोशीदा ।
जुनूँकी राहमें ऐसा भी इक वीराना आता है ।।

जा पहुँचता मंज़िले-मक़सूदपर अबतक 'अलम' ।
कारवाँको ख़िज़्रे-मंज़िल गामज़न होने भी दे ।।

---

[1]लोहेकी ज़ंजीरको; [2]हौसला; [3]दरियाके भेदी; [4]दयालुताके मर्त्तबे-पर ।

मुझे मुस्तहक़े-अमानते-ग़मो-दर्दे-इश्क़ बना दिया।
यह था ऐतमादे-वफ़ा उसे, फ़क़त एक मुश्ते-ग़ुबारपर ॥

नाख़ुदा डूब चुका, नाव है ग़र्क़े-तूफ़ाँ।
हाय किस वक़्त मुझे यादे-ख़ुदा आती है ॥
वोह समझते हैं गुलिस्ताँमें चटकती है कली।
टूटनेकी जो किसी दिलकी सदा आती है ॥

मेरी ख़ुद्दारिये-वहशतपे तनक़ीदें[1] बजा लेकिन—
न देखा तुमने अपने इन्तज़ामे-जश्ने-महफ़िलको ॥

आदाबे-गुलिस्ताँ फ़र्ज़ सही, ताईदे-जुनूँ भी वाजिब है।
क्या जाने बहारें कब आयें, हम चाक गरेबाँ होते हैं ॥

शब-रोज़ मुहब्बत सीनेमें, पोशीदा अगर्चे है, फिर भी—
आहोंमें लरज़ते रहते हैं, अश्कोंसे नुमायाँ होते हैं ॥
रुकते हैं कहीं दीवारोंसे, थमते हैं कहीं ज़ंजीरोंसे।
इज़हारे-जुनूँपर आमादा जब क़ैदिये-ज़िन्दा होते हैं ॥
जी भरके तड़प लेने दे उन्हें, रह-रहके ज़रा जलने दे उन्हें।
ऐ शमअ़की लौ ! यह परवाने इक रातके मेहमाँ होते हैं ॥
शिकिस्ता सोख़्ता भी और ख़िज़ाँदीदा भी है लेकिन —
ग़नीमत है चमनमें मेरी शाख़े-आशियाँ फिर भी ॥

मिलेगा लुत्फ़े-आज़ादी उन्हें क्या मौसमे-गुलमें ?
क़फ़ससे छूटकर गुलशनमें जो बेबालो-पर आये ॥

---

[1]आलोचनायें।

सालिके-राहेख़ुदी,[1] इस भेदसे वाक़िफ़ नहीं।
बेख़ुदीकी राहमें भी इक मुक़ामे-होश है॥

तसकीन मुसीबतमें देनेको, यूँ तो ज़माना आता है।
ऐसा भी कोई आता है जिसे, बिगड़ीको बनाना आता है॥
काँटोंकी ज़बाने-तिश्नासे गुलशनकी हक़ीक़तको पूछो।
याराने-चमन इन फूलोंको तो हँसना-हँसाना आता है॥

कौन है यह ना-शनासे-लज़्ज़ते-तूफ़ाने-ग़म ?
डूबनेवालेको साहिलसे सदा देने लगे॥

कहीं मशग़ूले-असबाबे-सफ़र पीछे न रह जाये।
शरीके-कारवाँ हो, इन्तज़ामे-कारवाँ कबतक॥

अँधेरी रात, तूफ़ाने-तलातुम, नाख़ुदा ग़ाफ़िल।
यह आलम है तो फिर कश्ती, सरे-मौजे-रवाँ कबतक ?*
मेरी परवाज़ है ख़ुद बेनियाज़े-मरकज़े-मंज़िल[2]।
मुझे उड़ने दो ताईने मकानो-लामकाँ[3] कबतक॥

किधर ले जा रहा है, बहरे-तूफ़ाँख़ेज़में कश्ती ?
तुझे मौजे-रवाँपर, नाख़ुदा ! साहिलका धोका है॥
सरे मंज़िल पहुँच सकता नहीं वोह क़ाफ़ला हरगिज़।
जिसे रहबरपे भी बेगानये-मंज़िलका धोका है॥

---

[1]अहमन्यता-मार्गका यात्री; [2]निश्चित स्थानसे अपरिचित; [3]असीम आकाश।

*उन्हें हिजाब, उन्हें शादमाँ, अज़ीज़ निढाल।
मेरा जनाज़ा भी कोई उठायगा कि नहीं ?
—सीमाब अकबराबादी

तूरे-सीनापर न जाते फिर कलीम।
देखते गर तूरे-दिलकी रोशनी॥
उठ गये सब राजदाने-मयकदा।
अब किसे दें मन्सबे-साक़ीगरी॥

बढ़ा दी इतना कहकर शमअ़ने परवानोंकी हिम्मत—
"है जलना काम उनका जो हैं दिलवाले, जिगरवाले"॥

ख़ुशी-ख़ुशीमें न, ग़ममें कोई मलाल मुझे।
बना दिया है मुहब्बतने बेमिसाल मुझे॥

बाक़या यह दोनों आलममें रहेगा यादगार।
ज़िन्दगानी मैंने हासिल की है मर जानेके बाद॥

यह तलातुम बहरे-हस्तीमें नहीं है बेसबब।
आ गई है कश्तिये-दिल, जेरे-मौजे-ग़म कहीं॥

जितनी छींटें हैं लहूकी सब हैं तारीख़े-जुनूं[1]।
ग़ौरसे नज़्जारये-दीवारे-ज़िन्दां[2] कीजिये॥
दामने-हस्तीसे यह आवेज़िशें अच्छी नहीं।
चाक करना है तो चाक अपना ही दामा कीजिये॥

यह तो सच है मैं नियाज़े-इश्क़से वाक़िफ़ नहीं।
कुछ मिज़ाजे-हुस्नका तुमने भी अन्दाज़ा किया?

न ख़तरा है ख़िज़ाँका और न उम्मीदे-बहारेगुल।
नशेमनमें क़फ़स-जैसी फ़राग़त[3] हो नहीं सकती॥

---

[1]उन्मत्तावस्थाका इतिहास; [2]कारागारकी दीवारोंका अवलोकन; [3]फ़ुरसत।

बहारे-गुलका मुज़दा[1] या नवीदे-वस्ले-जानाँ हो[2] ।
मुसीबतमें कोई शय वजहे-राहत हो नहीं सकती ।।
हक़ीक़त वोह मआ़ले-इश्क़की क्या ख़ाक समझेंगे ?
हमारे हालसे भी जिनको इबरत हो नहीं सकती ।।

फूलोंसे पूछिये न सितारोंसे पूछिये ।
दिल क्या है अश्के-ग़मके शरारोंसे पूछिये ।।

तालिबे-इश्क़ न था हुस्न, तो वह मेरी तरफ़ ।
मुल्तफ़ित क्यों हुए पैग़ामे-नज़रसे पहले ?

तेरी नज़रें दे रही हैं, तुझको धोका पै-ब-पै ।
है ग़ुबारे-दश्त दीवाने ! यहाँ महमिल कहाँ ?
हर ज़र्रा दे रहा है 'अलम' दावते-जमाल ।
लकिन जहाँमें चश्मे-हक़ीक़त नगर कहाँ ?

इसी वास्ते है पैहम, नज़र इसपै बिजलियोंकी ।
है सजी हुई गुलोंसे मेरी शाख़े-आशियाना ।।

थी न आज़ादे-फ़ना कश्ती-ए-दिल ऐ नाख़ुदा !
मौजे-तूफ़ाँसे बची तो नज़रे साहिल हो गई ।।

कोई ऐजाज़े-सफ़र था, या फ़रेबे-चश्मे-शौक़ ?
सामने आकर निहाँ आँखोंसे मंज़िल हो गई ।।

मैंने यूँ कश्तीका रुख़ फिर सूये-तूफ़ाँ कर दिया ।
साज़गारे-दिल हवाये-दामने-साहिल न थी ।।

---

[1]बहारकी आमद; [2]प्रेयसीमिलनका सन्देश ।

कुछ मिटे-से नक़्शेपा भी हैं, जुनूँकी राहमें।
हमसे पहले कोई गुज़रा है यहाँ होते हुए॥

—कौसरोतसनीम

## नज़्मोंके चन्द अशआ़र

मआ़ले-तमन्ना

. . . . . .

किसीने सहने-चमनमें क़रीब ही से सुना।
यह ख़ुश्क पत्तियोंसे उसकी आ रही थी सदा—
"उरूजे-हुस्नने[1] भुझको गिराया पस्तीमें।
कली हीं रहता यह अच्छा था बाग़े-हस्तीमें॥
तबाहियोंका है सरचश्मा इन्तहा-ए-कमाल।
कमाल ही को न फिर क्यों कहें दलीले-ज़वाल"॥

है कामयाब वही इस जहाने-फ़ानीमें।
जो बेनियाज़े-तमन्ना है ज़िन्दगानीमें॥

बसन्त

. . . . . .

वोह तोड़ती है जब फूल तो शाख़ें झुककर सजदा करती हैं।
उसकी रंगीन जवानीसे आईने पैदा करती हैं॥
फूलोंके आईनोंमें अपने अक्ससे वोह शरमाती हैं।
होंटोंसे तबस्सुम खिलता है, आँखोंमें हया थर्राती है॥
ख़ुद टूटके रंगीं फूल कुछ उसके दामनपर आ पड़ते हैं।
वोह दोशीज़ा हँस देती है, नज़रोंसे तारे झड़ते हैं॥

. . . . . .

भरकर फूलोंसे दामन जब वोह अपने पाँव बढ़ाती है।
हर नक़्शे-क़दमपर होनेको क़ुरबान बसन्त आ जाती है॥

---

[1]सौन्दर्य्यकी उँचाईने।

यह दोशीज़ा[1] उस मौसमकी गोया इक ज़िन्दा देवी है।
है ज़िन्दगी उसकी चितवनमें, यह ख़ुद ही बहारे-हस्ती है॥

—सलसबील

शबाब आ रहा है—

शबाब आ रहा है, शबाब आ रहा है।
दहकता हुआ आफ़ताब आ रहा है॥
हैं अठखेलियोंपर चमनकी हवायें।
नये सरसे फिर इनक़लाब आ रहा है॥
. . . . . .
यह सूरज है मशरिक़में या मैकदेमें।
कोई लेके जामे-शराब आ रहा है॥
यह क़ौसे-क़ज़ह है कि बज़्मे-फ़लकसे।
मुग़न्नी उठायें रुबाब आ रहा है॥
कँवल खिल रहा है कि हौज़े-चमनसे।
उभरता हुआ आफ़ताब आ रहा है॥
. . . . . .

—सलसबील

वफ़ा

कहता है तुझे कोई बुरा कहने दे।
तू छोड़ न दामाने-वफ़ा हाथोंसे॥
मिट्टीको ज़रा देख ब-चश्मे इबरत।
ज़िल्लतके एवज़ बख़्शती है गुलदस्ते॥

—कौसरो-तसनीम

२८ सितम्बर १९५३ ई० ]

---

[1]कुआँरी लड़की।

# 'अफ़सर' मेरठी

[१८९८ — ई०]

हामिदअल्ला 'अफ़सर' १८९८ ई० में उत्पन्न हुए। मेरठके रहनेवाले हैं। अरबी-फ़ारसीकी उच्च शिक्षाके साथ-साथ अंग्रेज़ीमें बी० ए० पास हैं, और लखनऊ इण्टर मीजियेट कॉलेजमें लेक्चरर हैं। शायरीका शौक़ बचपनसे था। मगर किसीपर प्रकट नहीं होते थे। सहपाठियोंके आग्रहपर १९१६के एक मुशायरेमें आपने पहले-पहल ग़ज़ल पढ़ी। खूब दाद मिली। लेकिन फिर आप मुद्दतोंतक मुशायरोंमें नहीं गये। इसका कारण यही था कि आपको मिसरा तरहपर ग़ज़ल कहना अच्छा नहीं मालूम होता था। लेकिन कलाम बराबर कहते रहे।

मुशायरोंकी मिसरातरहपर ग़ज़ल लिखनेसे 'अफ़सर' घबराते हैं। जो कुछ देखते और अनुभव करते हैं, उमंग आनेपर उसीको शायरीका परिधान पहनानेका प्रयत्न करते हैं। आप गीत और नज़्म भी लिखते हैं। लेकिन आपकी शायरीका श्रीगणेश ग़ज़लसे ही प्रारम्भ हुआ।

आपके स्वयंके चन्द पसन्दीदा अशआर—

**भटकती हैं नजरें मेरी हर तरफ़।**
**ख़ुदा जाने किस भेसमें तू मिले॥**

यह जी चाहता है मेरा आज 'अफ़सर' !
अभी और तुमसे किये जाऊँ बातें ॥

हाय वोह जिसकी उम्मीदें हों ख़िज़ाँपर मौक़ूफ़ ।
शाख़ें-गुल सूखके गिर जाये तो काशाना बने ॥

बढ़ाके रीश[1] तू मस्जिदको क्या चला 'अफ़सर' ?
यह शक्ल अब कहीं होती नहीं नमाज़ीकी ॥

रखकर नज़रके सामने तसवीरे-ख़्वाबे-नाज़[2] ।
पहरों तेरे ख़यालमें बैठा रहा हूँ मैं ॥

दिलपर अपना बस चलता तो वहशत काहेको होती ?
और किसीसे क्या मतलब है ? तू ख़ुद क्या कहता होगा ॥

जो ग़म हदसे ज़ियादा हो, ख़ुशी नज़दीक होती है ।
चमकते हैं सितारे रात जब तारीक[3] होती है ॥

दिखावेके हैं सब यह दुनियाके मेले ।
भरी बज़्ममें हम रहे हैं अकेले ॥
अनोखे ख़यालोंकी महफ़िल जमाये ।
पड़े रहते हैं घरमें 'अफ़सर' अकेले ॥

कुछ तवज्जह ख़ास होती है अयाँ[4] ।
नाम ले-लेकर न कोसा कीजिये ॥

वाँ उनको यह गुमान कि दामन भी तर नहीं ।
याँ हाल यह कि आ गया पानी गले-गले ॥

---

[1]दाढ़ी; [2]प्रेयसीके स्वप्नकी तसवीर; [3]अँधेरी; [4]प्रकट ।

हर ख़िज़ाँके ग़ुबारमें हमने।
कारवाने-बहार[1] देखा है॥
कितने पशमीना-पोश जिस्मोंमें[2]।
रूहको[3] तार-तार देखा है॥

अल्लाहरे जुनूँकी यह ज़र्रा नवाज़ियाँ।
बैठा हुआ हूँ दिलमें बयाबाँ लिये हुए॥

ज़माना ढूँड़ता है मुझको 'अफ़सर'।
ख़ुदा जाने कहाँ खोया गया मैं?

लिल्लाह यह तुम देखनेवालोंसे न पूछो।
क्या चीज़ हो तुम देखनेवालोंकी नज़रमें!

महवे-तलाशे-राहत,[4] तू यह भी जानता है?
कहते हैं जिसको राहत, वोह ग़मकी इन्तहा है॥

मज़ाहब क्या हैं? राहें-मुख़्तलिफ़ हैं, एक मंज़िलकी।
है मंज़िल क्या? जहाँ सब कुछ है, पर राहें नहीं होतीं॥

उफ़रे यह ज़ौक़े-इबादतकी अजाइबकारियाँ।
दिल कहीं है, मैं कहीं, सजदा कहीं है, सर कहीं?

मौत है वोह राज़, जो आख़िर खुलेगा एक दिन।
ज़िन्दगी है वोह मुअम्मा, जिसका कोई हल नहीं॥

---

[1]बहारका आगमन; [2]दुशालेसे ढके शरीरोंमें; [3]आत्माको; [4]सुखचैनकी खोजमें लीन।

तारोंका गो शुमारमें आना मुहाल है।
लेकिन किसीको नींद न आये तो क्या करे ?

दुनियामें इक सकूँका ज़रिया हो जब यही।
इन्सान तुझसे लौ न लगाये तो क्या करे ?

ख़ुदा तौफ़ीक़ देता है जिन्हें, वोह यह समझते हैं।
कि ख़ुद अपने ही हाथोंसे बना करती हैं तक़दीरें ॥

न समझा जब हक़ीक़तको किसीने।
ख़ुदा पैदा किया हर आदमीने ॥

तुझको पा लेनेमें यह बेताब कैफ़ीयत कहाँ ?
ज़िन्दगी वह है जो तेरी जुस्तजूमें कट गई ॥

क़रीब है मेरी मंज़िल, क़रीब है शायद।
कि अब नहीं रही हिम्मत क़दम उठानेकी ॥

हाय ! अंजामे-तजस्सुसकी[१] अजाइब कारियाँ।
तुम मिले और ढूँढ़नेवाले तुम्हारे खो गये ॥

हम जिसको मौत समझते हैं, पैग़ामे-हयाते-जदीद है वोह :
यह फूल चमनमें जितने हैं, फिर खिलनेको मुरझाते हैं ॥

जब ख़ुशीका ख़याल आता है।
दिले-मायूस काँप जाता है ॥

---

[१]खोजके परिणामकी।

सुखमें होता है हाफ़िज़ा बेकार।
दुःखमें अल्लाह याद आता है॥

चमकती है यह बिजली अब्रमें या—
किसीसे कुछ इशारे हो रहे हैं॥

—निगार जनवरी १९४१ ई०

ख़ौफ़ था जलनेका दिलके, तो दिया क्यों हो गये।
टूट जानेका अगर डर था असा[1] क्यों हो गये?
खेलना जब उनको तूफ़ानोंसे आता ही न था।
फिर वोह कश्तीके हमारे नाख़ुदा[2] क्यों हो गये?

शहरकी फ़िक्रमें घुलनेको, शहरका क़ाज़ी कौन बने।
अपना हामी ख़ुद जो नहीं, उसका हामी कौन बने!
ख़ुदको जो पा जाते हैं, दुनिया उनकी होती है।
जिसने ख़ुदको छोड़ दिया, उसका साथी कौन बने!

५ अक्तूबर १९५२ ई० ]

---

[1]लाठी; [2]मल्लाह।

# अम्न लखनवी

[१८९९—— ई०]

मुंशी गोपीनाथ 'अम्न' १८९९ ई० मे लखनऊमे उत्पन्न हुए। १९१६ ई० मे उन्होने मैट्रिक पास किया। उसी स्कूलमे प्रसिद्ध उस्ताद 'अजीज' उर्दू-शिक्षक थे। उनके ससर्गमे रहते हुए अम्नको भी शायरीका शौक हो गया। मैट्रिक करनेके बाद 'अम्न' म्यूनिस्पल कमेटीमे मुलाजिम हो गये। वहाँ रहते हुएआपने १९२० ई०मे मुख्तारीकी परीक्षा भी दी। १९२०से काग्रेस आन्दोलनमे आप भाग लेने लगे और आपने पहले-पहल १९२०मे ही लखनऊके एक काग्रेसी जल्सेमें अपनी एक नज्म सुनाई। स्कूल छोडनेके बाद आप बैजनाथ 'फिगार'से इस्लाह लेने लगे जो कि 'आतिश' स्कूलके स्नातक थे।

१९२४मे आपने मुख्तारगीरीकी प्रैक्टिस भी की। १९३० और ३२मे आप जेल गये और वहाँसे आकर दिल्लीके दैनिक उर्दू-पत्र 'तेज'मे सम्पादकीय विभागमे कार्य करने लगे। वहाँ तकरीबन १५ वर्षतक रहे। १९४२के आन्दोलनमे डेढ वर्षतक नजर-बन्द रहे और १९४८से दिल्ली प्रान्तीय सरकारके प्रेस ऑफीसरके उच्च पदपर प्रतिष्ठित थे और वर्त्तमानमे दिल्ली राज्यके मत्री है।

अम्न साहब खद्दरपोश, सरलस्वभावी और सीधे-सादे है। गान्धी-वादी विचारोके है। बीसो मुशायरोमे उन्हे सुना है। तरन्नुमसे पढते है।

आपका १९५०मे प्रकाशित २२४ पृष्ठका 'कारवाने मजिल' हमारे

सामने है। इसमे आपकी ७३ नज्मे और १६ गजले है। इन्ही गजलोके चन्द अशआर दिये जा रहे है--

असीराने-कफसकी आप बीती पूछते क्या हो ?
यहाँ ऐ 'अम्न' ! कज्जाकोसे बदतर पासबाँ देखे ॥

कहा शेखसे एक पीरेमुगाने--
कि "हर इकको देखो उसीकी नजरसे "।
यह है 'अम्न' इन्साँकी पस्ती-सी पस्ती।
गुनहसे बचा भी तो दोजखके डरमे ॥

कुछ अपना मर्तबा जानो, कुछ अपनी कद्र पहचानो।
जमीपर बसनेवालो ! शिकवये-हफ्त आस्मा कबतक ?

सुना है उनसे मुलाकात होगी महशरमे।
है एक और कयामत वहाँ अगर न मिले ॥
कही फरिश्ते मिले, और कही मिले शैतान।
हो जिनमें शान तलाशुनकी वोह बशर न मिले ॥

बेगाने जो शुरूसे है उनका जिक्र क्या ?
अपने भी गैर हो गये इसका मलाल है ॥

जिन्दगी बेखतर पसन्द नही।
पुरसकूँ रहगुजर पसन्द नही ॥

कोई शादमाँ, कोई अन्दोहगीं है।
सकूँकी अभी कोई सूरत नहीं है।
दमाग आस्माँपर जमींपर जबी है।
इबादत यह कोई इबादत नही है ॥

तलाशे-मदावा, तलाशे-मसीहा।
यह कुछ और है, दर्दे-उल्फ़त नहीं है॥

द्वितीय महासमरमे अंग्रेज-जर्मन युद्धमे अंग्रेजोकी सहायता न की जाय, इसी बातको चन्द कितोमे यो बयान किया है—

बरबादिये-गुस्ताके हरइक सिम्त है आसार।
गुलशनमे है सैयाद बहम बरसरे पैकार॥
आपसके यह झगडे है, नही तुझको सरोकार।
ऐ मुर्गे-गिरफ्तार ! ख़बरदार ! ख़बरदार !!

सैयादोके झगडोसे तुझे काम नही है।
क्या मुर्गे-गिरफ्तार तेरा नाम नही है॥

गुलशनमें लगे आग तू कर फिक्र न जिनहार।
ऐ मुर्गे-गिरफ़्तार ! ख़बरदार ! ख़बरदार !!

सैयादको लुट जानेका गो अपने ख़तर है।
फिर भी तेरे पिजरेपै वही सख़्त नज़र है॥
गुलशनमे जो होना है, वोह हो लेने दे इकबार।
ऐ मुर्गे-गिरफ्तार ! ख़बरदार ! ख़बरदार !!

२० अगस्त १९५३ ई०]

# रम्ज़

मुहम्मद रमजान 'रम्ज' छपरा (बिहार) के रहनेवाले है, और अदालतके किसी पदपर प्रतिष्ठित है। गम्भीर प्रकृतिके मिलनसार व्यक्ति है। मजाहिया रगमे शेर कहते है। लेकिन शक्लो-शबाहतसे यह अनुमान नही किया जा सकता कि ऐसी शान्त प्रकृतिका व्यक्ति भी जनताको हँसाते-हँसाते लोट-पोट कर सकता है।

आप अपने कलाममे केवल अग्रेजी काफियेका इस्तेमाल करके उसे हास्यमय बना देते है। वरना तमामका तमाम कलाम सजीदा-सा मालूम होता है, परन्तु काफियेका उपयोग होते ही हास्य प्रस्फुटित हो उठता है। सबसे पहले 'अकबर इलाहाबादीने अपने कलाममे अग्रेजी शब्दोको समोकर मजाकका पहलू निकाला था। उसके बाद तो एक प्रथा-सी चल गई, परन्तु 'रम्ज'से पहलेके शायर अग्रेजी शब्द आवश्यकतानुसार शेरमे चाहे जहाँ समो देते थे, कोई बँधा हुआ नियम नही था। लेकिन 'रम्ज'की खूबी ये है कि आप केवल काफिया अग्रेजीमे रखते है और बाकी समूचे शेरमे उर्दू-शब्द होते है। मुशायरेका मिसरा तरह कैसा ही क्यो न हो, आप अपने मजाकके मुताबिक अग्रेजी काफिये ढूँढ निकालते है। और उन्ही काफियोको शेरमे रखकर हास्य बखेर देते है। काफियेके अतिरिक्त शेरमे और अग्रेजी शब्द इस्तेमाल नही करते।

आपकी चन्द गजले जनाव अताउल्लाह पालवीने जुलाई १९४५के 'शायर'में प्रकाशित कराई थी, उनमेसे चन्द यहाँ साभार दी जा रही है—

**है रकीबोसे तुम्हारे वास्ते फाइट[1] हनूज़।**
**वायेनाकामी कि तै, पाया नहीं राइट[2] हनूज़॥**

---

[1]लडाई, [2]अधिकार।

तलाशे-मदावा, तलाशे-मसीहा ।
यह कुछ और है, दर्दे-उल्फत नहीं है ॥

द्वितीय महासमरमे अग्रेज-जर्मन युद्धमे अग्रेजोकी सहायता न की जाय, इसी बातको चन्द कितोमे यो बयान किया है—

बरबादिये-गुस्तांके हरइक सिम्त है आसार ।
गुलशनमे है सैयाद बहम बरसरे पैकार ॥
आपसके यह झगडे है, नही तुझको सरोकार ।
ऐ मुर्गे-गिरफ्तार ! खबरदार ! खबरदार !!

सैयादोके झगडोसे तुझे काम नही है ।
क्या मुर्गे-गिरफ्तार तेरा नाम नही है ॥

गुलशनमें लगे आग तू कर फिक्र न जिनहार ।
ऐ मुर्गे-गिरफ्तार ! खबरदार ! खबरदार !!

सैयादको लुट जानेका गो अपने खतर है ।
फिर भी तेरे पिजरेपै वही सख्त नजर है ॥
गुलशनमे जो होना है, वोह हो लेने दे इकबार ।
ऐ मुर्गे-गिरफ्तार ! खबरदार ! खबरदार !!

२० अगस्त १९५३ ई०]

# रम्ज

मुहम्मद रमजान 'रम्ज' छपरा (बिहार) के रहनेवाले है, और अदालतके किसी पदपर प्रतिष्ठित है। गम्भीर प्रकृतिके मिलनसार व्यक्ति है। मजाहिया रगमे शेर कहते है। लेकिन शक्लो-शबाहतसे यह अनुमान नही किया जा सकता कि ऐसी शान्त प्रकृतिका व्यक्ति भी जनताको हँसाते-हँसाते लोट-पोट कर सकता है।

आप अपने कलाममे केवल अग्रेजी काफियेका इस्तेमाल करके उसे हास्यमय बना देते है। वरना तमामका तमाम कलाम सजीदा-सा मालूम होता है, परन्तु काफियेका उपयोग होते ही हास्य प्रस्फुटित हो उठता है। सबसे पहले 'अकबर' इलाहाबादीने अपने कलाममे अग्रेजी शब्दोको समोकर मजाकका पहलू निकाला था। उसके बाद तो एक प्रथा-सी चल गई, परन्तु 'रम्ज'से पहलेके शायर अग्रेजी शब्द आवश्यकतानुसार शेरमे चाहे जहाँ समो देते थे, कोई बँधा हुआ नियम नही था। लेकिन 'रम्ज'की खूबी ये है कि आप केवल काफिया अग्रेजीमे रखते है और बाकी समूचे शेरमे उर्दू-शब्द होते है। मुशायरेका मिसरा तरह कैसा ही क्यो न हो, आप अपने मजाकके मुताबिक अग्रेजी काफिये ढूँढ निकालते है। और उन्ही काफियोको शेरमे रखकर हास्य बखेर देते है। काफियेके अतिरिक्त शेरमे और अग्रेजी शब्द इस्तेमाल नही करते।

आपकी चन्द गजले जनाव अताउल्लाह पालवीने जुलाई १९४५के 'शायर'में प्रकाशित कराई थी, उनमेसे चन्द यहाँ साभार दी जा रही है—

**है रकीबोसे तुम्हारे वास्ते फाइट[1] हनूज।**
**वायेनाकामी कि तै, पाया नहीं राइट[2] हनूज॥**

---

[1]लडाई, [2]अधिकार।

आपने सूरत बनाई है यह किसके सोग्रमें।
बाल हैं बिखरे हुए पोशाक है ह्वाइट[1] हनूज़ ॥
दर्दे-हिजराँके असर बाक़ी है अबतक जाने-जाँ !
फूलसे भी है यह जिस्मे-नातवाँ लाइट[2] हनूज़ ॥

कत्लकी धमकीसे कातिल मैं तो डर सकता नहीं।
देख ले है रिश्तये-उल्फत मेरा टाइट[3] हनूज़ ॥
शाम किये, शेवन किये, नाले किये, तारे गिने।
ख़त्म होनेपर न आई, हिज्रकी नाइट[4] हनूज़ ॥
उनको मेरी जाँनिसारीका भला क्यो हो यकी।
कहते हैं अपनी गलतफहमीको वोह राइट[5] हनूज़ ॥
इन बुतोके इश्कसे क्यो जी मेरा घबरा न जाय।
जानदें हम जिसपै वोह है 'काम'[6] और क्वाइट[7] हनूज़ ॥
बेकली हदसे बढी है, दम लबोपर आ गया।
'रम्ज़'की जानिब मगर तुमने न की साइट[8] हनूज़ ॥

उक्त गजलमे केवल अग्रेजीका काफिया रख देनेसे हास्यका फव्वारा छूटने लगता है, वरना पूरीकी पूरी गजल सजीदगी लिये हुए है। एक गज़ल और सुनिये—

उस शोखसे है मुझको मुहब्बत भी फीयर[9] भी।
अरमानके हमराह निकलते है टीअर[10] भी ॥
किस तरहसे मर जाऊँ मै उस परदानशींपर।
आँखोंसे जो है दूर तो है दिलके नीअर[11] भी।

---

[1]सफेद, [2]हलका, [3]मजबूत, दृढ, [4]रात्रि, [5]ठीक, [6]शान्त, [7]चुप, पूर्णतया; [8]दृष्टि, [9]भय, [10]आँसू, [11]समीप।

आये हो तो दो-चार घडी बैठके जाओ।
हाज़िर है तुम्हारे लिए मसनद भी चेअर[1] भी ॥
इस ढगके दिलबर तो ज़मानेमें बहुत है।
इस शक्लके इन्सान है दुनियामें रेअर[2] भी ॥
बेकार है उम्मीदे-वफा अहले-जफासे।
सीनेकी तरह चाक हुआ आज लेटर[3] भी ॥
सोज़े-गमे-उल्फतसे तो खुद जलता हूँ ऐ 'रम्ज़' !
और उसपै जलाती है मुझे और 'समर'[4] भी ॥

एक मुशायरेका मिसरा तरह था—

"शिकन बिस्तरकी कहती है कि दम निकला है मुश्किलसे"

काफिया मुश्किल, मुहमिल, वगैरह थे और रदीफ 'से'। रम्ज साहबने अपने मतलबके अंग्रेजी काफिये तलाश करके देखिये हास्यका क्या रग भरा है—

तकाज़ा जज़्बे-उल्फतका है यह रह-रहके पैडिलसे।
मेरी बालींपै उनको खींच ला तू आज साइकिलसे ॥
मेरी शीरीं दहन तेरे लबे-शीरीका क्या कहना ?
हलावत इसको गोया मिल गई है कल शुगरमिलसे[5] ॥
हसीनाने-जहाँ दिल लेके कितना ज़ुल्म करते है।
मगर क़ानून कुछ नाफिज़ नहीं होता है कौंसिलसे ॥
हमारी रहबरीको आये है, वाइज़ खुदाहाफिज़।
उन्हे तो काम है इसलामके परदेमें टायटिलसे[6] ॥

---

[1]कुर्सी, [2]दुर्लभ, असाधारण, [3]पत्र, [4]गरमी; [5]चीनीमिलसे, [6]उपाधिसे।

कहाँ मैं और कहाँ उनका हरीमेनाज़ ऐ हमदम !
मेरी तकदीर तो लिक्खी गई है, हार्ड पेन्सिलसे[1] ॥
शराबे-वस्ल हो या शर्बते-दीदार हासिल हो।
मरीजे-इश्क अच्छा हो नहीं सकता किसी पिलसे[2] ॥
कोई उल्फतमें मरना तेशये-फरहादसे सीखे।
सदाये आफरीं आती है, अबतक गोशये-हिलसे[3] ॥
ख़ुदाका क़हर है ऐ 'रम्ज़' गुरबतमें बुख़ार आया।
हरारत बढ़ गई है डाक्टरके दिलशिकन बिलसे ॥

एक मुशायरेकी तरह थी—

"निगारख़ाना नहीं है दुनिया, निगारकी कुछ ख़बर नहीं है"

काफिया ख़बर, नज़र वगैरह था और रदीफ 'नही है'। अब 'रम्ज़' साहबका कमाल देखिये—

पडा है किस मुखमसेमें[4] ज़ाहिद ! हीअर[5] नहीं है, देअर[6] नहीं है।
बताओ उस नाज़नींका जलवा, जहाँ नहीं है, वेअर[7] नहीं है ॥
न समझो आँसू जो बह रहा है, शकिस्ता दिलका मेरे पसीना।
यही है क़ल्बो-जिगरका टुकडा, यह कतरा हरगिज़ टीअर[8] नहीं है ॥
हमारी किश्तीके नाख़ुदाने, भँवरसे शर्ते-वफा है बाँधा।
किसीका ख़तरा हमें नही है, किसीसे हमको फीअर[9] नहीं है ॥
तुम्हारे हाथोसे पा रहे है, तुम्हारी महफिलमें जाम ऐवा[10] !
ज़लील महफिलमें सिर्फ हम है, हमारा कुछ भी शेअर[11] नहीं है।

---

[1]सख़्त पेसिलसे, [2]दवाकी टिकियासे, [3]पर्वतसे, [4]झगडेमें, बखेडेमे, [5]यहाँ, [6]वहाँ, [7]कहाँ, [8]आँसू, [9]भय, अन्देशा; [10]शत्रु, उदूका बहुवचन, [11]हिस्सा, भाग।

उड़ूसे बातें हो मुसकराकर, बना-बनाकर, चबा-चबाकर।
जो पूछें हम कुछ, बिगडके बोलो, तरीक़ा यह तो फेअर[1] नहीं है॥
तुम्हारे तर्ज़े-सितमके क़ुर्बां, तुम्हारे जोरो-जफाके सदके।
हमारी जां तो गरां नहीं है, हमारा सर तो डीअर[2] नही है॥
बेचारे जाहिदकी अहलियाने कहा यह इक दिन बिगडके उनसे।
"ज़रा तो सोचो, ज़रा तो समझो, हमारा कोई हीअर[3] नही है॥
मुक़ामे-इबरत है दहरे-फानी, पडे हैं जगलमें 'रम्ज़' अब वोह।
ज़माना घेरे हुए था जिनको, कोई अब उनके नीअर[4] नही है॥

एक मुशायरेका मिसरा तरह था—

"जवाबेख़त मुझे लिखता है वोह ख़ूने-कबूतरसे"

उसपर आपने यूं तबा आजमाई की है—

चला जब काम मिस्टरका ख़ुशामदसे न लेक्चरसे।
हुए इमदादके ख़्वाहाँ वोह बटलरसे, स्वीपरसे[5]॥
चले वोह दो क़दम और इक क़यामत हो गई बरपा।
सदाये अल्लामाँ आने लगी इक-एक क्वाटरसे॥

निफाक़ो-इफ्तराको बुग्जका आलम मुआज़ल्ला।
न बेटा बापसे ख़ुश है न भाई अपनी सिस्टरसे[6]॥
अदावतने जो ले ली है जगह महरो-मुहब्बतकी।
कोई नालाँ है अपनोसे कोई उलझा है नेबरसे[7]॥
वोह आये और हैं मसरूफे-गिरया मेरी मय्यतपर।
खडे नहला रहे हैं वोह मुझे आँखोके वाटरसे[8]॥

---

[1]स्वच्छ, [2]मूल्यवान, [3]उत्तराधिकारी, [4]समीप, [5]महतरसे; [6]बहनसे; [7]पडौसीसे, [8]पानीसे।

गरानीमें ग़रीबोंकी मदद होनी नहीं मुश्किल।
अगर हुक्काम कुछ लें काम, अपनी ख़ास पावरसे[1] ॥
जो हैं इस वक़्तकी दुश्वारियाँ यह दूर कर देंगे।
यही उम्मीद वासिक है 'उमर' जैसे कलक्टरसे ॥
जवाबे-ख़त मुझे ख़ूने-कबूतरसे वोह लिखते हैं।
मुझे वो भेजते हैं यूँ पयामे-मर्ग लेटरसे ॥
बसीरत शर्त है मस्तूर जलवा है हर इक शैमें।
नज़र आते हैं हमको 'रम्ज़' वोह हर एक 'पिक्चर'से[2] ॥
बड़े ही सगदिल होते हैं बुत राज़ी नहीं होते।
ख़ुशामदसे न मिन्नतसे, समाजतसे न टीअरसे[3] ॥

[1]अधिकारोंसे, [2]चित्रसे; [3]आँसूसे।

# 'फ़रहत' कानपुरी

[१९०५–१९५२ ई०]

श्री गगाधरनाथ 'फरहत'का जन्म १९०५ ई०मे कानपुरके एक प्रतिष्ठित कायस्थ परिवारमे हुआ । वकालत-पेशा आपके परिवारमे सात पुश्तसे चला आ रहा है । आपके पिता स्वर्गीय श्री विश्वम्भरनाथ निगम और बाबा रायसाहब देवीसहाय निगम कानपुर जिलेके प्रमुख वकीलोमे-से थे । कानपुर और इटावे ज़िलोमे आपकी जमीदारी थी ।

१९३० ई०मे आपने बी० ए० किया और उसी वर्ष असहयोग आन्दोलनमे छ मासको जेल गये । जेल जाते समय आप नगर काग्रेस कमेटी कानपुरके प्रधान मत्री थे । जेलमे आपका स्वास्थ्य खराब हो गया था । १९३२ ई०मे आपने प्रथम श्रेणीमे वकालत पास की । विद्यार्थी अवस्थामे आप लखनऊ विश्वविद्यालय यूनियनके अध्यक्ष तथा विश्व-विद्यालय पत्रिकाके सम्पादक भी रहे । १९३३ ई०से आपने कानपुरमे वकालत प्रारम्भ की और अल्पकालमे ही नगरके प्रसिद्ध वकीलोमे आपकी गणना होने लगी ।

शायरीकी ओर रुचि आपकी किशोरावस्थासे ही थी । आप नज़्म,

रुबाई, गज़ल, किते आदि कहनेमे बहुत अच्छा अभ्यास रखते थे। उर्दू-फारसीके विद्वान थे। भारतके प्रसिद्ध पत्रोमे आपका कलाम छपता रहता था। आपने 'देश' नामक पत्रका सम्पादन भी किया। मुशायरो और गोष्ठियोके आप प्राण थे।

एक सफल वकील और प्रतिभाशाली शायर होनेके अतिरिक्त सहृदय मानव थे। अपनी मेहमॉनवाजीके लिए मशहूर थे। खेद है कि हमे आपके परिचयका सौभाग्य प्राप्त न हो सका। हमारी 'शेरो-शायरी' और 'शेरोसुखन' भाग १ को देखकर आप बहुत प्रसन्न हुए थे। और श्री 'नाजुक' फरीदाबादी द्वारा आपने रुग्णशैय्यासे ही सन्देश भिजवाया था कि कानपुरमे जब भी जाऊँ, आपके यहाँ ही ठहरा करूँ। सयोगकी बात मै कानपुर गया भी, मगर कब ? जिस रोज अखबारमे आपकी मृत्युके दु खद समाचार छपे थे। अफसोस आपकी अर्थीको कन्धा देना भी मयस्सर न हुआ। आप मृत्युसे लडते रहे, लेकिन मनोव्यथा निकट सम्बन्धियोपर भी प्रकट न होने दी! होने भी कैसे देते। आपका कौल था—

**हर हालमें खुश रहना, खुश रहके अलम सहना।**
**एक चीज जमानेमें 'फरहत'की भी हस्ती है॥**

आपका ४७ वर्षकी आयुमे १६ अप्रेल १९५२को स्वर्गवास हो गया। आपके निधनसे उर्दू-ससार और कानपुरके सामाजिक जीवनको काफी क्षति पहुँची है। आपके निधनकी खबर 'जिगर' मुरादाबादीको जब लगी तो फरमाया—

**'दुनियासे एक इन्सान उठ गया'**

सचमुच 'फरहत' एक ऐसे नेक इन्सान थे। बकौल 'हाली'—

**फरिश्तेसे बहतर है इन्सान बनना।**
**मगर इसमें पडती है महनत जियादा॥**

श्री 'नाजुक' साहब फरीदाबादीके आग्रहपर 'फरहत' साहबके अनुज श्री० मायाप्रकाश साहब निगमने 'फरहत' साहबका कलाम चयन करके भेजनेकी कृपा की है, जिसका कुछ अश सधन्यवाद यहाँ दिया जा रहा है—

## खुद ऐतमादीकी दुआ

नज्मके इक्कीस अशआरमे-से सिर्फ ९ शेर दिये जा रहे है—

जिस जगह हिलने लगे ईमानकी बुनयादो बेख[1]।
उस जगह हो अपने अजमे-मुस्तकिलपर ऐतकाद[2]॥
यह नही ख्वाहिश कि पाऊँ दौलतो-मालो-मनाल[3]।
यह नही ख्वाहिश कि बढ जाये मेरा जाहो-जलाल[4]।
खुसरवी-ओ-कैसरीका[5] जिक्र वजहे-नग है।
हाँ मगर फैले न दुनियामे मेरा दस्ते-सवाल[6]॥

ऐ मेरे माबूद[7] मेरे हर गुनहकी दे सजा।
'फरहते'-नाचीजका सर माजरतमें मत झुका॥

घेर दे तारीकियोमें[8] शौकसे तू घेर दे।
रोशनीकी बरकतोकी सिम्त भी मुँह फेर दे॥

---

[1]नीव, जड, [2]महान दृढतापर विश्वास, [3]जागीर, [4]गौरव, प्रतिष्ठा, [5]बादशाहतका, [6]अभिलाषाका हाथ, [7]ईश्वर, [8]क्षमामे; [9]अँधेरोमे।

तलख़ियाँ[1] दे ताकि एहसासे-हलावत[2] भी तो हो।
सरदियाँ दे ताकि इमकाने-हरारत[3] भी तो हो॥
दर्दे-फुरक़त[4] दे, कि मिलनेका मज़ा मालूम हो।
कल्बे-अफसुर्दाको[5] खिलनेका मज़ा मालूम हो॥
गुमरहीदे[6], ताकि रगे-रहबरी[7] कायम रहे।
बदगी दे ताकि शाने-दावरी[8] दायम[9] रहे॥

ऐ मेरे माबूद मेरे हर गुनहकी दे सज़ा।
हाँ मगर मक़बूल हो ख़ुद ऐतमादीकी[10] दुआ।

रुबाइयात

६२मेसे २२ दी जा रही है—

तफरीहका सामान नहीं है कोई,
तसकीनका इमकान नही है कोई।
मरनेका यहाँ ख़ौफो-ख़तर है किसको,
जीनेका अरमान नही है कोई॥

मज़िल कैसी कयाम नामुमकिन है,
रस्तेमें कोई मुकाम नामुमकिन है।
है पाये तलबमें इतनी कूवत बाक़ी,
रुकनेका ख़याले-ख़ाम नामुमकिन है॥

---

[1]कडवाहट, [2]मिठासका आभास, [3]गरमियोका अस्तित्व मालूम दे, [4]विरह-व्यथा, [5]मुरझाये हुए हृदयको, [6]पथ भूलना, [7]पथ-प्रदर्शकका महत्त्व, [8]ईश्वरकी गरिमा, [9]स्थायी [10]आत्मविश्वासकी प्रार्थना।

कमबख़्त ज़रा सोच यह क्या करता है,
नाकामिये-क़िस्मतका गिला करता है।
पस्तीको भी मिलती बलदी लेकिन,
हर बातका इक वक्त हुआ करता है॥

अपना नही इर्फान[1] तौबा-तौबा,
इन्सान भी इन्सान है तौबा-तौबा।
हरचद तरक्क़ी तो बहुत की फिर भी,
दो पावोका हैवान है तौबा-तौबा॥

हरचद कि हुशियार है तौबा-तौबा,
खुद अक्ल ही बेकार है तौबा-तौबा।
इन्सानकी मजबूरिये-पैहमकी[2] कसम,
कहने ही को मुख़्तर है तौबा-तौबा॥

यह रीशो[3]-लबो-शराब तौबा तौबा,
ऐ शेख़! यह इनक़लाब[4] तौबा-तौबा।
वह दावये-पिदो-वाज[5] और यह जुरअत,
मैख़ानेमे है जनाब तौबा-तौबा॥

जन्नतकी ये बूदो-बाश तौबा-तौबा,
हूरोकी सदा तलाश तौबा-तौबा।
गिलमाँसे हम-आ-गोशिये पैहमकी हवस,
ऐ रिन्दे बदक़िमाश तौबा-तौबा॥

---

[1]ज्ञाता, स्वयको नही जानता, [2]सदाकी मजबूरियोकी; [3]सफेद दाढी; [4]परिवर्त्तन, [5]व्याख्यानदाता होनेका गर्व।

मज़हबसे न ईमानसे ख़तरा है बहुत ,
दुनियामें न शैतानसे ख़तरा है बहुत ।
सच पूछे जो मुझसे कोई 'फरहत' साहब ,
इन्सान को इन्सानसे ख़तरा है बहुत ।।

साकीका अगर एक इशारा हो जाय ,
कौनैनकी तलख़ी भी गवारा हो जाय ।
मरनेका मुझे ख़ौफ नही है ' फरहत' ,
जीनेका मगर कोई सहारा हो जाय ।।

दिलका रुतबा किसीको मालूम नही ,
गमका दर्जा किसीको मालूम नहीं ।
मीयार जुदा-जुदा है सबका 'फरहत' ,
उलफत है क्या किसीको मालूम नही ।।

मन्दिरमें बुतोकी सब फज़ीलत देखी ,
मसजिदमें ख़ुदाकी भी हकीकत देखी ।
कितने गुमराह हैं बिरहमन और शेख़ ,
मैने दोनो ही की जहालत देखी ।।

तक़दीरसे तदबीरकी तकदीर न पूछ ,
यह राज़ है,इस राज़की तफसीर न पूछ ।
कहते हैं जिसे हयाते-इन्सां 'फरहत' ,
इक ख़्वाब है,इस ख़्वाबकी ताबीर न पूछ ।।

मायूसिये-मुस्तक़िलसे डरना कैसा ,
बातिलमें सदाकतसे मुकरना कैसा ।

ख़तरातसे डरके तर्के-मंजिल 'फरहत',
यह ऐने-हयातमें मरना कैसा ॥

आ जा मेरी माबूदे-जवानी आ जा,
ऐ माजिये-पुरकैफकी रानी आ जा।
छा जा मेरी हस्तीपै घटाकी मानिन्द,
ऐ अहदे-जवानीकी कहानी आ जा ॥

साकीके लबोपर वोह तबस्सुम झलका,
दरियामें तमव्वुज-सा है हलका-हलका।
अब ऐसेमें तौबाकी भी कुछ ख़ैर नही,
छीटा दे लूँगा मयमें गगाजलका ॥

है मुझको मुनासिबत कुछ ऐसी मयसे,
लौ दिलको लगी हो आशिकीकी जैसे।
तौबा तो हज़ार बार करलूँ 'फरहत',
जो ख़ून लगा है मुँहको छूटे कैसे ॥

मजदूरका मजदूरसे डरना बेसूद,
माजूरका-माजूरसे डरना बेसूद।
मजबूरसे मुख्तारका डरना है बजा,
मुख्तारसे मजबूरका डरना बेसूद ॥

अब कहत है, या भूक है, नादारी है,
गल्लेकी दूकान है तो, सरकारी है।
मिलता ही नही नमक भी ढूँढनेसे कही,
मक़बूल रियायाकी नमक ख़ारी है ॥

औरोंपर जब एतराज़ कर जाता हूँ,
मौत आये न आये मैं तो मर जाता हूँ।
दुनियाके गुनहपै कौन उठाये उँगली,
अपने ही गुनाहोंसे डर जाता हूँ॥

कलतक जो मनाज़िर थे ये फीके-फीके,
हम करते भी क्या ज़ख्मे-जिगरको सीके।
तुम आये तो झूम उठी है डाली-डाली,
जैसे कोई दोशीज़ा चली हो पीके॥

माना कि है दुख-दर्द हमारा भी बहुत,
एहसान मेरे सर है तुम्हारा भी बहुत।
वादा न सही वाद-ये-वादा ही सही,
बहतेको है तिनकेका सहारा भी बहुत॥

तेरी जन्नत तुझे मुबारक या रब!
तेरी नेमत तुझे मुबारक या रब!
मुझको तो मिली मेरे गुनाहोंकी सज़ा,
तेरी रहमत तुझे मुबारक या रब!

चन्द गज़लोंके शेर

दिलके आईनेकी सब गर्द साफ हो गई।
मिट गईं कुदूरतें वोह जो मुसकरा दिया॥
बार-बार तोड़कर बार-बार जोड़कर।
रिश्तये-खुलूसको खेल ही बना दिया॥

इश्ककी हस्ती भी क्या है?
एक इशारा सो मुबहम।

हुस्नकी साथी कुल दुनिया।
इश्कका रक्खे कौन भरम ?
इश्कका असली नाम जुनूं।
दख़्ले-ख़िरद है 'फरहत' कम ॥

घट चली क्यो निगाहे-करम सच बता।
दर्दे-उल्फतमे शायद कमी आ चली ॥
जब निगाहोमे गुलशन समाने लगा।
खारो-खसमे भी दोशीज़गी आ चली ॥

दिलकी बाज़ी है जानकी बाज़ी।
दिल लगाना कोई मज़ाक नही ॥

न मै शेखो-मुरशिदो-पीर हूँ, न लकीर ही का फकीर हूँ।
मै मिलूँगा अपनी ही राहपर, कि वतनका कल्बो-ज़मीर हूँ ॥

तकसीमे-वतन तोहफये-बिरटिश था सरासर।
यह राज न समझा कोई अफसोस सद अफसोस ॥

चन्द किते

लगते ही आँख अहदे-जवानी गुज़र गया।
झोका नसीमका इधर आया उधर गया ॥
'फरहत' कि जिसके दमसे था हगामये-हयात।
सुनते है वोह गरीब तेरे गममें मर गया ॥

कुछ ऐसी बहकी-बहकी-सी बातें है शेखकी।
कहनेको आदमी है, मगर खा गया है घाँस ॥

अब लीडरोंकी बातें भी ऐसी हैं इन दिनों।
कानून ऐसे बनते हैं, जैसे कि ठूँस-ठाँस॥
बैलोंके आगे रखके चलाते हैं गाड़ियाँ।
कहते हैं खेत बोइये मिलती नहीं है पाँस॥
अल किस्सा बात ये है कि बँगलेके इर्द-गिर्द।
गल्ला अगर न बो सकें 'फरहत' तो बोये बाँस॥

न खानेको रोटी, न कपड़ा बदनको।
दुआये दिये जाओ अहले वतनको॥
कभी रंग लायेगा, खूने-शहीदाँ।
अभी और खींचो, लहूसे चमनको॥
अभी और सँवरी रहे तिरछी टोपी।
वतन खूब समझेगा इस बाँकपनको॥
इधर कैदे-खद्दर उधर सूत मिलका।
दो रंगीमें रक्खोगे कबतक वतनको?
न लट्ठा मयस्सर, न गबरून हासिल।
तलब कौन करता है अब गुलबदनको॥
हमारा लहू रंग लाया है 'फरहत'!
हमीसे मिला था लहू इस चमनको॥

२० जून १९५३ ई०]

# माहिर-उल-क़ादिरी

'जज़्बाते माहिर' और 'महसूसातेमाहिर' दो सकलन माहिर साहबके हमारे समक्ष है। पहलेमे १३१ पृष्ठोमे आपकी नज्मे और गजले है दूसरेमे १६० पृष्ठोमे ५८ नज्मे और ६६ गजले है। प्रथम सकलनमे ३८ और द्वितीयसे ३६ अशआर पेश किये जा रहे है। आपका परिचय न तो आपकी उक्त दोनो पुस्तकोमे मिला और न हमे कही और्रसे प्राप्त हो सका। आप इस युगके अच्छे शायरोमे-से एक है, और पाकिस्तान बननेके बाद करांची रहने लगे है।

उस शोख़की[1] अदाये-तगाफुलको[2] क्या कहूँ ?
वादेका[3] ज़िक्र आते ही अनजान हो गया ॥

न गमख़्वारोका[4] अहसाँ है, न गैरोकी[5] शिकायत है।
वही ले-देके इक दिल था जो हर मौकेपै काम आया ॥

हर चीज़ अपनी-अपनी जगहपर है कामयाब[6]।
ज़र्रे[7] भी बेमिसाल, सितारे[8] भी लाजवाब ॥

---

[1]चचल प्रेयसीकी, [2]उपेक्षाभरी अदाये, [3]दिये हुए वचनोका; [4]सहानुभूतिकर्त्ताओका, [5]शत्रुओकी, [6]सफल, पूर्ण, [7]धूल-कण, [8]तारे।

हमनशीं[1] ! कुजे-कफसमें[2] मुतमइन[3] होकर न रह।
वरना हर्फ[4] आयेगा तेरी जुरअते-परवाजपर[5] ॥

यास[6] है काफरीका दूसरा नाम।
हिम्मते-सईए-रायगाँकी[7] कसम ॥

पैमाँ शिकन बुतोकी[8] अल्लाहरे अदायें।
लफ्जोको याद रखकर मफहूम[9] भूल जायें ॥
दर्दो-अलम[10] सकूँकी[11] हदसे गुजर चुके हैं।
अब आप दर्देदिलकी तस्कीनको[12] न आयें ॥

तू कि अफसोसो-नदामतके[13] सिवा सब कुछ है।
मैं कि अफसोसो-नदामतके सिवा कुछ भी नहीं ॥

मैं हुस्नके हर जुल्मको, हर जौरको[14] सहकर।
औरोके लिए हुस्नको आसान बना दूँ ॥

आपकी हश्रखिरामीमें[15] कमी क्यो आये ?
कोई पामाल[16] जो होता है तो हो जाने दो ॥
हमदमो[17] जिक्रे-तमन्नाके[18] लिए यह उजलत[19]।
उनके बिखरे हुए गेसू[20] तो सँवर जाने दो ॥

---

[1]पडौसी, [2]पिजरेके कोनेमे निश्चिन्त, [3]लाछन, [4]उडनकी क्षमतापर, [5]निराशा, [6]असफलतामे भी साहस रखना, [7]वायदा भूल जानेवाले प्रेम-पात्रोकी, [8]तात्पर्य्य, [9]दुख, [10]चैनकी, [11]शान्ति देनेको, [12]खेद और बदनामीके, [13]ज़बर्दस्ती, [14]प्रलयकारी चालमे, [15]मिटता, [16]साथियो, [17]मनकी बात कहनेको, [18]इतनी शीघ्रता, बेचैनी, [19]बाल।

सरबस्ता इक फरेब है दुनियाये आबो-गिल।
हर शयको उसकी जाहिरी हदसे बचाके देख॥

जरा दरियाकी तहतक तू पहुँच जानेकी हिम्मत कर।
तो फिर ऐ डूबनेवाले किनारा ही किनारा है॥

जो मानूसे[1]-मिजाजे-हुस्न हो उसके लिए 'माहिर'!
तगाफुल ही तवज्जह है, सितम ही महरबानी है॥

लज्जते-जौके-वफासे[2] फितरतन महरूम है।
हुस्न कहते है जिसे, जालिम नही, मजलूम[3] है॥

यूँ कर रहा हूँ उनकी मुहब्बतके तजकरे[4]।
जैसे कि उनसे मेरी बडी रस्मो-राह थी॥
महशरमे एक हर्फ भी कोई न कह सका।
उनके सितमकी गर्चे खुदाई गवाह थी॥

आरजूये-मर्गमे[6] भी है सकूने-दिल[7] निहाँ[8]।
हर खुशीसे इश्कको महरूम[9] होना चाहिए॥
शिकवये-बेदाद[10] भी है इक तरहका इन्तकाम[11]।
इश्कको मजलूम[12] ही मजलूम रहना चाहिए॥

मै समझता हूँ वोह पामाले-गम[13] अच्छा ही रहा।
जिसपै ऐ दोस्त! तेरी चश्मे-इनायत[14] न रही॥

---

[1]परिचित, नेकीके आनदमे, [3]अत्याचार पीडित, [4]उल्लेख, [5]जनता, [6]मृत्युकी कामनामे, [7]दिलका चैन, [8]छिपा हुआ, [9]रहित, [10]अत्याचारोकी शिकायत, [11]बदला, [12]अत्अयाचार पीडित, [13]गमो द्वारा मिटाया हुआ, [14]कृपादृष्टि।

यह तो सब सच है आप मुझपर करम[1] फरमायेंगे
लेकिन इतना ध्यान रहे, लोग बहुत बहकायेंगे
रुसवाई[2] बेकार नही, नाकामी काम आयेंगी।
इन्ही चन्द लकीरोसे अफसाने बन जायेंगे॥
उसने आनेवालोका बढकर इस्तकबाल[3] किया।
शमअको यह मालूम न था परवाने जल जायेंगे॥

हमनशीं[4] ! शायद चमनमें आनेवाली है बहार।
बिजलियोंकी जदमे है इक शाख मुरझाई हुई॥

मै वोह कि तुमको सौंप दिये जानो-दिल तमाम।
तुम वोह कि तुमसे मुझको तसल्ली न दी गई॥

बिजली कभी चमकी, कभी गुलचीं नजर आया।
जबतक मै नशेमनमें हूँ सौ तरहका डर है॥

शिकस्तोपर शिकस्तें खा रहा है रज्मे-हस्तीमें[5]।
मगर इन्सॉकी खुदबीनी[6], खुदआराई नही जाती॥

हस्तिये-इन्सां भी क्या अल्लाहोअकबर चीज है।
इक मुअम्मा[7] है कि सारी उम्र समझा कीजिये॥

बाबे-जिन्दा[8] बन्द, गुलशन दूर, जख्मी बालो-पर।
कूव्वते-परवाज[9] फिर भी आजमानी चाहिए॥

---

[1]महरबानी, [2]बदनामी, [3]स्वागत, [4]पडौसी, [5]जीवन-सग्राममे; [6]अहमन्यता; [7]पहेली, गुत्थी, [8]बन्दीगृहका द्वार, [9]उडनेकी शक्ति।

जब अज़लके[1] रोज़ तकदीरें रक़म[2] होने लगीं।
एक इक ज़र्रा पुकार उट्ठा "जवानी चाहिए"॥
मुझको घर बैठे मयस्सर हैं बहारें ख़ुल्दकी[3]।
ऐ ख़याले-यार तेरी महरबानी चाहिए॥

अल्लाह वोह घड़ी न दिखाये कि हिज्रमें।
कहना पड़े कि दर्दे-मुहब्बत अज़ाब है॥

कहीं नाकामियोंसे हौसले भी पस्त होते हैं।
मुझे अफसोस तुझपर हिम्मते-मरदाना आता है॥

पुतलियाँ आखिरी गर्दिशमें हैं अब भी आ जाओ।
रस्म-की-रस्म तमाशे-का-तमाशा भी है॥

दिल मुझे बख़्शा गया था तेरी उल्फतके लिए।
तेरा दीवाना न बनता मैं कोई दीवाना था॥

आ मैं तुझे बता दूँ राज़े-गमे-मुहब्बत[4]।
अहसासे-आरज़ू[5] ही तकमीले,-आरज़ू[6] है॥

हम डूबनेवाले, मौजोंकी तौहीन गवारा क्या करते?
कश्तीका सहारा क्यों लेते, साहिलकी[7] तमन्ना क्या करते॥
बिजलीकी चमक, बादलकी गरज, पुरज़ोर हवा तारीकफिज़ा[8]।
ख़ुद आग नशेमनको दे दी, तिनकोंपै भरोसा क्या करते?

---

[1]सृष्टिके प्रारम्भमें, [2]लिखी जाने लगी, [3]जन्नतकी, [4]प्रेमके दुःखका भेद, [5]इच्छाकी भावना, [6]इच्छाओंकी अधिकता, [7]किनारेकी, [8]अँधेरा वातावरण।

आपके गमकी महरबानीसे।
दिल है बेजार[1] शादमानीसे[2] ॥
मैं तो क्या हश्र माँगता है पनाह।
यह तेरी उठती हुई जवानीसे ॥
ले लिया है फिज़ाए-महशरने[3]।
एक टुकडा मेरी कहानीसे ॥
दिल है बेचैन रात-दिन 'माहिर'।
फायदा ऐसी ज़िन्दगानीसे ?

ऐ बादे-चमन[4] तुझको न आना था कफसमे।
तूने तो मेरी कैदकी मीयाद बढा दी ॥
वोह चैनसे बैठे है, मेरे दिलको मिटाकर।
यह भी नही अहसास कि क्या चीज़ मिटा दी ॥

मैं कायल हूँ दैरो-हरमका[5] भी लेकिन--
तेरा आस्ताँ फिर तेरा आस्ताँ है ॥
मुहब्बतके रहरवको[6] तनहा न समझो।
तलब[7] राहबर[8] है, जुनूँ[9] पासबाँ[10] है ॥

ऐशो-गमसे फराग[11] हासिल है।
बेहिसी[12] पूजनेके काबिल है ॥

दिल तमन्नासे है कितना बेज़ार।
ठोकरे खाके समझ आई है ॥

---

[1]बेचैन, [2]खुशीसे, [3]कयामतके वातावरणने, [4]उद्यानकी हवा, [5]मन्दिर-मसजिदका, [6]यात्रीको, [7]इच्छा, [8]पथ-प्रदर्शक, [9]उन्माद, [10]रक्षक, [11]छुटकारा, [12]अकर्मण्यता।

दीदके[1] क़ाबिल मरीज़े-हिज्रका[2] अजाम है।
जानिबे-दर[3] है नज़र लबपर किसीका नाम है॥
हमनशीं[4]! मुझको नहीं राहतसे[5] कोई दुश्मनी।
दिलको क्या कहिये कि ज़ालिम ख़ूगरे-आलाम[6] है॥

चमनमें सोग है उस बदनसीब ग़ुंचेका।
जो एक रात भी जी भरके मुसकरा न सका॥
तेरे शबाबका आलम अरे ख़ुदाकी पनाह।
वोह जोश था कि जिसे तू भी ख़ुद दबा न सका॥
ज़मानाभरको तबाहो-ख़राब कर डाला।
तेरी नज़रपै मगर कोई हर्फ़ आ न सका॥

दिल दिया, दिलको लज़्ज़ते-ग़म दी।
सारी आफत मुझीपै डाल गये॥
अपनी इक-इक अदाकी चाही दाद।
मेरी बातें हँसीमें टाल गये॥
इस अदासे वोह बेनकाब हुए।
एक परदा नज़रपै डाल गये॥

तेरे होटोंपै हलकी-सी हँसी मालूम होती है।
मुझे सचमुच बनफ़्शेकी कली मालूम होती है॥
जो तुमसे हो सके तो सिर्फ दमभरको ठहर जाओ।
मुझे यह साँस शायद आख़िरी मालूम होती है॥

---

[1]देखने योग्य, [2]विरह-पीडितका, [3]द्वारकी ओर, [4]पडौसी; [5]चैनसे, [6]दु खोका अभ्यस्त।

उस वक्त वोह फरमायेंगे तकलीफे-मदावा[1]।
जब दर्द मेरा काबिले-दरमाँ[2] न रहेगा॥
दिल ही से है वाबस्ता[3] यह हगामये-हस्ती[4]।
डूबा यह सफीना[5] तो यह तूफाँ न रहेगा॥

दर्द ही अब है ज़िन्दगी दिलकी।
ज़हमते-चारागरको[6] क्या कहिये॥

जब उनको मुझे अपनी महफिलमें बुलाना था।
पहले मेरी नजरोको आदाब सिखा देते॥

खुदा करे कि न कम हो बहारे-मैखाना।
यह बज्म वोह है, जहाँ बिन बुलाये जाते है॥

मैने कुछ फितरत ही पाई है अजब मुश्किल पसन्द।
मेरी हर मुश्किलको मुश्किलतर बनाते जाइए॥

मज़िलमें मुहब्बतकी हस्ती ही रुकावट है।
कल बज्ममें कहता था जलता हुआ परवाना॥

मेरे हाले-दिलकी किस सूरतसे रुसवाई हुई।
रोक ली ज़ालिमने होटोपर हँसी आई हुई॥

याद जब ऐय्यामे-रफ्ताकी कहानी आ गई।
देखता क्या हूँ कि हर शयपै जवानी आ गई॥

---

[1]चिकित्सा करनेका कष्ट, [2]इलाजके योग्य, सम्बन्धित, [3]ज़िन्दगीका जोर-शोर, [4]नौका, [5]चिकित्सककी परेशानीको।

अब उनका इन्तख़ाब[1] करेगा यह फ़ैसला।
उल्फ़त बुलन्द है कि तमन्ना बुलन्द है॥

उसके ही तसव्वुरमें[2] है अश्कोकी रवानी[3]।
जो एक तबस्सुममें[4] ज़मानेको हँसा दे॥

खुद्दारिये-कमालकी[5] रुसवाइयाँ[6] न पूछ।
बाज़ारे-जिन्दगीमें है 'माहिर' हुनर-फरोश[7]॥

आहपर ख़फ़गी नही है बेसबब।
बातकी समझी गईं गहराइयाँ॥

वोह भरी बज़्ममें आये है जो पैमाना बकफ़।
शेख़ भी साक़िये-मयख़ाना हुआ जाता है॥

पुतलियोकी आख़िरी गरदिशकी साअत आ गई।
आनेवाले! आ मैं कबतक रास्ता देखा करूँ?

तकमीले-आशिक़ीकी[8] बस दो ही सूरतें है।
महवे-नियाज़[9] बन जा, या बेनियाज़[10] हो जा॥

४ फरवरी १९५३ ई०]

---

[1]चुनाव, [2]ध्यानमे; [3]बहाव, [4]मुसकानमे, [5]हुनरके स्वाभिमानकी [6]बदनामियाँ [7]हुनर को बेचता है, [8]प्रेमाशक्ति-चरमसीमाकी, [9]नम्रताम लीन, [10]अभिलाषाओका त्यागी।

# 'शौकत' थानवी

शौकत थानवी साहब उर्दके ख्यातिप्राप्त परिहास-लेखक हैं। आपकी कई पुस्तके हिन्दीमे भी अनूदित हो चुकी है। शायरीमे आप 'आसी' उलदनीके[1] शिष्य है और गजल व्यगात्मक न कहकर सजीदा कहते है। पहले आप लखनऊमे रहते थे। पाकिस्तान बननेके बाद लाहौर चले गये है। वहाँ सम्भवत आप रेडियो विभागमे पब्लिसिटी-विभागको देखते है। आपका लिखा 'काजीजी' परिहास रूपक हर सोमवारको लाहौर रेडियोसे प्रसारित होता रहता है।

**इस हदपै है जो कुफ्र तो अब क्या कहे इसे।**
**इसियाँ[2] मेरी निगाहमें इसियाँ नही रहा॥**

**खुदाई है खुदाकी, खाकसे इन्सां बना देना।**
**तुम्हारा खेल है इन्साँको मिट्टीमें मिला देना॥**

**यही मानी है ऐ 'शौकत'! बुलन्दो-पस्तके शायद।**
**निगाहोपै चढाना और नजरोसे गिरा देना॥**

---

[1]आपका परिचय चौथे भागमे देखिये; [2]पाप।

हविस[1] जिसको सिखा दे तालिबे-दीदार[2] हो जाना।
उसे क्या आयगा महवे-ख़यालेयार हो जाना॥

उठाये दस्ते-दुआ ऐसे वक्तमें मैंने।
जब इक जहाँकी दुआओंसे हाथ उठाना था॥

वोह किस ख़तापै हुए दुश्मनीको आमादा।
उन्हे तो मैंने कभी दोस्त भी न जाना था॥

गिला है किश्तिये-उम्रे-रवाँसे[3] ऐ 'शौकत'!
बची वहाँसे जहाँ उसको डूब जाना था॥

कहाँ तासीरका[4] पहलू, कहाँ वोह दास्ताँ अपनी।
तुम्हारी महरबानी थी, मेरा हुस्ने-बयाँ[5] क्या था॥

कभी बिजली, कभी गुलची, कभी सैयादकी नजरें।
गुजरगाहे-हवादस[6] था, हमारा आशियाँ क्या था॥
चला हूँ सैकडो आलाम[7] लेकर दारे-फानीसे[8]।
बजुज़ नाकामियोंके[9] और ऐ 'शौकत' यहाँ क्या था॥

जान दे देंगे हम ऐ हिम्मते-दुश्वारपसन्द!
मरज़े-इश्क अगर काबिले-दरमाँ[10] निकला॥
एक हालतमें बसर उम्र न हो सकती थी।
ऐश भी दर्दका शर्मिन्दये-अहसाँ निकला॥

---

[1]तृष्णा; [2]देखनेका अभिलाषी; बहती हुई जीवन नौका, [3]असरका, [4]कहनेका सुरुचिपूर्ण ढग, [5]बलाओंका मार्ग, [6]मुसीबते, [7]असार ससारसे, [8]असफलताओंके अतिरिक्त, [9]इलाजके योग्य।

मौत बरहक थी मगर काश न आती शबे-गम।
यह तो कहनेको न होता कि इक अरमाँ निकला॥

रज क़िस्मतसे मेरी राहतमें शामिल हो गया।
इनकलाबोकी हवासे दर्द ही दिल हो गया॥
दर्द क्या जाता दमे-आख़िर तसल्लीसे मगर।
जिन्दगानीमें सकूने-मौत[1] शामिल हो गया॥

वोह और उनसे तजदीदे-अहले-तमन्ना[2]।
कोई फिर तबाहीका सामान होगा॥
जहाँतक तुम्हारी इनायत बढेगी।
वहीतक तबाहीका इमकान[3] होगा॥

यह सच है एक हालतपर कभी दुनिया नही रहती।
क़फसको आज हम तरजीह देते है गुलिस्ताँपर॥
अदमका ख्वाब[4], मदफनका सकूँ[5], दुनियाकी बेदारी।
ख़ुदा मालूम कितनी हालतें गुजरी है इन्साँपर॥
न बनवाता यहाँ कोई मेरी तुरबत तो अच्छा था।
यह धब्बा रह गया 'शौकत'! जमीने-कूए-जानाँपर[6]॥

इन सजदारेज़ियोका वोह दौर आ रहा है।
जब बन्दगी करेगी सजदे मेरी जबीपर[7]॥
अजाम-बीनियोने ज़ाहिदको खोके छोडा।
बरबाद कर दी दुनिया सारी उमीदे-दींपर॥

---

[1]मौतका चैन, [2]इच्छाओकी पूर्ति, [3]सम्भावना, [4]परलोकका स्वप्न, [5]कब्रकी शान्ति, [6]प्रेयसीकी गलीमे, [7]मस्तकपर।

वोह आफताबे-ताबाँ[1] दुनिया है जिससे रोशन।
इक दागेमासियत[2] है इफलाककी[3] जबीपर[4] ॥
मतलब परस्त दुनिया बदज़न[5] बना गई है।
रहज़नका[6] अब गुमाँ[7] है हर अपने हमनशीपर[8] ॥

कर दिया तूने बेनियाज़े-विसाल।
ऐ गमे-हिज्र! तेरी उम्र-दराज़[9] ॥
मेरी किस्मतके पेचो-ख़म निकले।
मेरे रौंदे हुए नशेबो-फराज़[10] ॥
खो न दें मुझको दैरो-हरम।
तू कहाँ है कहोसे दे आवाज़ ॥

तासीर ही बयाँमे न हो जब तो क्या करें?
क्या अपना हाल उनको सुनाता नही हूँ मैं ॥
इतना ख़याले-दोस्तने बेख़ुद बना दिया।
पहरो अब अपने होशमें आता नही हूँ मैं ॥
क्या हँस रहे है मेरी हँसीपर सब ऐ जुनूँ!
क्या काबिले-मसर्रते-दुनिया[11] नही हूँ मैं ॥
मायूस हो चले हैं मलामतगराने-इश्क[12]।
वोह वक्त है कि बात समझता नहीं हूँ मैं ॥

खो दिया है जब्ते-गमने, आशिकीका एतबार।
आजतक वोह यह समझते है कि अरमाँ कुछ नहीं ॥

---

[1]प्रकाशमान सूर्य्य, [2]पापोका धब्बा, पाप-चिह्न, [3]आकाशकी, [4]मस्तकपर, [5]अविश्वासी, [6]लुटेरेका, [7]शक, [8]साथीपर, मिलनसे उदासीन, [9]लम्बी आयु हो, [10]उत्थान-पतन, [11]ससार सुखके योग्य, [12]प्रेमकी बुराई करनेवाले।

गुलिस्ताने-हयाते-चन्दरोज़ाका[1] न सुन किस्सा।
बहार आई थी बरसोमें ख़िज़ाँ आई घडीभरमें॥

हरगिज़ फरेबे-रगे-मसर्रत[2] न खाइये।
यह गमका नाम है, यह हक़ीकी खुशी नहीं॥

भुला दिया है ख़ुदीने मेरी मुझे 'शौकत'!
इसी सबबसे ख़ुदीको भुला रहा हूँ मैं॥

मैं तेरा बन्दा हूँ लेकिन बन्दगीसे बे-नियाज़[3]।
तू ख़ुदा है और ख़ुदा होकर भी तू गाफिल नही॥

यह इक तुम हो कि हमको नगे-महफिल कहते जाते हो।
और इक हम हैं कि तुमको ज़ीनते-महफिल समझते हैं॥

यह हस्ती-ओ-अदम[4] क्यो हो? फना[5] क्यो हो, बका[6] क्यो हो।
तुम्ही-तुम हो तो फिर दिलमे ख़याले-मासिवा[7] क्यो हो॥

या तूले-रहे-गममें[8] तख़फीफ[9] नुमायाँ[10] कर।
या मुझको सम्भाले रह ऐ हिम्मते-मरदाना!

जनाबे शेख़! अच्छा आप जाते हैं ख़ुदा हाफिज़।
मेरा ईमाँ भी लेते जाइयेगा ताके-निसयाँसे[11]॥

जब वस्लो-जुदाईमें तमीज़ नही रहती।
तब जाके कही तेरा जलवा नज़र आता है॥

---

[1]क्षणिक जीवनरूपी उद्यानका, [2]खुशीका फरेब, [3]बेपरवाह, [4]जीवन-परलोक, [5]मृत्यु, [6]जिन्दगी, [7]तुम्हारे अतिरिक्त, [8]गमोकी लम्बी राहमे, [9-10]कमीकर, [11]जिसे आलेमे रखकर भूल गया था।

आस्माँके जुल्म, उनके जौर, बल तकदीरके।
आजएर क्या मुनहसिर है उम्रभर देखा किये॥

सबकी हिम्मत बडी है मुश्किलाते-जीस्तसे[1]।
मौतको भी जिन्दगी कहकर गवारा कीजिये॥
देखना उनका जो ना मुमकिन हो 'शौकत'! उम्रभर।
आप उनके देखनेवालोको देखा कीजिये॥

इतना नही अल्लाहका बन्दा कोई 'शौकत'!
मसजिदमे जो एक छोटा-सा मयखाना बना दें॥

मै बेकरार हूँ, इससे मुझे करार तो है
वह खुद नही है, मगर उनका इन्तजार तो है।
खुदी[2] बुरी है खुदाका मगर विकार[3] तो है।
नही बुलन्दिये-मेम्बर उरूजे-दार[4] तो है॥

गरीके-बहरे-फना हूँ मगर करार तो है।
सफीना दामने-साहिलसे हमकनार तो है॥

परवाये-कुफ्र है न गमें-बन्दगी मुझे।
अब मै कहाँ हूँ कुछ तो बता बेखुदी मुझे॥
ऐ बेखुदी-ए-शौक! कहाँ ले चली मुझे?
अब मै कहाँ हूँ कुछ तो बता बेखुदी मुझे॥

ऐ बेखुदी-ए-शौक! कहाँ ले चली मुझे?
अब ढूँढती फिरेगी मेरी बन्दगी मुझे॥

---

[1]जीवनकी कठिनाइयोसे, [2]अहमन्यता, [3]गौरव, [4]मसजिदके मचपर न सही, [4]सूलीकी ऊँचाईपर तो है।

अव्वल तो वहम है मेरा दुनिया ही कुछ नहीं।
और है अगर तो वह नहीं पहचानती मुझे ॥

हिस्सेमें मेरे कूचये-जानाँकी ज़मी है।
बिस्तर भी यहीं था, मेरी तुरबत भी यहीं है ॥

क्यों अपनी तरफ बर्कको ख़ुद ही न बुलाऊँ ?
जब मुझको नशेमनकी[1] तबाहीका यक़ीं है ॥

हाँ मेरा हाल मुझसे बयाँ कर दे चारागर[2] !
बाकी नहीं है ख़ुद ही उमीदे-शफा[3] मुझे ॥

रूह भी फूँकें तने बेजाँमें हम तो कुछ नहीं।
तुम किसीको मार भी डालो तो वोह एजाज़ है ॥

जिनकी ख़्वाहिश है कि मैं हुश्यार हो जाऊँ ज़रा।
काश वोह भी दो घडी बेहोश होकर देखते ॥

हमें दैरो-हरममें क़ैद रक्खा बदनसीबीने।
जहाँ सजदेकी गुंजाइश न थी सजदा वहाँ करते ॥

बुतकदा उजडा था शौकत ! सिर्फ काबेके लिए।
बुतकदा काबेमें अब तैयार करना चाहिए ॥

जिसने तुम्हे हसीन बनाकर दिखा दिया।
हम उस नज़रका हुस्ने-नज़र देखते रहें ॥

२० जनवरी १९५३ ई०]

---

[1]घोसलेकी, [2]चिकित्सक, [3]आराम होनेकी आशा, [4]शौकत थानवी साहबकी 'गुहरस्तान'मे ६२० अशआर हैं, जिनमेसे उक्त ६० शे चुनकर दिये गये हैं।

# 'बहज़ाद' लखनवी

हमे खेद है कि हम 'बहजाद' लखनवी साहबका परिचय नही दे पाये है और इस लाचारीका कारण यही है कि आपका परिचय न तो आपकी पुस्तकमे मिला और न हमारे पास आनेवाले पत्र-पत्रिकाओमे। आप अर्सेसे दिल्ली रहते है। १५-२० वर्ष पूर्व हमने कई मुशायरोमे आपको सुना है। तरन्नुमसे गजल पढते है, और अच्छा कहते है। जोशे-जुनूंका यह आलम होता है कि आप कमीज नही पहन सकते। पहना देनेपर फाड डालते है, और गलेमे सूतकी एक ढीली सुतली पडी रहती है। जिमे आप कमीजका गरेबान तसव्वुर करके दोनो हाथोसे फाडते रहनेका प्रयत्न करते रहते है। साथ ही गजल भी आकर्षक ढगसे पढते रहने है। आपको देखकर यकीन हो जाता है कि कभी मजनूं भी इसी तरह कुरतेका गरेबान फाडा करता होगा।

हजरते बहजादकी 'चरागेतूर' चौथी कृति हमारे सामने है। यह साकी बुकडिपो देहलीसे प्रकाशित हुई है। नातिया गजले, नज़्म और गीतोके अतिरिक्त १३०के करीब गजले है, उन्हीमेसे चन्द शेर दिये जा रहे है।

ग़मकी मसर्रतोंकी तरहसे है आरज़ी
मायूसे-ग़मको लज़्ज़ते-कामिल न मिल सकी ।।

भला और क्या होगी मैराजे-उल्फत ?
तेरी हर जफाको वफा कह रहा हूँ ।

उफ जुस्तजूमे भी न गई अपनी बेखुदी ।
'बहज़ाद' हम चले तो पसे-कारवा रहे ।।

हमें याद है जवानी बरायेनाम अपनी ।
बस इस तरहसे कभी जैसे ख़्वाब देख लिया ।।

समझमे कुछ नही आता है नासेह !
कि तू बेकार क्यों समझा रहा है ।।

यह जब्ते-ग़म भी कोई बडी शै है ? चश्मे-नाज़ !
वोह काम दे कि जो यह दो आलम न कर सके ।।
ज़ाहिद शिकस्ते-तौबाका इतना-सा राज़ है ।
साकीकी चश्मे-नाज़को बरहम न कर सके ।।

वोह गये दिन जब तडपता था मै उनकी यादमे ।
यादमें अब तो ख़ुद अपनी उनको तड़पाता हूँ मै ।।
मुझको क्या मालूम यह पानी है या है ख़ूने-दिल ।
मै तो इतना जानता हूँ अश्क बरसाता हूँ मै ।।
मेरे हर अरमानका मिटना मुबारक है मुझे ।
यह भी क्या कम है कि कुछ खोकर सकूँ पाता हूँ मै ।।

दीवाना करके आपको क्या लुत्फ आयेगा ?
जो चीज़ बन सकूँ वोह बनाकर तो देखिये ।।

ख़ुदाकी क़सम बस हमी जानते हैं।
मुहब्बतकी दुनियामें क्योकर रहे हैं॥

मै उनकी हकीकतको पहचानता हूँ।
मै रस्मे-मुहब्बत बढाकर करूँ क्या?

गिरा देगे नजरोसे अपनी वोह मुझको।
निगाहोमे उनकी समाकर करूँ क्या?

पडी निगाह तुझीपर तमाम महफिलमें।
निगाहे-हुस्न! मेरा इन्तख़ाब देख लिया॥

कहता है इसको इक जहाँ इश्ककी कामयाबियाँ।
रजो-अलमकी ज़िन्दगी, हँसके गुज़ारता हूँ मै॥

आमदे-यारपर तो हम होशो-हवास खो चुके।
देखिये अपना हाल हो वक्ते-विदाये-यार क्या?
मुझको तबाह करके भी चैन नही तुझे ज़रा?
मेरा ही घर पसद है गार्दिशे-रोज़गार क्या?

दिलको जितना है इज़्तराब मेरे।
उतना रुखसे सकूँ टपकता है॥

इश्क है हुस्नसे बहुत बरतर।
ख़ुदको उनसे बुलन्द रखता हूँ॥

मुझे आपने कर लिया है जो अपना।
मुझे देखिये कितना मगरूर हूँ मै॥

वह ख़ुद मुसकराते चले आ रहे हैं।
मेरे ग़मकी ख़ुद्दारियाँ रग लाईं॥

बहुत रोज़ मैं रह चुका उनका बन्दा।
हसीनोंको अब अपना बन्दा करूँगा॥

कहते है शायद इसको मजबूरिये-मुहब्बत।
ग़ममें भी हमने जबरन, पैदा किया तबस्सुम॥

मुझको तो ख़ुद तबाहियाँ अपनी अज़ीज़ हैं।
बिजली तडप रही है यह क्यो आशियाँसे दूर॥
मुझको नही पसन्द यह ज़ूद अख़्तयारियाँ।
ऐ रहनुमाँ! बता कि है मजिल कहाँसे दूर॥

क्या यूँ ही उजाडेगा तू यह मेरा क़फस भी?
इसको भी नशेमन जो मै सैयाद बना लूँ॥

तेरी भी कद्र है, तेरे दिलकी भी क़द्र है।
दो लफ्ज़ कहके आपने बहला दिया मुझे॥

ज़ात मेरी है दो आलमसे बुलन्द।
और मुझसे बढके उनकी ज़ात है॥

उसकी रफअत, उसकी वकअत, उसकी क़ीमत कुछ न पूछ।
हाय वह इक ख़ूनका क़तरा जो कहलाता है दिल॥

हर चन्द गवारा न था ख़ुद्दारिये दिलको।
कहना पडा मजबूर शबे-ग़मका फसाना॥

क्या जाने अदा कौन-सी समझे है वोह इसको?
आ जाना युँ ही और बुलायेसे न आना॥

नाकामियोंके ख़ौफने दीवाना कर दिया।
मजिलके सामने भी पहुँचके हिरास है॥

१६ अगस्त १९५३ ई० ]

# अख़्तर अन्सारी

[ १९०९——ई० ]

अख़्तर अन्सारी १९०९ ई०मे दिल्लीमे जन्मे। यही उनका वतन है। १९३० ई०मे देहलीसे बी० ए० किया। १९३१मे इग-लिस्तान गये, परन्तु वहाँसे शीघ्र वापिस चले आये। १९३४ ई०मे बा० टी० किया और मुस्लिम यूनिवर्सिटी स्कूलमे अंग्रेजी शिक्षक है।

आप १९२८से शेर कह रहे है। आपने पहले नज्मे कही। १९३६से उपन्यास लिखने शुरू किये। आपके दो उपन्यास और तीन कविता-सग्रह, १आबगीने, २खनाब, ३ 'खन्दयेसहर' छप चुके है।

अख़्तर अन्सारीका मकतबे-उर्दू लाहौर द्वारा १९४३ ई०मे प्रकाशित 'खनाब' हमारे सामने है। इसमे आपकी ९२ गजले और ५० फुटकर अशआर सकलित है। चन्द अशआर मुलाहिजा हो—

क्या याद करके इशरते-रफ्ताको[1] रोइये।
इक लहर थी कि नाचती-गाती निकल गई॥

तारोको देखना और हर लहजा आहे भरना।
कटती है मेरी रातें यूँ हौजके किनारे॥

अब कोई दमभें गर्क हुआ चाहता हूँ मै।
जो मौजे-आबपर हो रवाँ[2], वोह दिया हूँ मै॥
मैंने भी इक बनाई है दुनिया यहाँसे दूर।
ऐसा भी इक जहान है जिसका खुदा हूँ मै॥

---

[1]बीते हुए सुखके दिनोको, [2]पानीकी लहरोपर रखा हुआ।

यह शायरी नहीं है, तमन्नाकी क़ब्रपर—
तामीर एक ताजमहल कर रहा हूँ मैं ॥
जो ज़िन्दगी थी अस्लमें 'अख़्तर' वोह कट गई ।
जीनेकी शर्म रखनेको अब जी रहा हूँ मैं ॥

मैं हँसता हूँ मगर ऐ दोस्त ! अक्सर हँसनेवाले भी—
छुपाये होते हैं दाग और नासूर अपने सीनोमें ॥
मैं उनमें हूँ जो होकर आस्ताने-दोस्तसे महरूम ।
लिये फिरते हैं सजदोकी तडप अपनी जवानीमे ॥

ज़िन्दगीभरकी अज़ीयत[1] है यह जीना या रब !
एक-दो दिनकी मुसीबत हो तो कोई सह ले ॥

यूँ तो जिये सारी उम्र लेकिन—
जीनेकी तरह न जी सके हम ॥

हसीन चाँदोकी शमएँ मुझे जलाने दो ।
मज़ार है मेरे सीनेमे आरज़ूओके ॥

अगर अश्को-से भी कोई न समझे मुद्दआ इनका ।
तो इससे आगे है मजबूर मेरी बेज़बाँ आँखे ॥

वोह कैफियत अरे तौबा कि वहशियोकी तरह ।
दिले-सितमज़दा सीनेमें सर पटकता था ॥

शबाब नाम है उस जाँनवाज़ लमहेका ।
जब आदमीको यह महसूस हो "जवाँ हूँ मैं" ॥

---

[1]तकलीफ ।

पस्त कहता नहीं मैं पस्तीको।
अपनी फितरत बुलन्द रखता हूँ॥
चश्मे-बातिनसे देखता हूँ मैं।
चश्मे-ज़ाहिरको बन्द रखता हूँ॥
कामयाबी मुहाल है 'अख़्तर'!
जौक[1] इतना बुलन्द रखता हूँ॥

आलम यह है शबाबमे जोशे-शबाबका।
गोया छलक उठा है पियाला शराबका॥
अल्लाह, यह शगुफ्तिगीये-हुस्नकी[2] बहार।
गोया चमनमे फूल खिला है गुलाबका॥

रश्क[3] करते है जो 'अख़्तर'पै वोह क्या जाने आह!
रोजो-शब अपने वोह किस तरह बसर करता है॥

साफ ज़ाहिर है निगाहोसे कि हम मरते है।
मुँहसे कहते हुए यह बात मगर डरते है॥
आस्माँसे न कभी देखी गई अपनी ख़ुशी।
अब यह हालत है कि हम हँसते हुए डरते है॥

'अख़्तर' मज़ाके-दर्दका मारा हुआ हूँ मैं।
खाते है अहले-दर्द मेरे नामकी क़सम॥

समझता हूँ मै सब कुछ सिर्फ समझाना नही आता।
तडपता हूँ मगर औरोको तडपाना नही आता।

---

[1]सुरुचि, [2]सौन्दर्य्यके खिलनेकी, [3]ईर्ष्या।

लबरेज़ होके दिलका सागर छलक उठा है।
शायद इसी सबबसे बहती है मेरी आँखें॥

जहाँके गुलकदेसे[1] ऐ क़ज़ा मुझे ले चल।
मेरा वजूद यहाँ ख़ार-सा[2] खटकता है॥

मैं वोह महरूमे-शादमानी[3] हूँ।
जिसे बरसों हँसी नहीं आती॥

मज़ाके-आरज़ूकी आफतें दिन-रात सहता हूँ।
मुझे 'अख्तर' तआज्जुब है मैं जिन्दा कैसे रहता हूँ॥

मुज़्तलाये-दर्द होनेकी यह लज़्ज़त देखिये।
किस्सये-ग़म हो किसीका दिल मेरा धक-धक करे॥

बुझा सकोगे तुम 'अख्तर' न आँसुओंसे इसे।
यह कोई आग नहीं जज़्बये-मुहब्बत है॥

मुझे ख़ुद भी ख़बर नहीं 'अख़्तर'!
जी रहा हूँ कि मर रहा हूँ मैं॥

क्या इससे बहस कैसे थे जो दिन गुज़र गये।
अच्छे थे या बुरे हमें बरबाद कर गये॥
'अख्तर' यह ग़मके दिन भी गुजर जायेंगे यूँ ही।
जैसे वह राहतोंके ज़माने गुज़र गये॥

ग़मसे नालाँ हूँ, ऐशसे बेज़ार।
हाय क्या हो गया तबीयतको॥

---

[1]चमनसे; [2]काँटे-सा, [3]ख़ुशीसे रहित।

जिसमें धड़का लगा रहे ग़मका।
क्या करूँ लेके ऐसी राहतको॥

मुहब्बत है, अज़ीयत है, हुज़ूमे-यासो-हसरत है।
जवानी और इतनी दु:खभरी कैसी कयामत है॥

मेरे धड़कते हुए दिलपै हाथ रख दे कोई।
कि आज थोड़ी-सी तस्कीन चाहता हूँ मैं॥

बेखुदीकी शराब पीता हूँ।
गफलतोके सहारे जीता हूँ॥
वोह मसर्रतके चन्द लमहे आह।
याद करके उन्हींकी जीता हूँ॥
शायद एक दिन उम्मीद बरआये।
हाय किस आसरेपै जीता हूँ॥

अपने एक-एक साँसमें मैंने।
उम्रभरका अज़ाब देखा है॥
ज़िन्दगीकी हरेक करवटमें।
इक नया इन्कलाब देखा है॥

किसीके हुस्ने-सीमीका यह शायद इक भिखारी है।
ज़मीपर चाँदने फैला दिया है अपने दामाँको॥

ग़मके सदमे उठाये हैं बरसो।
जब मसर्रतकी कद्र जानी है॥

मेरे इरादे निहायत बुलन्द थे यानी—
कभी मैं अपने इरादोमें कायमाब न था॥

जुहद[1] भी अस्लमें है ख़ुदगरज़ी।
मैं करूँ यह गुनाह नामुमकिन॥

उजडे दिलमें उमीदका आलम।
जैसे सहरामें[2] जल रहा हो दिया॥
नौजवानी थी जिन्दगी दरअस्ल।
यूँ मैं जानको सारी उम्र जिया॥

मुहब्बतकी सोरिशसे[3] ख़ाली है सीना।
यह जीना भी है कोई जीनेमें जीना॥
उमग अपने दिलमें है जैसे चमनमें।
खडी मुसकराती हो कोई हसीना॥
यह शबनम है 'अख़्तर' कि फर्ते-हयासे —
झलकता है गुलकी जबीपर पसीना॥

शबेतार ! तेरी ख़मोशीके कुर्बां, बता आमद-आमद है किस रश्के-महकी ?
यह बज़्मे-फलक क्यो सजाई गई है, यह तारोका छिडकाव क्यो हो रहा है ?

जिन्दकी इक हसीन धोका है।
हमने सोचा है हमने समझा है॥
कौन समझेगा मेरे दर्दको आह !
रूहका ज़ख्म किसने देखा है॥
है सकूँ मौतका यानी—
जिन्दगीमें सकून उन्का[4] है॥

---

[1]दिखावटी उपासना, [2]जगलमे, [3]चहल-पहलसे, [4]एक कल्पित पक्षी जो कभी देखा नही गया।

आह, मुतरिब[1]! यह तेरा धीमे सुरोमें गाना।
जैसे दरिया शबे-महताबमें आहिस्ता बहे॥

क्या बताऊँ मैं क्या है मनकी आग।
तुमने देखी तो होगी बनकी आग॥
आबे-कुलज़म जिसे बुझा न सके।
वोह है आज़ादिये-वतनकी आग॥

जिसकी वीरानियाँ हैं रश्के-बहार।
मैं वोह उजडा हुआ गुलिस्ताँ हूँ॥

हमको जिसका गम है, उसको कुछ हमारा गम नही।
यह मुसीबत उम्रभर रोनेको भी कुछ कम नही॥

मेरे दिले-मायूसमें क्योकर न हो उम्मीद।
मुरझाये हुए फूलमे क्या बू नही होती॥

जो सच पूछो तो दुनियामें फकत रोना ही रोना है
जिसे हम जिन्दगी कहते है काँटोका बिछौना है

मौसमे-गुलमें सितम हाय खिज़ाँ याद न कर।
चन्द घडियाँ हैं खुशीकी इन्हे बरबाद न कर।

जिसने गमोकी गोदमें पाई हो परवरिश।
वह गमफरोश शेर न लिक्खे तो क्या करे॥

यह दर्दमन्द दिल भी, है इक रबाब लेकिन —
नग़मोके बदले इसमें आहे भरी हुई है॥

---

[1]गानेवाली।

कामयाबीके देखता हूँ ख़्वाब।
मेरे मालिक ! मुझे हुआ क्या है ॥

मैं हँसता हूँ दिनभर, मैं रोता हूँ शबभर ।
खुदा जाने मुझको यह क्या हो गया है ॥

यह भी मुमकिन नहीं कि मर जायें।
जिन्दगी आह कितनी जालिम है ॥

तारोभरा यह आस्माँ, है फकत आस्मान या—
दुखभरी कायनातका सीनये-दागदार है ॥

२० सितम्बर १९५२ ई०]

# 'शफ़ीक़'
## जौनपूरी

तुझे हम दोपरहकी धूपमे ऐ फूल देखेंगे।
अभी शबनमके रोनेपर हँसी मालूम होती है॥

जो हम, ऐ हमसफीरो! महवे-ऐशे-गुलिस्ता होगे।
यह तिनके आशियानेके कफसकी तीलियाँ होगे॥

तग आ चुके है अहले-रियाकी अजाँसे हम।
दुनियाको अब जगायेंगे दिलकी फुगाँसे हम॥

शाहराहे-आमसे पाबन्द होता है कदम।
उस तरफसे चल जिधरसे रास्ता जाता नही॥

चाँद-तारे गुच-ओ-गुल सब यही होगे मगर।
फिर भी करवट लेके दुनिया क्यासे क्या हो जायगी!

इक ऐसी आहकर बुलबुल! चमनमे आग लग जाये।
अभी फरियाद सुनकर फूल हँस देते है गुलशनमें॥

ऐ दौरे चर्ख़ तेरी पाबन्दियाँ कहाँ तक।
हम ख़ुद बना रहे हैं अपने लिए ज़माना॥

अब उस चमनमें बनायेंगे आशियाँ अपना।
कि आस्मान जहाँ बिजलियाँ गिरा न सके॥

न बदलें 'शफ़ीक' आके हिन्दोस्ताँमें।
वही है हिजाज़ी घराना हमारा॥

—सफ़ीना

ख़ुदाया कुछ न दे फिर भी यह सौ देनेका देना है।
अगर इन्सानके पहलूमें तू इन्सानका दिल दे॥
वोह कुव्वत दे कि टक्कर लूँ हर इक गरदाबे-दरियासे।
जब उलझाना है मौजोंमें तो कश्ती दे न साहिल दे॥

जुनूँपे ओ मुसकरानेवाले! बिना उमीदोंकी ढानेवाले!
वफ़ाके तेवर बदल न जायें, कि हुस्नका अहतराम कबतक?

—निगार अगस्त १९४६ ई

तहज़ीबका आईना अबतक शरमिन्द-ए-अहसाँ हो न सका
क्यों शोरे तरक्की है या रब! इन्साँ ही जब इन्साँ हो न सका॥

—शायर सालनामाँ १९५१

१४ अगस्त १९५३ ई०]

## अर्शी भोपाली

वह हमसे ख़फ़ा तो है लेकिन, आया न ख़फ़ा होना भी उन्हे।
अहबाबने उनकी नजरोको, सौबार परीशाँ देखा है॥
अब कहिये तो उनसे क्या कहिये, कुछ याद नही सब भूल गये।
दामन तो यह कहकर भागा था "कुछ आपसे हमको कहना है"॥
तजदीदे-करम सर आखोपर, यह दोलतेगम तो मुझसे न ले।
कुछ और सँवरना है मुझको, कुछ और भी मुझको जीना है॥

तजदीदे-आरजूके लिए दिल मचल न जाय।
मुद्दतके बाद फिर कोई नजर आ गये है आज॥
शायद उन्हे भी रजिशे-बाहम है नागवार।
मुझसे निगाह मिलते ही घबरा गये है आज॥
अब देखिये पहुँचती है बरबादियाँ कहाँ?
उनकी हसीन आँखोमे अश्क आ गये है आज॥

जब कभी दर्दे-मुहब्बतमें कमी पाई है।
अपनी हालतपै मुझे आप हँसी आई है॥
आपके अहदे-करमका भी तसव्वुर है गराँ।
उन मुकामातपै अब आपका सौदाई है॥

बरहमीका दौर भी किस दरजा नाजुक दौर है।
उनकी बज्मेनाजतक-जा-जाके लौट आता हूँ मै॥

हयाते-खुल्द भी 'अर्शी' कहाँ जवाब उनका।
जो उनकी बज्ममें घडियाँ गुजार दीं मैंने॥

बेताबिये-दिलके इन नाज़ुक लमहोंका तसव्वुर तो कीजे।
जब अहदे-मुहब्बत होते ही फ़ुरकतका ज़माना आ जाये॥

तेरी नीची नज़रकी यादका आलम अरे तौबा।
चुभा कर दिलमें जैसे तोड डाले कोई पैकाँको॥

थरथराते हुए हाथोंसे जाम देता है।
चारागर आज न जाने मुझे क्या देता है।
कुछ तो होता है हसीनोंको भी अहसासे-जमाल।
और कुछ इश्क भी मगरूर बना देता है॥
दार मिल ही गई मन्सूरको 'अर्शी' वरना।
कौन दुनियामे मुहब्बतका सिला देता है॥

आगाज़े-आशिकाना अल्लाहरे ज़माना।
हर बात बहकी-बहकी हर गाम वालहाना॥
उनके मेरे मरासम थे बेतकल्लुफाना।
ऐसा भी आ चुका है, उल्फतमें इक ज़माना॥
सौ बार देखकर भी यूँ मुज़तरब है नज़रें।
जैसे गुज़र गया हो देखे हुए ज़माना॥

—निगार जुलाई १९४६ ई०

उनको देखा था अभी, फिर इस तरह बेताब हूँ।
वाकई देखे हुए जैसे ज़माना हो गया॥
तानये-अहबाब, दुनियाकी कयास आराइयाँ।
इक तेरी ख़ातिर मुझे सब कुछ गवारा हो गया॥
अस्मते-कोनैन उस बरबादे-उलफतपर निसार।
उनके दामनको बचाकर ख़ुद जो रुसवा हो गया॥

उनकी महफिलमें भी 'अर्शी' कम नही दिलकी तडप ।
यह तबीयतको खुदा जाने मेरी क्या हो गया ॥
—निगार सितम्बर १९४६ ई०

सोज़े-उल्फतसे वोह कम मायये-गम है महरूम ।
आतिशे-दिलको जो अश्कोसे बुझा देता है ॥

जब उन्हे अर्जे-अलमपर मुजतरिब पाता हूँ मैं ।
जो न पीनेके है आँसू, वह भी पी जाता हूँ मैं ॥
दिलकी बेताबीके सदके जलवागाहे नाजमें ।
अब तो अक्सर बेबुलाये भी चला जाता हूँ मैं ॥
बहकी-बहकी-सी निगाहे, लडखाडाये-से कदम ।
हाय ! वोह आलम कि उनके सामने जाता हूँ मैं ॥
उनकी आँखोके तसद्दुक, उनकी आँखोके निसार ।
अब तो 'अर्शी'के लिए अक्सर बहक जाता हूँ मैं ॥

निगाहे-शौकसे कब तक मुकाबिला करते ?
वोह इल्फात न करते तो और क्या करते ?
यह पूछो हुस्नको इलजाम देनेवालोसे ।
जो वोह सितम भी न करता तो आप क्या करते ?
हमें तो अपनी तबाहीकी दाद भी न मिली ।
तेरी नवाजिशे-बेजाका क्या गिला करते ?
—निगार सितम्बर १९४९ ई०

वोह आये सामने लेकिन नजर मिला न सके ।
मेरी निगाहे-तमन्नाकी ताब ला न सके ।
रहे-वफाकी कठिन मजिलें अरे तौबा ।
वोह थोडी दूर भी हमराह मेरे आ न सके ॥

ज़माना कहता है बरबादे-आरज़ू मुझको।
ख़ुदा करे कोई इलज़ाम उनपै आ न सके॥
न जाने टूट पड़ी क्या कयामतें दिलपर।
हम आज शिद्दते-गममे भी मुसकरा न सके॥
तेरी हयाते-सकूँ आश्नासे क्या हासिल?
वोह नक्श छोड, ज़माना जिसे मिटा न सके॥
न कहते थे कि है बेसूद उनसे अर्ज़े-अलम।
जबींपै चन्द सितारे भी झिलमिला न सके॥
तेरी नवाजिशे-बेहदका शुक्रिया लेकिन—
वोह क्या करे जिसे कुरबत भी रास आ न सके॥
न पूछ उसकी तबाही जो सामने उनके।
छुपाये राज़े-अलम और मुसकरा न सके॥
गमे-हयातमें यह सल्त मरहले तौबा।
कभ-कभी तो मुझे वोह भी याद आ न सके॥
किसी तरह उसे जीनेका हक़ नही हासिल।
जो अपने आँसुओमे ख़ूने-दिल मिला न सके॥

हमसे और उनसे तर्के-मुलाकात हो गई।
दुनिया जो चाहती थी, वही बात हो गई॥
यह तमकनत, यह ज़ोम, महवे-वजहे-बरहमी।
अब कौन उनसे पूछे कि क्या बात हो गई॥
इजहारे-गमपै और वोह बेगाना हो गये।
क्या बात हमने सोची थी, क्या बात हो गई॥
रोज़े-फिराके यारकी अल्लाहरे तीरगी।
यह भी ख़बर नही है कि कब रात हो गई॥
'अर्शी' कुछ इस तरहसे हूँ ख़ुश उनको देखकर।
जैसे हर इक सितमकी मकाफात हो गई॥

## यर अकबराबादी

मरना तो मुक़द्दर था, सैयादने उजलत की।
जीते न चमनवाले, जब दौरे-ख़िज़ाँ होता ॥

गलतफहमी न हो जाये किसीको मेरी जानिबसे।
ख़ुदाके वास्ते दीवाना कह दो एक बार अपना ॥

वोह एक तुम, तुम्हे फूलोपै भी न आई नींद।
वोह एक मैं, मुझे काँटोपै इज़्तराब न था ॥

फस्लेगुल याद ख़िज़ाँमें मुझे यूँ आती है।
जब कोई ख़ार चुभा, मैंने कहा—"हाय बहार" !

चमनको कौन यूँ बरबाद होते देख सकता है।
ठहर इतना कि बन्द आँखें हम ऐ दौरेख़िज़ाँ ! करलें ॥

मायूसियां पहुँच गईं हद्दे-कमाल तक।
जब ख़ाक हम हुए तो उधरकी हवा नहीं ॥

इसी दुनियाकी अक्सर तल्ख़ियोंने मुझको समझाया।
कि हिम्मत हो तो फिर है ज़हर भी एक चीज़ खानेकी ॥

उम्मीदो-बीममें 'नैयर' अभी इक जग बरपा है।
मेरी कश्ती पलट आती है, टक्कर खाके साहिलसे ॥

वह भी सच्चे, ख़्वाबमें आनेका वादा भी दुरुस्त।
शक मगर हमको शबे-ग़म नींदके आनेमें है ॥

आओ ज़रा सकूनकी दुनिया भी देख लो।
तुमको शिकायतें थीं मेरे इज़्तराबकी ॥

कुछ इसके आनेसे तस्कीं-सी होती है 'नैयर'!
कहाँसे आती है बादे-सबा ख़ुदा जाने ॥

कुछ ऐसा डूबनेका न होता मुझे मलाल।
मुश्किल यह आ पडी थी कि साहिल नज़रमें था ॥

सहराकी वुस्अ़तोंमें भी बहला न मेरा जी।
अब मैं यह क्या कहूँ कि परेशान घरमें था ॥

बढी है कल्बकी धडकन तुम्हारे वादोसे।
उम्मीदवारको पहले यह इज़्तराब न था ॥

उसने यूँ देखा मुझे गोया कि देखा ही नहीं।
फिर भी मुझतक इक पयामे-नातमाम आही गया ॥

हदूदे-सईए-तलबसे[1] गुज़र गया हूँ मैं।
वोह मिल गये हैं मगर, उनको ढूँढता हूँ मैं ॥

पसीना फूलोको 'नैयर'! चमनमें आता है।
निगाह भरके जो काँटोको देखता हूँ मैं ॥

करूँगा शेबमें[2] अजामे-इश्क़पर भी नज़र।
अभी शबाब है, फ़ुरसत मुझे बहुत कम है ॥

जिसे कारवाँ छोडकर बढ गया था।
वही गर्द अब कारवाँ हो रही है ॥

दिलसे गर्मो-सर्दका अहसास तक जाता रहा।
ज़िन्दगी यह है तो 'नैयर' मौत किसका नाम है?

—निगार अप्रेल १९५१ ई०

---

[1] अभिलाषाओकी सीमासे [2] वृद्धावस्थामे।

फक टोकी

खिज़ाँ अब आयगी तो आयेगी ढलकर बहारोमें ।
कुछ इस अन्दाज़से नज़्मे-गुलिस्ताँ कर रहा हू मै ॥

बडी मुश्किलसे आता है मयस्सर जिन्दगी भरमें ।
वोह इक लमहा जिसे इन्साँ गुज़ारे शादमाँ होकर ॥
इन्ही ज़र्रोंसे कल होगे नये कुछ कारवाँ पैदा ।
जो ज़र्रे आज उडते है, गुबारे-कारवाँ होकर ॥

थी जो कलतक कश्ति-ए-उम्मीदको थामे हुए ।
रुख़ बदल कर आज वोह मौजें भी तूफाँ हो गईं ॥

अब इस फिक्रमें रातदिन कट रहे है ।
तुझे भूल जाये कि खुदको भुला दें ॥

शायर अक्तूबर १९४६ ई०

## शफा गवालियरी

रवा रक्खा यहाँ तक अहतरामे-आशिकी मैंने।
हँसी आई कभी तो आँसुओको सौंप दी मैंने॥

मिली ऐसी भी राहे मुझको अक्सर राहे-उल्फतमें।
कि खुदको ऐ 'शफा'! घबराके खुद आवाज दी मैंने॥

सबक़ ले मज़रे-गोरे-गरीबाँ देखनेवाले!
चराग़ोको तरसते हैं, चरागाँ देखनेवाले॥

कफसमें भी तुझे रहना कहीं दूभर न हो जाये।
अरे मुड-मुडके ओ सूये-गुलिस्ताँ देखनेवाले!

तू जिसे ज़र्रा समझकर कर रहा है पायमाल।
देख उस ज़र्रेके सीनेमें कही दुनिया न हो॥

शबे-गम रोनेवाला रोते-रोते सो गया शायद।
ज़बीने-गुलपै शबनमकी, नमी देखी नही जाती॥

अरे ओ बेकसीपै रोनेवाले! कुछ खबर भी है।
वही है ज़िन्दगी जो ज़िन्दगी देखी नही जाती॥

इक नई बुनियाद डालेंगे तजस्सुसकी 'शफा'!
हर गुबारे-कारवाँमें कारवाँ ढूंढेंगे हम॥

न होगा पास रहकर इम्तहाँ मश्के-तसव्वुरका।
वोह जितना दूर हो सकता है, उतना दूर हो जाये॥

लबोपै दम है किसीका, कोई सरे-बाली।
'शफा'! हयातका दामन पकड़के आई है॥

धडकते दिलसे 'शफा' तक रहा हूँ यूँ तारे।
किसीने जैसे कहा हो कि "आ रहा हूँ मैं"॥

## शमीम जयपुरी

अव्वल तो यह कि नींद न आये तमाम रात।
फिर उसपर उनकी याद सताये तमाम रात।

साकी-ओ-मुतरिब आये, जाम आये, सुबू आये।
आना था जिनको वोही न आये तमाम रात॥

ऐसे कहाँ नसीब शबे-माहताबमें।
वोह आयें और आके न जायें तमाम रात॥

वोह क्या गये कि नींद भी आँखोसे ले गये।
यानी वोह ख्वाबमें भी न आये तमाम रात॥

जिसन हमारी नींद उडाई है इस तरह।
यारब! उसे भी नींद न आये तमाम रात॥

ऐसे वोह बेख़बर तो न थे मुझसे बज्ममें।
बैठे रहे निगाह झुकाये तमाम रात॥

## शहाब

न मिला हमे कुछ गदा होकर।
न दिया तूने कुछ ख़ुदा होकर॥

ऐ बुतो आजमाके देख लिया।
न हुए तुम ख़ुदा, ख़ुदा होकर॥

## शहीद बदायूनी

इतना जरूर है कि सकूं तो न मिल सका।
लेकिन तेरे बगैर भी रातें गुजर गईं॥

वोह सम्भले हुए थे, मगर थे फसुर्दा।
न आया उन्हे मुझसे दामन बचाना॥

अहसास तो जरूर था लेकिन बहारमें।
हम अहतियाते-जेबो-गरेबाँ न कर सके॥

सुनके कल महफिलमें जिक्रे-हुस्ने-दोस्त।
हम भी कुछ आँसू बहाकर रह गये॥

जलते तो थे चराग मगर रोशनी न थी।
तुम आ गये तो रौनके-काशाना हो गई॥

हँसी आ गई उनकी बेगानगीपर।
वोह गुजरे बराबरसे दामन बचाये॥

हालात इजाजत नहीं देते कि समझ लूं।
अब जहर मेरे गमकी दवा है कि नहीं है॥

कर लिया हुस्नकी दुनियासे किनारा मैंने।
यूँ भी इक दौर मुहब्बतमे गुजारा मैंने॥

वोह किसीके है, मै किसीका हूँ, मगर एक रब्त है आज तक।
वही अहतयाते-निगाह है, वही अहतयाते-कलाम है॥

किसने लिखा है यह दीवारोपै जिन्दाँकी 'शहीद'!
"जान देना जिसने सीखा, उसको जीना आ गया"॥

जिनकी बेबाकीके चर्चे हो रहे है बज्ममें।
मैंने देखी है उन आँखोमें हया आई हुई॥

—निगार अप्रेल १९४६ ई०

## शान्तिस्वरूप भटनागर

मैं जागता हूँ कि शायद कहींसे आ जाओ ।
यहींसे खोई गई थी, यहींसे आ जाओ ।।
निगाहे ढूँढती-फिरती है गोशे-गोशेमे ।
नही जमीपै तो अर्शे-बरीसे आ जाओ ।।
सुपुर्दे-खाक अगर हो गईं तो क्या परवा ?
ब-शक्ले लाला-ओ-गुल तुम जमीसे आ जाओ ।।
सितम है मुझको पता तक नही, गई हो कहाँ ?
ग़रज़ जहाँ भी हो, लिल्लाह वहीसे आ जाओ ।।
पसन्द हो न अगर शाहे-राहे-आम तुम्हे ।
तसव्वुरातमें राहे-यकीसे आ जाओ ।।

—आजकल १ जून १९४६ ई०

## शातिर हकीमी

जो नज़रकी इल्तजा समझा नहीं ।
हाथ उसके सामने फैलायें क्या ?

ज़िन्दगी क्या है मुसलसल इज़्तराब ।
इज़्तराबे-दिलसे फिर घबरायें क्या ?

बैठना दुश्वार है आरामसे ।
आस्ताने-यारसे उठ जायें क्या ?

—निगार अप्रेल १९४९ ई०

## नसीरुद्दीन शादा

गरूरे-हुस्न न था, शमअ बेनियाज न थी।
वोह ना-शनासे अदब थे, जले जो परवाने ॥

## शेरी भोपाली

न जीनेपर ही काबू है न मरनेका ही इमकाँ है।
हकीकतमे इन्ही मजबूरियोका नाम इन्साँ है ॥

गजब है जुस्तजू-ए-दिलका यह अजाम हो जाये।
कि मजिल दूर हो और रास्तेमें शाम हो जाये ॥
अभी तो दिलमें हल्की-सी खलिश मालूम होती है।
बहुत मुमकिन है कल इसका मुहब्बत नाम हो जायें

खताके बाद इनआमे-खताका उनसे तालिब हूँ।
किसीने आजतक ऐसी भी गुस्ताखी न की होगी ॥

## शैदा खुरजवी

जिस दौरसे फरिश्ते दामनकशा थे या रब!
उस दौरसे गुजरकर आया हूँ जिन्दगीमें ॥
ऐ दोस्त! रफ्ता-रफ्ता तुझको भी ढूँढ लूँगा।
खोया हूँ मै अभी तो अपनी ही आगही में ॥
किस दर्जा शादमाँ हूँ, अपनी तबाहियोपर।
कितना अजीज तर है मिटना भी आशिकीमें ॥
जो खिज्रसे न उठ्ठे, उम्रे-दराज पाकर।
वोह गम उठाये हमने, दो दिनकी जिन्दगीमें ॥

क्या पूछता है 'शैदा' ! मुझसे मेरी तबाही।
अन्धेर है लुटा हूँ, जलवोकी रोशनीमें॥

—आजकल १५ दिसम्बर १९४४ ई०

## सरूर तोसवी

खयाले-बर्को-मिजाजे-शरर बदल डालो।
सकूने-दामाँसे खौफो-खतर बदल डालो॥
फिरी-फिरी-सी जो अपने ही भाइयोसे रही।
यह मसलहत है कि अब वोह नजर बदल डालो॥
हवायें जिनसे निकलती है जहर आलूदा।
चमनसे अपने वोह बर्गो-शजर बदल डालो॥
वफा-ओ-महरके काबिल बने हो दुनियामें।
जफा-ओ-जौरकी शामो-सहर बदल डालो॥

## सरशार सद्दीकी

मेरा हाल तूने पूछा यह करम भी कम नही है।
तेरी पुरसिशोके सदके, मुझे कोई गम नही है॥

चश्मे-गिरियाँकी क़सम मैंने खिजाँमे अक्सर।
अपने दामनमें गुलिस्ताँका गुलिस्ताँ देखा॥

कह दो अभी न करवटें बदले निजामे-दहर।
मेरी जबीने-शौक है, और पाये-यार है॥

बेखुदी देती है जब दिलको पयामे-खिलवत।
तू खुदा जाने उस आलममें कहाँ होता है॥

—निगार मार्च १९४८ ई०

## सरीर कावरी

लब हिलायें किस तरह अहसासे-दर्दे-दिलसे हम।
साँस लेते हैं तो लेते हैं बडी मुश्किलसे हम॥
मशअ़ले-दागे-जिगरसे कल सजाया था जिसे।
लो निकाले जा रहे हैं, आज उसी महफिलसे हम॥

## महेन्द्रसिंह सहर

नाउमीदी है अब तो वजहे-सकूँ।
फिर कोई महरबाँ न हो जाये॥
ए नशेमनको फूँकनेवाले!
बर्क ख़ुद आशियाँ न हो जाये॥

कफससे सुये-आशियाँ देखता हूँ।
कहाँ हूँ इलाही कहाँ देखता हूँ॥

—आजकल १५ अक्टूबर १९४५ ई०

## बलवन्तकुमार सागर

जमानेकी, न फलककी जफासे डरता हूँ।
मगर गरीबको इक बद्दुआसे डरता हूँ॥
ख़ुदाकी शान वोह डरता नही ख़ुदासे भी।
मगर मै उस बुते-काफिर अदासे डरता हूँ॥
ख़तर नही कोई बेगानोकी जफासे मुझे।
मगर यगानोकी महरो-वफासे डरता हूँ॥

—आजकल उर्दू मार्च १९५३ ई०

## साकिब कानपुरी

मै था जहाने-इश्क़में तेरे वजूदका गवाह।
कुछ न खुला यह राज़, क्यो तूने मुझे मिटा दिया॥

तुझपै भी कुछ असर हुआ, उसकी हयाते-इश्क़का ।
हाय वोह गम नसीब जो दर्दपै मुसकरा दिया ।।
—शायर जुलाई १९४६ ई०

जुल्म कर लेकिन नज़र रख इन्तहाये-जुल्मपर ।
आहपर मजबूर हो जाये न पाबन्दे-क़फस ।।

कौन समझेगा इस लताफतको ।
तेरे इन्कारमें भी है इकरार ।।
दर्दमें उसके ज़िन्दगी तो है ।
हो मुबारक यह इश्कका इज़हार ।।
तेरी सूरत तो है सरापा रहम ।
हुस्न तेरा है क्यो ग़रीब आज़ार ?
—आजकल १५ जून १९४६ ई०

## सबा अकबराबादी

तबस्सुमको 'मेरे, मेरा गम न समझे ।
वोह भोले थे अन्दाज़े-मातम न समझे ।।
ग़लत फहमियोमें जवानी गुज़ारी ।
कभी वे न समझे, कभी हम न समझे ।।
हमेशा रहे मुतमइन उस अतापर ।
ज़ियादा न माँगा, कभी कम न समझे ।।

महबूबे-माहवशको गलेसे लगाके पी ।
थोड़ी-सी पीके उसको पिला, फिर पिलाके पी ।।
पाबन्द रोज़े-अब्र शबे-माहका न हो ।
पिलवायें जब हसीन, तक़ाज़े हवाके पी ।।

दुनियाए बद नजरकी नजरसे बचाके पी।
यानी तआय्युनातके परदे गिराके पी॥
बेकैफकी शराबका कोई मजा नहीं।
इसमें जरा-सा खूने-तमन्ना मिलाके पी॥

तेरी महफिलमें मेरा बैठना बेलुत्फ था लेकिन—
जरा यह भी तो सुन लूँ मेरे उठ जानेपै क्या गुजरी ?
यह दीवारोके छींटे खूंके यह जजीरके टुकडे।
फिजा जिन्द की शाहिद है कि दीवानेपै क्या गुजरी ?
यह अफसाना बरहमनकी निगाहे-याससे सुनिये।
कि पूजा छोड़ दी मैंने तो बुतखानेपै क्या गुजरी॥

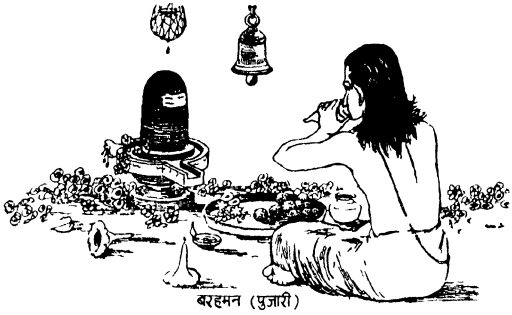

बरहमन (पुजारी)

## सालिक

ऐ काश तुम आ जाते अगियार ही को लेकर।
कुछ उम्र तो घट जाती गो रज सिवा होता।।

पहले सितमगरीके लिए आस्माँ बना।
कुछ बात रह गई थी, जो वोह दिलसिताँ बना।।

मुझसे सितम रसीदाका होगा कोई सरिश्क।
कतरेका नाम मुफ्तमें तूफाँ निकल गया।।

कहलाते हो क्यो वादा फरामोश जहाँमें।
आ जाओ कि मै आपमें अक्सर नहीं होता।।

हम बैठे है यूँ मुन्तजिर उस राहगुजरमें।
गोया कि उसी शोखके ठहराये हुए है।।

खुदा करे कि समझ जायें यह किनाया वोह।
अभी तो चर्खे-बरींका गिला किये जाऊँ।।

सच है सेहरामें नौआमोजे-जुनूंका क्या काम।
खाक उड़ानी भी न आती हो तो क्या खाक करूँ।।

अगर न वादा करो इन्तजार क्योकर हो?
सकून खातिरे-उमीदवार क्योकर हो।।

गरचे है आमदे-जानाँकी खबर बाजारी।
है मगर 'सालिके-'मुज्तरके सुना देनेकी।।

आ गये याद सितम हाय गुज़िश्ता उनको।
हाय करना ही न था, शिकवये-बेदाद मुझे॥

दरपै था क़ासिद, नवेदे-वस्ले-यार आनेको थी।
आज ही क्या मौत ऐ परवर्दिगार! आनेको थी॥

उसके आँसू टपक पडे 'सालिक'!
हाल इस दर्दसे कहा तूने॥

'सालिक'! ख़ुदाके वास्ते छोडो कुछ और ज़िक्र।
पूछो खबर न कुछ दिले-हसरत मआलकी॥

जो पास है मेरे, वोह ख़ुदा जाने कहाँ है?
तुम दूर हो, पर बैठे हो गोया मेरे आगे॥

ज़बाँ कट जाय गर लबसे तुम्हारा कुछ गिला निकले।
मगर यह तो कहूँगा तुमको क्या समझा था क्या निकले?

—निगार सितम्बर १९४९ ई०

## सुलेमान अरीब

ऐ सर्वे रवाँ ! ऐ जाने जहाँ ! आहिस्ता गुजर, आहिस्ता गुजर !
जी भरके तुझे मैं देख तो लूँ, बस इतना ठहर, बस इतना ठहर ॥

## सिराज लखनवी

मैं कबका रौमें इन अश्कोकी अबतक बह गया होता ।
इन आँखोंपर तरस खाकर यह किसने आस्तीं रख दी ?

न आया आह आँसू पूँछना भी गमके मारोको ।
निचोडी भी नहीं दामनपै यूं ही आस्तीं रख दी ॥

यहीं उठकर चला आये अगर काबेका जी चाहे ।
कि अब तो नक्शे-पा-ए-यार पर हमने जबीं रख दी ॥

—शायर सालाना नवम्बर १९५१ ई०

## हबीबअहमद सद्दीकी एम० ए०

इलाही ! करके तय किन रफअतोको मैं कहाँ पहुँचा ?
कि यकसाँ पड रही है अब निगाहे दोस्त-दुश्मनपर ॥

वह सितमगर है, जफाजू है, सितम ईजाद है ।
इब्तदाये-रस्मेउल्फत फिर भी की, नाचार की ॥

ख़ूगरे-जौर ही बना देते ।
तुमसे तो यह भी उम्रभर न हुआ ॥

अहतरामे-बेहिजाबीहाए हुस्ने-दोस्त था ।
लोग यह समझे कि मूसा तूरपर बेहोश था ॥

यूँ देखता हूँ बर्क़को अल्लाहरे बेदिली ।
जैसे चमनमें मेरा कही आशियाँ नहीं ॥

ऐ दिल ! सरे-नियाजको क्या कैदे-सगे-दर ।
काबा ही क्या बुरा है जो यह आस्ताँ नही ॥

खयालमें बसा हुआ है, आइनाके रूपमे ।
वोह दिलनवाज अजनबी कि जिससे गुफ्तगू नही ॥

मुझको अहसासे-रगो-बू न हुआ ।
यूँ भी अक्सर बहार आई है ॥

ख़िज़ाँ-ना दीदा, गम ना-आइना, बेगानये-इसयाँ ।
इलाही किस क़दर मायसकन खल्देबरी होगी ?

उससे क्या हालते-आशोबे-तमन्ना कहिये।
जिसको अन्दाज़ये-बेताबिये-तूफाँ ही नहीं॥

क्या मसर्रतका भरोसा ? ऐतबारे-गम नहीं।
दीदये-गिरियाँ भी मुद्दत हो गई पुरनम नहीं॥

सितम है अब भी उम्मीदे-वफापै जीता है।
वोह कम नसीब कि शाइस्तये-वफा भी नहीं॥

तकद्दुस शेख़का तसलीम, लेकिन पूछिये इतना।
मुहब्बत भी कभी मिनजुमलये-आदाबे-दीं होगी॥

—निगार सितम्बर १९४८ ई०

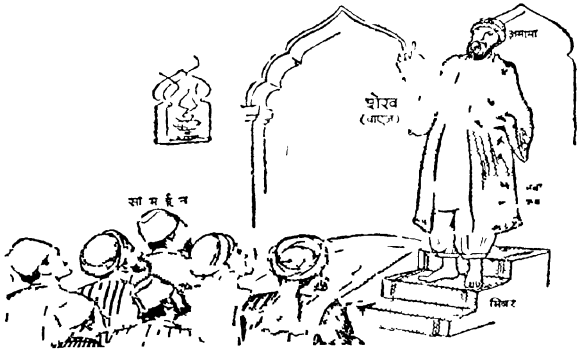

## हसरत तरमजवी

मुमकिन हो तो इक दिन आ जाओ, या ख़ुद ही बुलाओ तुम हमको ।
और यह भी तुम्हारे बसमें न हो, तो याद न आओ तुम हमको ।।
गम बढते-बढ़ते गम न रहे, इतना तो बढ़ाओ गम दिलका ।
रोनेके लिए आँसू न रहे, इतना तो रुलाओ तुम हमको ।।

—निगार अगस्त १९४५ ई०

## हसरत सुहवाई

वोह पलकोपै आही गया बनके आँसू ।
ज़बाँ पर न हम ला सके जो फसाना ।।

## हुरमतउलइकराम

गमे-दुनियाका नहीं कोई कनारा लेकिन—
फिर भी मुमकिन नहीं दुनियासे कनारा ऐ दोस्त !
मेरी सीरतके ख़तो-ख़ाल नज़र क्या आते ?
मुझको दुनियाने बहुत दूरसे देखा ऐ दोस्त !
दूसरे मुझको न समझें तो कोई बात न थी ।
शिकवा यह है कि मुझे तू भी न समझा ऐ दोस्त !
मुझसे हरबार मसर्रतने छुडाया दामन ।
मुझको सौबार दिया ग़मने सहारा ऐ दोस्त !

—निगार मार्च १९४७ ई०

मौजोने खे दिये हैं सफीने हज़ार-हा ।
उट्ठा है इस तरह भी तलातुम कभी-कभी ।।

औरोको कम मुझीको तआज्जुब बहुत हुआ।
आया है गर लबोपै तबस्सुम कभी-कभी॥
—शायर जून १९५० ई०

मुक़ाम ऐसा भी इक आता है राहे-ज़िन्दगानीमे।
जहाँ मज़िल भी गर्दे-कारवाँ मालूम होती है॥
कभी इक आग ऐसी भी भडक उठती है सीनेमें।
कि हर कैफीयते-दिलको जलन कहना ही पडता है॥
—निगार सितम्बर १९४७ ई०

वोह गम कि जिससे मयस्सर करार होता है।
वोह गम तो रहमते-परवर्दिगार होता है॥
न मुसकराके उठाओ नज़र, मिरी जानिब।
कि अब ख़ुशीका तसव्वुर भी बार होता है॥
यह कहके डूब गया, आज सुबहका तारा—
"अजीब चीज़ गमे-इन्तज़ार होता है"॥

## अब्दुलमजीद हैरत

वज़अदारी लिये जाती है किसीके दर तक।
वरना क्या हाथ बजुज़ रजो-मलाल आता है॥
बेनियाज़ीका किसीकी वोह असर है दिलपर।
अब ब-मुश्किल ही कोई लबपै सवाल आता है॥
असरे-गर्दिशे-तकदीर इलाही तौबा।
ओज आने नहीं पाता कि ज़वाल आता है॥
जुरअते-अर्ज़े-तमन्ना तो नही कम लेकिन—
अपनी कोताहिए-क़िस्मतका ख़याल आता है॥
जैसे ख़ुद हमने यह दरयाफ्त किया था उनसे।
ख़तमें लिक्खा हुआ अगियारका हाल आता है॥
—आजकल मार्च १९५३ ई०

*

## गंगा-जमुनी शेर

अन्तमे पुराने और नये ढगके चन्द अशआर ऐसे दिये जा रहे है, जिनके रचयिताओके नाम हमे स्मरण नही है—

कारफरमा निगहे-शोख़ है पैमानेमें।
तौबा घबराई हुई फिरती है मैख़ानेमें॥

दावरके सामने बुते-काफिरको क्या कहूँ।
दोनोंकी शक्ल एक है, किसको ख़ुदा कहूँ?
मारो भी तुम, जिलाओ भी तुम, तुमको क्या कहूँ?
तुमको ख़ुदा कहूँ या ख़ुदाको ख़ुदा कहूँ?

इसी बाइससे दाया तिफ्लको अफयून देती है।
कि ता-हो जाय लज्जतआश्ना तलखीये-दौरांसे॥

सुनते है हम बहिश्तकी तारीफ सब दुरुस्त।
लेकिन ख़ुदा करे वोह तेरी जलवागाह हो॥

रहे इक बाँकपन भी बेदमाग़ीमें तो जेबा है।
बढ़ा दो चीने-अबरूपर अदाये-कजकुलाहीको॥

ख़िजाँ क्या, फस्ले-गुल कहते है किसको कोई मौसम हो।
वही हम है, कफस है, और मातम बालो-परका है॥

ना तीर कमाँमें है, ना सैयाद कहीं है।
गोशेमें क़फसके, मुझे आराम बहुत है॥

नुक्साँ नहीं जुनूंमें, बलासे हो घर ख़राब।
वो गज जमींके बदले बयाबाँ बुरा नहीं॥

*

ज़बाँ जलाई, किये क़तअ हाथ पहुँचोसे।
यह बन्दोबस्त हुए है मेरी दुआके लिए?

दामन उसका तो भला दूर है ऐ दस्तेजुनूं!
क्यो है बेकार? गरेबाँ तो मेरा दूर नही॥

मिले जो हश्रमें ले लूं ज़बान नासेहकी।
अजीब चीज है यह तूले-मुद्दआके लिए॥

मुझे यह डर है, दिलेज़िन्दा! तू न मर जाये।
कि ज़िन्दगानी इबादत है तेरे जीनेसे॥

वह हमीं है जो तेरा दर्द छुपाकर दिलमे।
काम दुनियाके बदस्तूर किये जाते है॥

एक हम है कि लिया अपनी ही सूरतको बिगाड।
एक वोह है, जिन्हे तसवीर बना आती है॥

किसको होती है अता इस शानकी बरबादियाँ।
आशियाँ हम क्या बचाते, बिजलियाँ देखा किये॥

अजाँ हो रही है पिला जल्द साक़ी!
इबादत करूँ आज मख़मूर होकर॥

कुछ दिनोसे अब तो राहो-रस्मे-उल्फत बन्द है।
वरना बरसो नामाबर आता रहा, जाता रहा॥

वक्ते-पीरी दोस्तोंकी बेरुख़ीका क्या गिला।
बचके चलता है हरएक गिरती हुई दीवारसे॥

दरियाको अपनी मौजकी तुग़यानियोसे काम।
किश्ती किसीकी पार हो या दरमियाँ रहे॥

आपने जब भी कहा कम्बख़्तो-बदक़िस्मत कहा ।
मैं भी आख़िर आदमी हूँ नाम होना चाहिए ।।

न हुस्नसे कोई मतलब न इश्कसे सरोकार ।
कुछ इस तरहकी भी रातें गुज़ार दी मैंने ।।

मिटा दिया है ज़मानेने इस कदर हमको ।
कि अब हरीफ भी अपना नज़र नही आता ।।

वाबस्ता तेरी यादमें कुछ तल्ख़ियाँ भी थीं ।
अच्छा किया जो तुझको फरामोश कर दिया ।।

इस ख़मोशीमें भी आहे-सर्दसे ।
मैं जो कहना चाहिए था, कह गया ।।

ख़ुदाकी देनका मूसासे पूछिये अहवाल ।
कि आग लेनेको जायें, पयम्बरी मिल जाय ।।

हरम नादीदा, बुतख़ाना गुरेज़ाँ, बरहमन रहबर ।
किसी आवारये-कूए-बुताँकी आज़माइश है ।।

मलिकुलमौत अडा था कि मैं जाँ लेके टलूँ ।
और मसीहाको यह ज़िद थी कि मेरी बात रहे ।।

लोग कुछ पूछनेको आये हैं ।
अहले-मैय्यत जनाज़ा ठहरायें ।।

हैरा हूँ दिलको रोऊँ कि पीटूँ जिगरको मैं ।
मक़दूर हो तो साथ रखूँ नौहागरको मैं ।।

रगों है आजकलके गुले-नौ-बहारसे ।
अगला जो बर्गे-ज़र्द कोई इस चमनमें है ।।

लुत्फे-कलाम क्या जो न हो दिलमे जख्मे-इश्क़ ।
बिस्मिल नही है तू तो तडपना भी छोड दे ।।

वोह हमसे ख़फा है, हम उनसे ख़फा है ।
मगर बात करनेको जी चाहता है ।।

वस्लमें ज़िक्रे-उदू भी दम-ब-दम होता रहा ।
शरबते-दीदार मेरे हकमें सम होता रहा ।।

ज़ाहिदो ! दो दिनसे चर्चा हक-परस्तीका हुआ ।
वरना काबेमें सदा ज़िक्रे-सनम होता रहा ।।

कहो उश्शाकसे अपने कि जब्ते-गिरिया फरमाएँ ।
रुकेगा रास्ता घरका, अगर कूचेमें दल-दल हो ।।

इब्तदा आवारगीकी •जोशे-वहशतका सबब ।
हम तो समझे है मगर नासेहको समझाएँगे क्या ?

बाद तौबाके भी है दिलमें यह हसरत बाक़ी ।
देके कसमें कोई एक जाम पिला दे हमको ।।

यह फक़त आपकी इनायत है ।
वरना मै क्या, मेरी हक़ीक़त क्या ।।

हमनशी देखी नहूसत दास्ताने-हिज्रकी ।
सोहबतें जमने न पाईं थीं कि बरहम हो गईं ।।।

दश्ते-जुनूंकी सैरमें बहला हुआ था दिल ।
ज़िन्दामें लाये फिर मुझे अहबाब घेरके ।।

हुक्म है कूचये-जानाँसे निकल जानेका।
बेकसी हाथ लगा दे कि मैं बिस्तर बाँधूं॥

इश्क और पासे-वज़अ, फिर उसपर मिरा नसीब।
क्योकर हुई है उम्र बसर कुछ न पूछिये॥

दे फड़कनेकी इजाज़त सैयाद!
शबे-अव्वल है गिरफ़्तारीकी॥

सैय्याद

# शायराएँ

उर्दू-साहित्यको समृद्ध बनानेमे महिलाये भी भरसक प्रयत्न कर रही हे। साहित्यका कोई ऐसा अग नही, जिसपर वे न लिख रही हो। पुराने जमानेमे भी अनेक महिलाये फारसी-उर्दूमे गद्य-पद्य लिखती रही है, एव वर्त्तमान युगमे भी लिख रही है और बहुत अच्छी सफलता प्राप्त कर रही हे। हम महिला शायराओका विस्तृत परिचय, कलाम एव विवेचन किसी जुदा पुस्तकमे देगे। नमूनेके तौरपर चन्द शायराओकी गज़लोके चन्द अशआर यहाँ दिये जा रहे है :—

## श्रीमती सफिया शमीम मलीहाबादी

अगर नग़मये-सरमदी छेड दूँ मै।
ख़िज़ॉमें गुलोको महकना सिखा दूँ॥

अजल भी मेरे ग़मपै आँसू बहाये।
अगर नालये-जिन्दगानी सुना दूँ॥

अगर छेड दूँ साज़ ख़िलवतमें तेरी।
चराग़ोको ताके-हरमसे गिरा दूँ॥

कहो तो बदल दूँ निज़ामे-दो आलम?
जहन्नुममें फूलोकी जन्नत बसा दूँ॥

गुलिस्ताँका हर फूल दिल बनके महके।
अगर एक अश्के-तमन्ना गिरा दूँ॥

'शमीम' आह कर दूँ तो लौ दे जमाना।
फिज़ा मुसकरा दे अगर मुसकरा दूँ॥
—आजकल १५ दिसम्बर १९४५ ई०

कुछ ख़बर हो सकी न तेरे बग़ैर।
कब बहार आई, कब ख़िज़ाँ आई॥

ख़िज़ाने ख़ाक उडाई हज़ार गुलशनमें।
चमनमें फूल मगर मुसकराये जाते हैं॥

जहाँ उजडा, वही तामीर होगा आशियाँ अपना।
तड़पती बिजलियोंपर हँस रहा है गुलसिताँ अपना।
—निगार मई १९५२

चमनमें जश्ने-उरूसे-बहार है आजा।
उरूसे-नग़मा सरे-आबशार है आजा॥
हर-एक जुम्बिशे-गुलमें हज़ार नग़मे हैं।
हर-इक नसीमका झोका बहार है आजा॥
सरूरबख़्श घटाओंके मस्त सायेमें।
जमाले लाल-ओ-गुल ताबदार है आजा॥
रविश-रविशपै छिडी है हदीसे-लाला-ओ-गुल।
कली-कलीको तेरा इन्तज़ार है आजा॥
तुझे ख़बर भी है इस मौसमे-बहारमें भी।
'शमीम' नावके-ग़मका शिकार है आजा॥

वोह तसव्वुरमें यकायक आ गये।
हिज्रकी सूरत बदलकर रह गई॥

यह किसके अश्क थे, जो बन गये तबस्सुमे-गुल?
यह किसके दिलकी तमन्ना बहार होके रही?

जल बुझी शम-ए-आरज़ू, लेकिन—
इक धुआँ-सा ज़रूर उठता है ।।

क्या क़यामत थी परदादारियेगम ।
मुसकराते ही आ गये आँसू ।।

बेखबर ! मंज़िले-मकसूद नही दूर, मगर—
आलमे-होशसे हस्तीको गुज़र जाने दे ।।

उनकी नज़रको जुरअते-पुरसिश न हो सकी ।
दिल ग़मपै इस कदर हुआ नाज़ाँ कभी-कभी ।।

—निगार अप्रैल १९५१ ई०

## श्रीमती अनीस बानो

आपकी नज़रोंके फिरते ही यह सामाँ हो गया ।
मुनक़लब दुनिया हुई आलम परेशाँ हो गया ।
[illegible] वोह नसीमे-सुबहकी अठखेलियाँ ।
गुचये-दिल खिलते ही महवे-गुलिस्ताँ हो गया ।।
अपनी वहशतकी तरक्की हदसे गुज़री ऐ जुनूँ !
हाथको जुम्बिश हुई और चाक दामाँ हो गया ।।
आपके कहनेसे कहती हूँ फसाना हिज्रका ।
फिर न कहियेगा कि मेरा दिल परेशाँ हो गया ।।
बदनसीबीकी हदे क्या पूछती हो ऐ 'अनीस' ?
जिस चमनमें दो घडी बैठी बयाबाँ हो गया ।।

## श्रीमती अज़मत शमअ

जुस्तजू-ए-राह बाकी है न मंज़िलकी तलाश ।
मुझको खुद है अब मेरे खोये हुए दिलकी तलाश ।।

रोक ऐ हमदम ! न मेरी अश्क-अफशानीको तू ।
महफिले-हस्तीको है इक शम-ए-महफिलकी तलाश ।।
अब नजर आये जहाँ अपने सिवा कोई न हो ।
दिलको राहे-शौकमें है ऐसी मञ्जिलकी तलाश ।।
दीदये-जाहिरसे कब तक देखिये अन्दाजे-दोस्त ।
कीजिये ऐ 'शमअ' ! अब इक दीदये-दिलकी तलाश ।।

## श्रीमती पिन्हाँ

फिर नये अपने जमीनो-आसमाँ पैदा करें ।
मावराये-लामकाँ अपना जहाँ पैदा करें ।।
फूंक डालें जो हवादसके खसो-खाशाकको ।
आतिशीं आहोसे ऐसी बिजलियाँ पैदा करें ।।
कायनाते-हुस्नमें आ जाये जिससे जलजला ।
साजे-दिलसे वोह नवाये-खूं चुकाँ पैदा करें ।।
खेलते हो इस शकिस्ता साजके तारोसे क्या ?
दिलके टुकडे क्या नवाये-दास्ताँ पैदा करें ?
कारगर हो जायगा 'पिन्हाँ' कभी जजबे-जुनूँ ।
नाल-ए-शबगीरो-सोजे-जाविदाँ पैदा करें ।।

## श्रीमती कनीज फातिमा काश

तुम्हारी यादसे दिलको सजाके आई हूँ ।
मैं और खानये-उलफत बनाके आई हूँ ।।
तखैय्युलातकी वादीमे छुपके आलमसे ।
किसीकी गोदको अकसर सजाके आई हूँ ।।

वोह नशअ-खेज़िये-उलफत वोह ज़िन्दगीका शबाब ।
हसीन होटोसे अक्सर पिलाके आई हूँ ।।
रुख़ोपै आज भी इक अर्के-सदनदामत है ।
गुलोका रग चमनसे उडाके लाई हूँ ।।
तू 'काश' मुझसे न पूछे शबाबकी तफसीर ।
मेरे हबीब मैं सब कुछ लुटाके आई हूँ ।।

## श्रीमती सैयदा अख्तर

किसीकी यादमें आँसू बहा रही हूँ मैं ।
हदीसे-दर्दे-मुहब्बत सुना रही हूँ मैं ।।
सम्भल ज़माने-ए-हाज़िर कि तुझसे कुछ पहिले ।
करीब मज़िले-मकसूद जा रही हूँ मैं ।।
सुनी है जबसे ख़बर उनकी आमद-आमदकी ।
हरीमे-दीदये-दिलको सजा रही हूँ मैं ।।
अभी ज़माना नही उनके आज़मानेका ।
अभी तो अपनेको ख़ुद आज़मा रही हूँ मैं ।।
नफस-नफस है मेरा साज़े-नौब ऐ 'अख्तर' !
जो सुन रही हूँ जहाँको सुना रही हूँ मैं ।।

जिसमे सरूरे-दर्दे-गमे आशिकी नही ।
वोह ज़िन्दगी, तो मौत है, वोह ज़िन्दगी नही ।।
जिसमे बराये-रास्त हो उनसे मुआमला ।
वल्लाह ! ऐन होश है, वोह बेख़ुदी नहीं ।।

इक ख़ूने-अन्दलीबके दमसे थी सब बहार।
फ़ूलोमे अब वोह रग नही, दिलकशी नही॥
अल्लाहरे हिज्रे-यारकी हैरत तराजियाँ।
निकला हुआ है चाँद, मगर रोशनी नही॥
उनकी तरफ उठाऊँ मैं अब क्या निगाहे-शौक।
अपनी तजल्लियो ही से फ़ुर्सत अभी नही॥
यूँ दिन गुज़ारती हूँ किसीके फ़िराकमें।
ज़िन्दा बराये नाम हूँ और ज़िन्दगी नहीं॥

—शायर अगस्त १९४६ ई०

## श्रीमती सफ़िया रअना

हिजाबे-मुहब्बत उठाये गये हैं।
बडी शानसे हम बुलाये गये हैं॥
जिन्हे माहो-अजुम न अपना सके थे।
वोह अक्सर मेरे दिलमे पाये गये हैं॥
जवानीकी रितुमे निगहकी ज़बानी।
मुहब्बतके क़िस्से सुनाये गये हैं॥
वोह ख़ुद ही इलाजे-मुहब्बत करेगे।
जो इक दर्दे-दिलमे उठाये गये हैं॥
वही अश्क थे हासिले-इश्क 'रअना'!
तेरी यादमें जो बहाये गये हैं॥

## श्रीमती शान्ति बेख़ुद

फिर दास्ताने-दिलको रकम कर रही हूँ मैं।
कतरेको मौजे-बहरमें जम कर रही हूँ मैं॥

अच्छा हुआ कि आप मेरे दिलमें बस गये।
घर बैठे अब तवाफे-हरम कर रही हूँ मैं॥
जाहिद ! यह क्या हुआ मेरे जौके-नियाजको।
सजदे जो आज पेशे-सनम कर रही हूँ मैं॥
वक्ते-नजअ भी उनसे तसव्वुरमें बार-बार।
क्यो अर्जे-इल्तफाते-करम कर रही हूँ मैं॥
आसानियोके शौकमें 'बेखुद' हूँ इस कदर।
दुश्वारियोको अपने बहम कर रही हूँ मैं॥

## श्रीमती सहाब आगा शाइर

हजार बातें है दिलमे अभी बतानेको।
मगर जबाँ नहीं मिलती हमें सुनानेको॥
हम अहले-जर्फ अभी तक है एक जिन्से-लतीफ।
जिन्हे कुचल दिया दुनियाने आजमानेको॥
वोह आँख आज सितारे तराशते देखे।
जिन्होने रगे-तबस्सुम दिया जमानेको॥
हमारे फूल, हमारा चमन, हमारी बहार।
हमीको जा नहीं मिलती है आशियानेको॥
'सहाब' ! इतने तगैय्युरनवाज है हम भी।
कि अपने नगमोसे चौका दिया जमानेको॥

—आजकल १ जनवरी १९४७ ई०

## श्रीमती नाज

हुस्नका इश्क राज क्या जाने ?
सादगीये-नियाज क्या जाने ?

हायरी सादगी मुहब्बतकी।
यह नशेबो-फराज़ क्या जाने?
चोट सी दिलपै लग गई कैसी?
निगहे-नीमबाज़ क्या जाने?
'नाज़'के दिलपै क्या गुज़रती है?
तुझ-सा ज़ालिम यह राज़ क्या जाने?

## करामत फातिमा बेगम

भरी महफिलमें भी तनहाइयाँ महसूस करती हूँ।
कि दिलमें आजकल वीरानियाँ महसूस करती हूँ॥
कभी वोह दिन थे हासिल थी, मुझे गममें भी इक लज्जत।
मसर्रतमें भी अब तो तल्खियाँ महसूस करती हूँ॥
कभी मालूम होता है कि गोया है हरइक ज़र्रा।
कभी हर चारसू खामोशियाँ महसूस करती हूँ॥
वही है गुलशने-हस्ती मगर ऐ हमनशी! फिर भी।
खुदा जाने कि क्यो बेकैफियाँ महसूस करती हूँ॥
नही मालूम क्या दुनिया-ए-दिलमें इनकलाब आया।
सकूने-कल्बकी बरबादियाँ महसूस करती हूँ॥
कफसमे घुटके रह जाता है मेरा जौक़े-आज़ादी।
तडप जाती हूँ जब मजबूरियाँ महसूस करती हूँ॥
हुजूमे-गमसे घबराकर निकल आते है जब आँसू।
शिकस्ते-ज़ब्तकी रुसवाइयाँ महसूस करती हूँ॥

—आजकल १५ मई १९४६ ई०

## श्रीमती ज़ोहरा जमाल

अपने हर तारे-नज़रमें गो उन्हे पाती हूँ मै।
फिर भी दिलकी उलझनोमें हाय खो जाती हूँ मै॥

उनसे यूँ मिलती हूँ, अपने दिलकी खिलवतगाहमे।
जैसे कोई गुमशुदा-सी चीज़ पा जाती हूँ मैं॥
उनकी नज़रोने न जाने चुपके-चुपके क्या किया?
दिल बहलता ही नहीं, गो लाख बहलाती हूँ मैं॥

—आजकल १ अप्रेल १९४६ ई०

## श्रीमती सरला बर्क

उसका सानी जमाल मुश्किल है।
और मेरी मिसाल मुश्किल है॥
दिलके हाथों है जान आफतमें।
नासमझकी सम्भाल मुश्किल है॥
लाख मरहम रखे कोई दिलपर।
ज़ख्मका अन्दमाल मुश्किल है॥
अभी नादान है मेरा नासेह।
कैफमें एत्तदाल मुश्किल है॥
हम न कहते थे हज़रते मूसा!
ताबे-बर्के-जमाल मुश्किल है॥

## श्रीमती शफीक बानो शफीक

बार-हा मैं अपनी तासीरे-फुगाँ देखा किया।
बार-हा बरहम निज़ामे-दो जहाँ देखा किया॥

फिर रही थी कल जिन आँखोमें बहारे-आशियाँ।
आज उन्ही आँखोसे ख़ाके-आशियाँ देखा किया॥

ऐ 'शफीक'! हमदर्दिये-उल्फत कि मैं उसके निसार।
नज़अमें वोह मेरे मरनेका समा देखा किया॥

—आजकल १५ अक्तूबर १९४५ ई०

## श्रीमती जेबा

शबे-महताब जब, उस महलक़ाकी याद आती है।
तका करती हूँ हसरतसे मैं अकसर माहेताबाँको॥
ज़बाने-इश्कपर 'ज़ेबा' कभी शिकवा नहीं आता।
बुरा किस मुंहसे कहिये और वह भी हुस्ने-जानाँको॥

## उम्मतुलरुफ नसरी

जहाँपनाह! यह गुस्ताख़ियाँ हैं मजबूरन।
ख़ता मुआफ, मुझे आपसे मुहब्बत है॥

तुम्हारी याद बड़ी ख़ुशगवार थी लेकिन—
दिले-हज़ींके लिए तल्ख़ियाँ बढा भी गईं॥

मेरी तनहाइयोपै ऐ हमदम!
रातभर शमअ रोती रहती है॥

तेरी उल्फतकी लाज रखती हूँ।
वरना तर्के-वफा तो आसाँ है॥

मैं जी तो रही थी हिज्रमें दोस्त!
पर आह! वोह ज़िन्दगी नही थी॥

अब आपकी मुसकराहटोमें।
इक खास महक-सी आगई है॥

वाह, क्या कैफे-तसव्वुर है कि अक्सर हिज्रमें।
यूँ हुआ महसूस गोया वोह अचानक आ गये॥

जानती हूँ कि उन्हे मुझसे मुहब्बत है मगर—
जी धडकता है वोह जब मुझसे जुदा होते है॥

मैं जीत लाई उनकी मुहब्बत।
खामोश आँसू काम आ गये है॥

तुम भी खफा हो, हम भी खफा है।
लेकिन यह नजरें क्यो मिल रही है?

तेरा शबाब अपनी मिसाल आप ही रहा।
फिर कोई ऐसा फितनये-दौराँ न उठ सका॥

कहाँकी तमन्ना, कहाँकी मुहब्बत?
परीशाँ निगाहीसे मजबूर है हम॥

—निगार अगस्त १९४६ ई०

इक अनोखी-सी बात है ऐ दोस्त!
कैसे मानूँ कि तुमने याद किया॥

मैंने बेताब होके हाथ बढाये।
उसने बेताब होके चूम लिये॥

वोह आखिरे-शब किसीकी आमद।
तारे भी फलकपै सो गये थे॥

—निगार मार्च १९४७ ई०

आईना देखकर ख़याल आया।
तुम मुझे बेमिसाल कहते थे॥

ग़मे-ज़माना भी रखता है एक ख़ास गुदाज़।
शरीक कर लें उसे भी ग़मे-मुहब्बतमें॥

माज़ीके महल सरामें आओ।
यादोके हसीं दिये जलायें॥

अब तेरे बग़ैर ज़िन्दगानी।
बेमायनी-सी बात हो गई है॥

हम तल्ख़िये-हयातसे आगाह हो गये।
तेरी नज़रने फ़िक्रको सजीदा कर दिया॥

ठहर-ठहरके किनारे लगा मेरी किश्ती।
कि नाख़ुदा! मेरा दिल डूबता है साहिलपर॥

अजब नहीं तेरी हलकी-सी मुसकराहटसे।
मेरी हयातका वकफा तवील हो जाये॥

—निगार जून १९४६ ई०

---

# मुशायरा

महफिल-मुशायरा

मुशायरोका प्रचलन कब और कैसे हुआ और इनकी दागबेल डालने-वाला कौन था, यह बता सकनेमे इतिहासके पृष्ठ असमर्थ है, किन्तु यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि सुखनगोईका रिवाज अरबमे इसलाम धर्मके पूर्व भी था। मुशायरोका विकसित, व्यवस्थित और निखरा हुआ रूप जो आज है, भले ही वह तब न हो, परन्तु एक अस्पष्ट-सा मानचित्र अवश्य था, जिसपर वर्त्तमान मुशायरोका निर्माण हो सका।

**मुशायरोंका प्रारम्भिक रूप**

इसलामधर्मके पूर्व अरबके कबाइली, अशिक्षित, एव जनसाधारण, हाटो, मेलो, त्योहारो, उत्सवो आदिपर जब एकत्र होते तो उनमे शायरीका शौक रखनेवाले परस्पर शेर कहते-सुनते थे। कभी यह शेरगोई सीमित व्यक्तियोमे होती थी, कभी जनसमूहमे होती थी। परस्पर प्रतिद्वन्द्विता चलती थी। एक-दूसरे पर शायरीमे चोट करते थे। एक प्रकारसे यह ग्रामीण तुकबन्दी वाद-विवादका रूप ले लेती थी।

बहुत दिन नही गुज़रे इसी तरहकी अखाडे बाजी हिन्दी कवित्तोकी मैने अपने बचपनमे (१९१०–१९२०) मे मथूरा ज़िलेके कसबो-गाँवोमे देखी है। वहाँ झूलना, लावनी, सवैया आदि कहनेवालोके बाकायदे दल होते थे, जोकि उस दलके उस्तादोके नामपर अखाडे कहलाते थे। बा-कायदा उस्तादी-शागिर्दी चलती थी। यह अखाडेबाज़ी कोई आजी-विकाका साधन नही थी, अपितु शौकिया थी। कसबेमे बारात आई नही कि छेड-छाड करनेको बडे-बूढे, युवा-बालक, सभीके जी मचलने लगे। उन दिनो मजाक करनेका एक आम रिवाज था। बडे-से-बडे बारातीको अदना-से-अदना व्यक्ति छेड सकता था, परन्तु क्या मजाल कि कोई बुरा मान जाय। यही छेड-छाड कभी-कभी कवित्तगोईका रूप ले लेती थी।

जहाँ किसी एकने परिहासमे कवित्त कह दिया कि सामनेके पक्षको उसका जवाब कवित्तमे देना लाज़िमी हो जाता था, और कवित्तमे एक-दूसरेपर फब्तियाँ कसता था। एक-दूसरेकी बोलती बन्द करनेके लिए कवित्तमे अटपटे, पेचीदा प्रश्नोत्तरोकी झडी लगा देते थे। गरज़ हर गिरोह नहले-पर दहला मारनेकी ताकमे रहता था, और इस तरहकी मुकाबिलेबाज़ी करनेके लिए अवकाशके समय खूब अभ्यास किया जाता था।

लावनी कहने वालोके उत्तर प्रदेश तथा देहलीकी तरफ कलगीवाले और तुर्रेवाले दो दल बहुत प्रसिद्ध है। इनमे परस्पर खूब प्रतिद्वद्विता चलती है। कभी-कभी बडे मार्केके मोर्चे जमते है। इनमे बहुत-से पेशेवर भी होते है। जो बाज़ारो, मेलो, तमाशोमे चगपर गाते हुए फिरते है और सुननेवालोसे पैसा एकत्र करते है।

अरब या भारतके इन मजमोको मुशायरा या कवि-सम्मेलन भले ही न कहा जाय, परन्तु नीवकी ईंट तो कहना ही पडेगा, क्योकि इन्हीपर इनका निर्माण हुआ है। जब लिखने-पढनेके साधन नही थे, तब यही मजमे साहित्यिक अभिरुचिको तृप्त करते थे।

तरही मुशायरोका प्रचलन सम्भवत सबसे पहिले ईरानमे ईसाकी दसवी शताब्दीमे हुआ।

अरबके उन मजमोमे देहाती जीवनकी झलक होती थी, जन-साधारणके मनोभावोका प्रतिबिम्ब होता था, और ईरानके इन मुशायरोमे दरबारी शानो-शौकत होती थी। दरबारसे सम्बन्धित शायर बादशाहोके कृपा-पात्र बननेके लिए और अधिक-से-अधिक अर्थ झटकनेके लिए बादशाहोकी खुशामदमे प्रशसात्मक अतिशयोक्तियोसे भरे कसीदे कहते थे। अपने-अपने कसीदे कहकर ही सन्तोष नही करते थे, अपितु एक-दूसरेके कसीदेको निम्नस्तरका साबित करनेकी धुनमे उन कसीदोपर फिलबदी कसीदे भी कहते थे। इसी तरह—गज़लोपर गज़ले कहते थे। इस तरहके मुशायरे दरबारोतक ही सीमित थे। जन-साधारणका इनसे कोई सरोकार नही था।

भारतमे फारसी मुशायरोका प्रचलन सोलहवी शताब्दीमे हुआ। मुगलिया सल्तनतके पाँव जमनेपर यहाँ ईरानी शायर बहुत बडी सख्यामे आने लगे, और उन्हे दिल्ली, बीजापुर, गोलकुण्डा आदि सल्तनतोमे सम्मानपूर्वक आश्रय मिलने लगा। तत्कालीन-शासकोका आतिथ्य-सत्कार, उदारता, दान-शीलता और साहित्यिक अभिरुचि ही उनके यहाँ आते रहनेके मुख्य आकर्षण थे। ईरानी शायरोके आनेपर यहाँ भी फारसीके दरबारी मुशायरे होने लगे।

**मुशायरोका विकसित रूप**

मुहम्मद शाही दौर (१८वी शताब्दी) मे जब कि मुगलिया सल्तनत पतनोन्मुखी थी, मुशायरे अपने चरम विकासपर थे। इस युगमे रेख्ता (उर्दूका पूर्व नाम) काफी उन्नति कर चुकी थी, और मीर, दर्द, सौदा, सोज़—जैसे उच्च-कोटिके शायर आस्माने-शायरीपर चमक रहे थे। फारसी अब केवल रस्मी रह गई थी। जन-साधारणकी भाषा रेख्ता हो गई थी। अत· फारसी मुशायरोके अलावा अब रेख्तेके मुशायरे भी होने लगे, जो कि फारसी मुशायरोसे पृथकता एव भिन्नता दिखानेकी गरज़से मुराख्ते कहलाते थे। इन मुराख्तोकी शानो-शौकत और सजावटका क्या कहना ? महीनो पहिलेसे तैयारियाँ होती थी। ऐसे ही एक मुराख्तेकी कलमी तसवीर मिर्ज़ा फरहतउल्लाबेगने इस प्रकार खीची है—

**मुराख्ते**

"चूनेमे अबरक मिलाकर मकानमे कलई की गई थी। जिसकी वजहसे दरो-दीवार बडे जगमग-जगमग कर रहे थे। तख्तोपर चादनीका फर्श, उस पर कालीनोका हाशिया, पीछे गावतकियोकी कतार, झाडो, फानूसो, हाँडियो, दीवालगीरियो, कुमकुमो, चीनी-कन्दीलो और गिलासोकी वोह बहुतायत थी कि तमाम मकान बकिया नूर बन गया था। जो चीज थी

खूबसूरत और जो शै थी करीनेसे। सामनेकी सफके बीचो-बीच छोटा-सा सब्ज़ मखमलका कारचोबी शामियाना, गगा-जमुनी चोबो पर सब्जई रेशमी तनावोसे अस्ताहद था। उसके नीचे सब्ज मखमलकी कारचौबी मसनद, पीछे सब्ज़ कारचौबी गावतकिया, चारो चोबोपर छोटे-छोटे आठ चान्दीके फानूस कसे हुए, फानूसोके कँवल भी सब्ज़[1]। चोबोके सुनेहरी कलसोसे लगाकर नीचे तक मोटे-मोटे मोतियाके गजरे सेहरेकी तरह लटके हुए, बीचकी लडियोको समेटकर कलाबत्तूनी डोरियोसे (जिनके सिरो पर मुक्कैशके गुच्छे थे) इस तरह चोबोपर कस दिया गया था कि शामियानेके चारो तरफ फूलोके दरवाजे बन गये थे। दीवारोपर जहाँ खूँटियाँ थी, वहाँ खूँटियो पर और जहाँ खूँटियाँ नही थी, वहाँ कीले गाडकर फूलोके हार लटकाये थे। इस सिरेसे उस सिरेतक सफेद छतगीरी, जिसके हाशिये सब्ज़ थे, खीची हुई थी। छतगीरीके बीचोबीचमे मोतियोके हार लटकाकर लडियोको चारो तरफ इस तरह खीच दिया था कि फूलोकी छतरी बन गई थी। एक सहनचीमे पानीका इन्तजाम था। कोरे-कोरे घडे रखे थे और शोरेमे जस्तकी सुराहियाँ लगी हुई थी। दूसरी सहनचीमे पान बन रहे थे। बावर्चीखानेमे हुक्कोका तमाम सामान सलीकेसे जमा हुआ था। जा-बजा नौकर साफ-सुथरा लिबास पहिने दस्तबस्ता मुअदब खडे थे। तमाम मकान मुश्को-अम्बर और अगरकी खशबूसे पडा महक रहा था। कालीनोके सामने थोडे-थोडे फासले पर हुक्कोकी कतार थी। हुक्के ऐसे साफ-सुथरे थे कि मालूम होता था अभी दूकानपरसे उठ आये है। हुक्कोके बीचमे जो जगह छूट गई थी, वहाँ छोटी तिपाइयाँ रखकर उनपर खासदान रख दिये थे। खासदानोमे लालकन्दकी साफियोमे लिपटे हुए पान। गिलोरियोको साफीमे इस तरह जमाया था कि बीचमे एक-एक तह फूलोकी आ गई थी। खासदानोके बराबर छोटी-छोटी

[1]क्योकि शाही निशान सब्ज़ था।

किश्तियाँ, उनमे इलायचियाँ, चिकनी डालियाँ। मसनदके सामने चान्दीके दो शमादान, अन्दर काफूरी बत्तियाँ, ऊपर हलके सब्जरगके छोटे कँवल, शमादानके नीचे चान्दीके छोटे लगन, (थाली) लगनोमे केवडा। गरज़ क्या कहूँ एक अजीब तमाशा था"।[1]

शुरू-शुरूमे यह मुराख्ते भी दरबारतक ही सीमित रहे, परन्तु शनै शनै सार्वजनिक रूप लेते गये। फारसीके मुशायरे माँद पडते गये और मुराख्ते अब मुशायरे कहे जाने लगे।

दिल्ली उजडनेके बाद वहाँके शायर लखनऊ, रामपुर, हैदराबाद, अज़ीमाबाद, (पटना) टाँडा, टोक आदि जिन रियासतोमे पहुँचे, मुशायरोकी दाग़बेल डाल दी और इस तरह उर्दू-मुशायरे सर्वत्र होने लगे।

यह मुशायरे साहित्यिक जीवनका एक अग बन गये। इनको व्यवस्थिति और सुरुचिपूर्ण रूप देनेके लिए कायदे-कानून भी बनाये गये। उनका उल्लघन या पूर्णरूपेण पालन न करना असभ्यता एव बदतमीज़ी समझी जाती थी।

'मीर-मुशायरे' का इन्तखाब (अध्यक्षका चुनाव), गज़ल कहनेका सलीका, दाद देनेका तरीका, दाद मिलनेपर शायरके आभार प्रदर्शित करनेका शऊर, श्रोता और शायरोके बैठनेके स्थान, पहले और बादमे पढनेके नियम निश्चित किये गये।

दरबारी मुशायरोमे मीर मुशायरा स्वय शासक होता था। पहले वह स्वय गजल पढता था, बादमे अन्य शायर। मीर मुशायरेके सकेतपर चोबदार जिस शायरके सामने शमअ रख देता था, वही शायर गज़ल पढता था। जब मुशायरे दरबारकी परिधिसे निकल कर आम हो गये, तब भी किसी शासकको ही मीर मुशायरा बनानेका प्रयत्न किया जाता था। क्योकि इससे ख्याति प्राप्त शायरो एव प्रतिष्ठित नागरिकोको सुगमता

---

[1] आखिरी शमअ, पृ० ३१–३३।

पूर्वक मुशायरेके लिए आकर्षित किया जा सकता था। जैसे कि वर्त्तमानमे किसी भी समारोहका अध्यक्ष एव उद्घाटन कर्त्ता किसी मिनिस्टरको ही बनाया जाता है, चाहे उसे उस समारोहके उद्देश्यसे दूरका भी वास्ता न हो, और सचमुच मिनिस्टरोके कारण समारोह सफल भी होते है। इच्छित विद्वानो, प्रतिष्ठित व्यक्तियो, अफसरोका सहयोग तो मिलता ही है, अर्थ-सचय भी सुगमतासे हो जाता है। जब प्रजातन्त्रकालमे यह स्थिति है, तब वह तो सामन्ती युग था। प्राय सभी अच्छे शायर दरबारसे सम्बन्धित होते थे, प्रतिष्ठित नागरिकोका भी कुछ न-कुछ दरबारसे वास्ता होता था और स्वय शासक शायर, अथवा शायर-नवाज होते थे। अत उनको मीर-मुशायरा बनानेका प्रयत्न स्वाभाविक था। श्रोताओ और शायरोके यथा स्थान बैठ जानेके बाद मीर-मुशायरा तशरीफ लाते थे। एक देहलवी मुशायरेके मीर मुशायरा मिर्जा फतहउलमुल्क उर्फ मिर्जा फखरू युवराज थे। उनकी तशरीफ आवरीका चित्र मिर्जा फरहतउल्लाबेगने इस प्रकार खीचा है—

"हवादारसे उनका नीचे कदम रखना था कि सब सरोकद खडे हो गये। चार चोबदार सब्ज खिडकीदार पगडियाँ बान्धे, नीची-नीची सब्ज बानातकी अचकने पहने, सुर्खशाली रूमाल कमरसे लपेटे, हाथोमे गगा-जमुनी असा और मोरछल लिये हुए हवादारके पीछे थे। उधर मिर्जा फखरूने फर्शपर कदम रखा। उधर असाबरदार तो उनके सामने आ गये और मोरछलबरदार पीछे हो लिये। इस सिलसिलेमे यह जुलूस आहिस्ता-आहिस्ता शामियाने तक आया। मिर्जा फखरूने शामियानेके करीब खडे होकर सबका सलाम लिया। फिर चारो तरफ नजर डालकर कहा "इजाजत है।" सबने कहा—"बिस्मिल्लाह-बिस्मिल्लाह" इजाजत पाकर यह शामियानेमे गये और सबको सलाम करके बैठ गये। दूसरे सब लोग बैठनेकी इजाजतके इन्तजारमे खडे थे। उन सबकी तरफ नज़र डालकर कहा—"तशरीफ रखिये, तशरीफ रखिये।" सब लोग सलाम करके

अपनी-अपनी जगह बैठ गये। मोरछल बरदार शामियानेके पीछे और असावरदार सामनेकी सफकी पुश्तपर जा खडे हुए। "मीर मुशायरेका इशारा पाते ही दोनो चोवदारोने बा-आवाज बुलन्द कहा—"हजरत मुशायरा शुरू होता है।"[1]

मुशायरेके अध्यक्ष यदि स्वय बादशाह या नव्वाब होते तो पहले वह स्वय गजल पढते फिर क्रमश शायर पढते। यदि किसी सार्वजनिक मुशायरेमे बादशाह शिरकत न फरमाते और प्रबन्धकोके आग्रहपर गजल भेजना मजूर कर लेते तो मुशायरेके प्रारम्भमे किसी खुश गुलूसे बादशाहकी गजल पढवाई जाती, फिर मीर मुशायरा अपनी गजल पढते, फिर बारी-बारीसे जिस शायरके आगे शमअ रखी जाती, वह पढता था। शायरोके पढने-का ढग और अन्दाजे-बयान अपना-अपना होता था। मगर कुछ शायर ऐसे भी होते थे, जो पढनेके साथ हाव-भाव भी व्यक्त करते थे। एक बानगी देखिये—

"शमअ सरक कर लाला बालमुकुन्द 'हुजूर' के सामने आई। यह जातके खत्री और ख्वाजा मीर 'दर्द' के शागिर्द है। कोई ७०–८० बरसका सिन है। सफेद नूरानी चेहरा, उस पर सफेद लिबास, बगलमे अँगोछा, कधोपर सफेद काश्मीरी रूमाल। बस जी चाहता था कि उनको देखे ही जाइये। शमअ सामने आई तो उन्होने उज्र किया कि—"मैं अब सुनानेके काबिल नही रहा। सुननेके काबिल रह गया हूँ।" जब सभोने इसरार किया तो उन्होने यह किता पढा—

**न पाँवोमें जुम्बिश, न हाथोमें ताक़त।**
**जो उठ खींचें दामन हम उस दिलरुबाका॥**
**सरे-राह बैठे हैं और यह सदा है।**
**कि अल्लाहवाली है बे दस्तो-पाका॥**

---

[1]आखिरी शमअ, पृ० ४२–४३।

किता इस तरह पढा कि खुद तसवीर हो गये। 'न पाँवोमे ताकत' कहते हुए उठे, मगर पाँवने यारी न की, लडखडाकर बैठ गये। 'न हाथोमे ताकत' कहकर हाथ उठाये, मगर जोफसे वह भी कुछ यूँही उठकर रह गये। दूसरा मिसरा जरा तेज पढा। तीसरा मिसरा पढते वक्त इस तरह बैठ गये, जैसे कोई बे-दस्तो-पा सरे-राह बैठकर सदा लगाता है और एक दफा ही। दोनो आँखोको आसमानकी तरफ उठाकर जो चौथा मिसरा पढा तो यह मालूम होता था, गोया सारी मजलिसपर जादू कर दिया। हरेकके मुहसे तारीफके बजाय बे साख्ता यही निकल गया कि "अल्लाह वाली है बे दस्तो-पाका।"[१]

अच्छा शेर पढे जाने पर आम तौरपर श्रोताओमेसे 'वाह-वा, सुब्हान अल्लाह, मरहबा' आदिका शोर बुलन्द होता ही था। मगर शायर भी अपने ढगसे दाद देते थे। इस तरहके दाद देनेके ढगकी एक खयाली तसवीर बाबा-ए-उर्दू अल्लामा प० दत्तात्रिय 'कैफी'ने यूँ खीची है—

"शमअ इन्शाके सामने रखी जाती है। इन्शा गजल पढते है—"

**कमर बान्धे हुए चलनेको याँ सब यार बैठे है ।**
**बहुत आगे गये, बाकी जो है तैयार बैठे है ।।**

सौदा—क्या मतला कहा है ?

मीर—लफ्ज है कि तीरो-नश्तर।

दर्द—सैयद इन्शा इसकी दाद है छाती कूटना।

मुसहफी—वाह क्या हमागीर तबीयत पाई है। क्या दर्दभरा मतला कहा है।

नर्सीम—बे पनाह मतला हुआ है।

नासिख—वल्लाह दिल भरा आता है।

जोक—दो मिसरे है कि दुधारा तेगा, दिलमे खुबा जाता है।

गालिब—लुत्फ यह कि हुस्ने-अदा कितनी नुदरत लिये हुए है।

---

[१]आखिरी शमअ, पृ० ७१।

इन्शा— न छेड ऐ निकहते-बादे-बहारी राह लग अपनी।
तुझे अठखेलियाँ सूझी है हम बेजार बैठे है॥

मीर—"शेर है कि दुगाडा। अब ऐसा शेर और न पढना, वरना एक-आध जनाजा आज मुशायरेसे उठेगा।"[1]

इन उर्दूके मुशायरोका प्रारम्भ भी दरबारोसे हुआ था। अत इनमे भी वे सब दोष आ गये जो फारसी मुशायरोमे थे। प्रतिद्वन्द्वीको नीचा दिखानेके लिए उस्ताद अपने शिष्योके दलके साथ आते। ये शिष्य प्रतिद्वन्द्वीके पढनेपर फब्तियाँ कसते, नुक्ताचीनी करते, व्याकरणकी भूल निकालते, शेरमे कहे हुए भावोके लिए प्रमाण माँगते और अपने पक्षके शायरके गजल पढनेपर खूब-खूब दाद देते। कौन कहाँ बैठे और कौन पहिले या बादमे पढे, इस पर भी ऐतराज उठते। परिणामस्वरूप यह मुशायरे साहित्यिक गोष्ठी न रहकर पहलवानी अखाडे बन गये।

'सौदा' जिससे नाराज हो जाते, भरी महफिलमे उसकी हिजो कह डालते। 'आतिश'-ओ-'नासिख', 'मुसहफी'-ओ-'इन्शा', 'जुरअत'-ओ 'करेला' भाण्डके वाद-विवादोने जो घिनावना रूप ले लिया था, उससे खीझकर 'मुसहफी' ने तत्कालीन मुशायरोके बारे मे कहा था—

**बज्मे-शुअरा है या यह मुर्गियोकी पाली है**

इन झगडोके कारण बहुत-से लोगोकी तो मुशायरे करानेकी हिम्मत ही न होती थी और जो साहब अपने यहाँ नियमित[2] मुशायरे कराते थ, उनमे-से भी अक्सर स्थगित करनेको वाध्य हो जाते थे। भले आदमी इन मुशायरोमे जानेसे घबराते थे। एक साहब हकीम 'मोमिन'को मुशायरेका निमत्रण देने गये तो 'मोमिन' बोले—"बस साहब मुझे तो मुआफ ही कीजिय। अब देहलीके मुशायरे शरीफोके जानेके काबिल नही रहे। एक साहब है,

---

[1] तमसीली मुशायरा, पृ० ४६–४७।

[2] कोई साप्ताहिक, कोई मासिक, कोई छमाही मुशायरे कराते थे।

वह अपनी उम्मत (अनुयायियो, शिष्यो) को लेकर चढ आते है। शेर समझनेकी तो किसीको तमीज नही, मुफ्तमे वाह, वाह, सुब्हान अल्लाहका गुल मचाकर तबीयतको मुन्नगिज (अप्रसन्न) कर देते है। दूसरे साहब है, वोह हुदहुद (शिष्यका उपनाम) को साथ लिये फिरते है, और ख्वाम-ख्वाह उस्तादोपर हमले कराते है। खुद तो मैदानमे आते नही और अपने ना अहल (मूर्ख) पट्ठोको मुकाबिलेमे लाते है। भई मैने तो इसी वजहसे मुशायरोमे जाना ही तर्क कर दिया है।"[१] बाज-बाज शायर तो अपने साथ बटेरे भी लाते थे। मिर्जा फरहतउल्लाबेग एक मुशायरेके बारेमे लिखते हुए फरमाते है—

"एक चीज जो मुझे अजीब मालूम हुई, वोह यह थी कि किले वाले (शाहजादे वगैरह) जितने आये थे, सबके हाथोमे बटेरे दबी हुई थी। यह बटेरबाजी और मुर्गबाजीका मर्ज किलेमे बहुत है। रोजाना तीतरो, बटेरो और मुर्गोकी पालियाँ होती है। एक शाहजादे साहबने तो कमाल किया है। एक बडे छकडे पर ठाठर लगाकर छोटा-सा घर बना लिया है और ऊपर छतपर मिट्टी डालकर कॅगनी बो दी है। ठाठरमे खुदा झूठ न बुलाये तो लाखो ही पिदडियाँ है। जहाँ चाहा छकडा ले गये और पिद-ड़ियाँ उडादी। ऐसी सधी हुई है कि झल्लडसे एक भी फटकर नही जाती। उन्होने झण्डी हिलाई और वोह उडी, उन्होने आवाज दी और वोह छतपर आकर बैठ गई।"[२]

मुशायरा प्रारम्भ होनेपर यह बटेरे थैलियोमे बन्द कर दी जाती थी।

कुछ मुशायरे बहुत व्यवस्थित और अनुशासनपूर्ण होते थे। बडे-से-बडा आदमी नियम भग करनेका साहस नही कर सकता था। देहलीके प्रसिद्ध सूफी शायर ख्वाजा 'दर्द' के यहा पाक्षिक मुशायरे हुआ करते थे।

---

[१] आखिरी शमअ, पृ० २६।

[२] आखिरी शमअ, पृ० ४२।

शाह आलम भी उसमे शरीक होनेकी अभिलाषा रखते थे। मगर आप टालते ही रहे। बडे आदमियोके स्वागत-सत्कारमे जो कष्ट और ज़िल्लते उठानी पडती है, शायद इसीका ख़याल करके ख़्वाजा दर्दने अपनी आध्यात्मिक शान्तिमे बिघ्न न डालनेकी गरजसे उन्हे न बुलाना चाहा होगा। फिर भी एक रोज सूचित किये बिना ही बादशाह मुशायरेमे तशरीफ ले आये। तशरीफ जब ले ही आये तो जहाँ उचित स्थान मिला, बैठ गये। सयोगकी बात पाँवमे दर्द होनेके कारण बादशाहने पाँव फैला दिये। ख़्वाजा साहबको यह अच्छा न लगा। बोले—"महफिलमे पाँव पसारकर बैठना तहज़ीबके खिलाफ है।" बादशाहने अपने दर्दकी कैफियत बताकर मआज़रत चाही तो ख़्वाजा साहबने जवाब दिया कि अगर पाँवमे दर्द था तो यहाँ आनेकी आपने तकलीफ ही क्यो की।"[1]

इन मुशायरोसे उर्दूका खूब प्रसार हुआ। वह कोने-कोनेमे पहुँच गई। जबान निखरती गई, मुहावरे खरादपर चढकर चमकते गये। भावो और उदाहरणोसे उर्दूका कोश भरता गया।

लाभके साथ हानि भी हुई। उस हानिके निम्न कारण थे—

१—कोई भी शायर उर्दूका पूर्णरूपेण ज्ञान प्राप्त किये बगैर और उस्तादको दिखाये बगैर मुशायरेमे गजल नही पढ सकता था। इससे उर्दूका क्षेत्र सीमित होने लगा।

२—विरोधियोकी कटु आलोचनाओके भयसे अक्सर शायर नवीन भावो—उदाहरणोको शेरमे समोते हुए झिझकते थे और वही पुराने सुने-सुनाये विचारोकी पुनरावृत्ति करते रहते थे।

३—शब्दोके वाह्य सौन्दर्य और उसके जाहिरा रख-रखावपर दाद अधिक मिलती थी।

४—शायराना करतब दिखानेके लिए बडे ऊट-पटाँग, अजीबो-

---

[1] आबे-हयातके लतीफे, पृ० २२।

गरीब बेमायने मिसरे तरह दिये जाते थे। जिनपर कई-कई गज़ले लिखी जाती थी। भला बताइये इस तरहके मश्के-सुखनसे उर्दू-शायरीका क्या महत्व बढ सकता था—

बुलबुल चमनसे रूठके बैठी है ठुठ पर

---

न उडा सकता है मुँहकी न बगलकी मक्खी

---

अयाँ हो नैरंगिये-दिगरसे फलक पै बिजली, ज़मी पै बारां

---

हुआ रगी चमन सारा अहा-हा-हा, अहा, हा-हा

---

ज़मी ठडी, हवा ठडी, मकाँ ठडा, चमन ठडा

१८५७ ई० के विप्लवके बाद गज़लके साथ-साथ मुशायरोकी भी मुखालफत प्रारम्भ हुई। एक ही मिसरे तरहपर सैकडो शायरोकी प्राय एक-से भावो-विचारोकी गजले सुनते-सुनते लोग ऊब-से गये थे। अत लाहौरमे १५ अगस्त १८६७ ई० को 'अजुमने-उर्दू'की स्थापना की गई। जिसमे नज्मो, भाषणो, और निबधोके पढनेका रिवाज डाला गया। नज्मोकी महफिलोको मुनाजमा कहा जाता था। इन मुनाज़मोके लिए पहिलेसे शीर्षक निश्चित कर दिये जाते थे, जिनपर शायर नज्म लिखकर लाते और मुनाज़मोमे पढते थे। इस प्रकार शायरीको जीवनके समीप-से-समीप लानेका प्रयत्न किया जाता था। लेकिन यह क्रम अधिक दिन नही चल सका और यहाँ भी नज्म शीर्षकके साथ गज़लोके लिए मिसरा तरह दिया जाने लगा और यह भी आम मुशायरे-जैसी चीज बनकर रह गई।

**मुनाज़मे**

मुद्रणका प्रसार होनेपर मुशायरे तहरीरी भी होने लगे। पत्र-सम्पादक कोई मिसरा तरह देकर उसपर गजल भेजनेको अच्छे-अच्छे शायरोको आमत्रण करता था और गजले आनेपर पत्रमे प्रकाशित करता था। इन लिखित मुशायरोसे उर्दूको बहुत लाभ पहुँचा। न तो इन लिखित मुशायरोमे महफिली मुशायरोकी व्यवस्थाकी परेशानी रही और न पारस्परिक कलहका भय। एक ही जगह भिन्न-भिन्न शायरोका कलाम सुलभ होनेसे जनताकी रुचि परिष्कृत हुई। अच्छे-बुरे समझनेका शऊर आया। जो अच्छे शायर अच्छा न पढ सकनेके कारण बाज़ घटिया शायरोके आगे उनकी गलेबाजीकी वजहसे मॉद पड जाते थे, अब पूरे आबो-ताबके साथ चमके। जनतामे शायरीकी तरफ सही, वास्तविक रुचि उत्पन्न हुई। इसप्रकारके मुशायरे बाज उर्दू-पत्र अब भी कराते रहते है। 'शायर' का १९५० का मुशायरा नम्बर हमारे सामने है।

**तहरीरी मुशायरे**

**इन्ही अँधेरोसे बज्मे-गीतीको एक दिन रोशनी मिलेगी**

मिसरा तरह पर ४ शायरोकी नज्मे और १०६ शायरोकी गजलें १५२ पृष्ठोमे मुद्रित है। यहाँ हम बतौर नमूना कुछ ख्यातिप्राप्त शायरोकी नज्मे और गज़लोके अपनी पसन्दके चन्द अशआर हर रगके बहुत-बहुत शुक्रियेके साथ 'शायर' से उद्धृत कर रहे है।[1]

मुशायरेके इन चुने हुए अशआरसे पाठकोको विदित हो सकेगा कि एक ही मिसरा तरहपर शायर अपने भाव किस तरह व्यक्त करते है। साथ ही पुरानी शायरी और आजकी शायरीमे कितना महान अन्तर आगया है, यह भी जान सकेगे। पुरानी और नई शायरीपर तुलनात्मक अध्ययन हम विस्तारसे सिहावलोकनमे दे रहे है।

---

[1]अल्लामा सीमाब अकबराबादी द्वारा स्थापित और हजरत एजाज सद्दीकी द्वारा सम्पादित। पहले आगरेसे प्रकाशित होता था, अब बम्बईसे प्रकाशित होता है।

## नज्मोके चन्द अशआर

ऐ असरे-नौके शाइर !
खबर भी है असरे-नौके शायर[1] कि जीस्त[2] है एक जुर्मे-सगी[3] ।
यह जुर्मकी शमअ[4] जब बुझेगी तो दौलते-रोशनी[5] मिलेगी ।।

रुबाब[6] जब बे सदा[7] बनेगा तो राग गूंजेंगे जेरे-गरदूं[8] ।
कलीम[9] जब जेरे-खाक होगा, कलामको बरतरी[10] मिलेगी ।।

किसीको इसमें नहीं है घाटा, अदबका[11] है 'जोश' नक्द सौदा ।
गदा तो पैगम्बरी मिलेगी, सदा तो फिर दावरी[12] मिलेगी ।।

—जोश मलीहाबादी

## एक महाजरीन[13] दोस्तसे

तेरी गरीबीका क्या मदावा[14] कि तू है अहसासका[15] सताया ।
रहा अगर तेरा जहन[16] मुफलिस तो हर जगह मुफलिसी मिलेगी ।।
खला-ए-जहनीको[17] अपने पुर कर[18], नहीं तो जीना भी होगा दूभर ।
यह जेबे-फितरत[19] रही जो खाली तो सारी दुनिया तही[20] मिलेगी ।।
वतनको तू छोड दे मगर, क्या, गमे-वतन तुझको छोड देगा ?
वोह साजकी[21] हो, कि मतरुबाकी[22] हरइक सदा दुख भरी मिलेगी ।।
वहाँ जो अहलेवतन मिलेंगे तो वोह भी तसवीरे-गम मिलेंगे ।
अदा-अदा गमजदा मिलेगी, नजर-नजर शबनमी[23] मिलेगी ।।

---

[1]नवयुगके कवि, [2]जिन्दगी, [3]महान अपराध, [4]दीपक, [5]प्रकाश-धन, [6]सरोद, [7]बेआवाज़, [8]आकाशके नीचे, [9]शायर, लेखक, [10]श्रेष्टता, [11]साहित्यका, [12]जन्नतकी न्यायाधीशी, [13]देश छोडने वाले (पुरुषार्थी), [14]उपाय, इलाज, [15]घटिया मनोवत्तिका, [16]मनोभाव, [17]मानसिक गड्ढेको, [18]भर, [19]मनकी जेब, [20]खाली, [21]वाद्यकी, [22]सगीतज्ञकी, [23]भीगी हुई ।

यहाँका जब तजकरा छिडेगा, तो उन फिज़ाओमें[1] दम घुटेगा।
बुझी-बुझी होगी शमअ दिलकी, धुआँ-धुआँ ज़िन्दगी मिलेगी॥
न कर मुझे मौतके हवाले, वतनसे ऐ दूर जानेवाले!
यहाँ तडपती है आज लाशें, यहीपै कल ज़िन्दगी मिलेगी॥
यह ज़र्द पत्ते सिमट-सिमटकर समेट ही लेंगे अपने बिस्तर।
चमन सलामत, बहार इक दिन तवाफ[2] करती हुई मिलेगी॥
नया ज़माना, नया सबेरा, नई-नई रोशनी मिलेगी।
यह रात जब ले चुकेगी हिचकी हयात[3] इक दूसरी मिलेगी॥

—नज़ीर बनारसी

## मजिलतक

अभी तो गीतीकी[4] ज़ुल्फे-पेचाँको और भी बरहमी[5] मिलेगी।
अभी तो इन्सानियतको हमदम! कुछ और शरमिन्दगी मिलेगी॥
अभी तो दामनपै आदमीयतके और धब्बे हैं पडनेवाले।
अभी हयाते-बशरके[6] होटोको और भी तिशनगी[7] मिलेगी॥
ख़लूस[8] सोयेगा और कुछ दिन अभी तो मुँह ढाँपकर कफनसे।
अभी तो मह्रो-वफाके[9] जज़बेको[10] हर घडी मौत ही मिलेगी॥
अभी तो चेहरोपै और उभरेंगी गमकी पुरहौल झाइयाँ-सी।
अभी जबीनोपै[11] अहले-गुलशनके और भी बेबसी मिलेगी॥
कुछ और खूने-जिगरसे गुलकारियाँ-सी होगी हर आस्तीपर।
अभी कुछ और आँख हर बशरकी इसी तरह शबनमी[12] मिलेगी॥

---

[1]वातावरणमे, [2]प्रदक्षिणा, [3]जिन्दगी, [4]ससाररूपी प्रेयसीकी, [5]परेशानी, [6]मनुष्यजीवनके, [7]पिपासा; [8]स्नेह, मित्रता, [9]नेकी-भलाईकी, [10]भावनाओको, [11]मस्तकोपै; [12]भीगी हुई।

इन्हीं मसाइबकी[1] गोदमें पल रही है 'नाजिश' मसर्रतें[2] भी।
इसी जहन्नुमकदेसे[3] इक रोज राह फरदौसकी[4] मिलेगी॥

—नाजिश परतापगढी

## गजलोके चन्द अशआर

फसुर्दगीकी[5] तहोमें बाकी हरारते-जिन्दगी मिलेगी।
निगाहने दूरतक कुरेदा तो आग दिलमे दबी मिलेगी॥
हयाते-ताजापै[6] मरनेवाले! हयाते-ताजा है मौत ही से।
यह जिन्दगी पहले खत्म करले, तो फिर नई जिन्दगी मिलेगी॥
न भूल ऐ तारके-मुहब्बत[7]! कि तर्के-उल्फत भी इक खलिश है[8]।
जो फाँस तूने निकाल दी है, वोह फाँस दिलमें लगी मिलेगी॥
जरा-सी खातिर शिकस्तगीकी[9] नहीं है बरदाश्त आदमीको।
कलीको वक्ते-शिकस्त देखो तो मुसकराती हुई मिलेगी॥

—सीमाब अकबराबादी

वोह आप आयेंगे वक्ते-आखिर इजाजते-दीद[10] भी मिलेगी।
किसे खबर थी कि मौत ही में हलावते-जिन्दगी[11] मिलेगी॥
तलाशकी हद तो खत्म कर दे, हसूले-मक़सदकी फिक्र क्या है?
जहाँ कदम लडखडाये थककर वहीं यह दौलत पडी मिलेगी॥
कमरको कसले तो मुन्तजिर बन,[12] कि जिसदम होगी तलब[13] अचानक।
न वक्फा[14] इक साँसका रहेगा, न फुरसत इक बातकी मिलेगी॥

---

[1]मुसीबतोकी, [2]खुशियाँ, नरकसे, [4]स्वर्गमार्गकी, [5]मुर्झाहटकी, [6]नवजीवनपै, [7]प्रेम-त्यागी, [8]चुभन, [9]पराजयताकी; [10]दर्शनोकी आज्ञा, [11]जीवन-मिठास, [12]प्रतीक्षा करनेवाला, [13]बुलाहट, [14]अन्तर।

सम्भलके रह, है जो रिन्दे-मशरब,[1] हवास खोये तो खो दिया सब ।
न होगा लुत्फे-खुदी[2] ही हासिल, न लज्जते-बेखुदी[3] मिलेगी ।।
कठिन मुहब्बतकी मजिलें है और आगे बढना है बे सहारे ।
जब 'आरजू' आप मिट चुकेंगे तो आरजूए-दिली[4] मिलेगी ।।

—आरजू लखनवी

अजीज[5] जब होगा बागबाँको चमनका हर गुल हर आशियाना ।
उरूस[6] जैसे हो एक शबकी[7] बहार ऐसी सजी मिलेगी ।।
जमीरे-शबसे[8] तुलूअ[9] होगा इक आफताबे-निजामे-ताजा[10] ।
नई नवेली सहरकी[11] किरनोसे खेलती जिन्दगी मिलेगी ।।
बजाए हुब्बेवतन है बाहम चलन बगावत कि दुश्मनीका ।
यही जो पायाने-हुर्रियत[12] है, तो खाक आसूदगी[13] मिलेगी ।।
बुने है नफरतने जाल क्या-क्या, फरेबो-मकरो-दगा-ओ-शरके ।
यह जिनके गुन है, यह उनके दावे कि जल्द ही शान्ति मिलेगी ।।
जो नेकियाँ है शिकस्तखुरदा[14] तो सरनगूँ रास्तीका परचम[15] ।
यही जो नक्शा है, आदमीयत कफनमें लिपटी हुई मिलेगी ।।
यही जो है दुन्द ख्वाहिशोका यही जो है गन्दगीकी पूजा ।
मुहज्जब[16] इन्साँकी वहशियोसे कड़ी-कड़ीसे जुडी मिलेगी ।।

—असर लखनवी

निशाने-सोजे-दरूँ[17] हमारा, मिटा नही है न मिट सकेगा ।
अगर्चे दिल जलके रह गया है, कुछ आग फिर भी दबी मिलेगी ।।

—वहशत कलकतवी

---

[1]सच्चा मद्यप, [2]अहम-आनन्द, [3]आत्मलीनताका सुख, [4]हृदयाभिलाषा, [5]प्रिय, [6]दुल्हन, [7]रातकी, [8]अन्त करण रूपी रात्रिसे, [9]उदय, [10]नव-व्यवस्था-सूर्य, [11]प्रात कालकी, [12]स्वतन्त्रताकी सीमा, [13]सुख-शान्ति, [14]पराजित, [15]भलाईकी ध्वजा झुकी हुई, [16]भद्र पुरुषोकी, [17]अन्तरग आग ।

नक़ाब रुखसे उठायेंगे वोह, जरूर महशरमें आयेंगे वोह।
मगर इसे पहले सोच लूं मैं, इजाजते-दीद[1] भी मिलेगी॥

—नूह नारवी

अगर मैं नाकामे-दीद मर जाऊँ अपने कूचेमें ढूँढ लेना।
वहीं कहीं ख़ाको-ख़ूमें गलतां[2] मेरी तमन्ना पडी मिलेगी॥
ब-होश-ह-वास ऐ मुसाफिरे-राहे-जिन्दगी! यह वोह रास्ता है।
जहाँ तुझे रहबरीकी[3] सूरतमें जा-बजा रहजनी[4] मिलेगी॥

—मानी जायसी

ख़ुदाकी रहमतको पारसा अब, अजाबे-दोजख़ समझ रहे हैं।
उन्हे गुमाँतक न था कि जन्नत गुनाहगारोको भी मिलेगी॥

—जोश मलसियानी

चरागो-सजदा जलाके देखो, है बुतकदा दफ्न जेरे-काबा[5]।
हुदूदे-इसलाम ही के अन्दर यह सरहदे-काफिरी मिलेगी॥
हुदूदे-दैरो-हरमसे हटकर झुका जबींने-नियाज अपनी।
गरजसे जब बेनियाज होगा, तो उजरते-बन्दगी मिलेगी॥
है जौरे-सैयादका ही सदका चमनकी हगामा आफरीनी।
तबाहियाँ जिस जगहपै होगी वहीं कहीं जिन्दगी मिलेगी॥

—सिराज लखनवी

न ख़ौफे-तूफां न शौके-साहिल ख़ुशामदें नाख़ुदा करें क्यो।
जो इन थपेडोको सह गये हम तो ख़ुद नई जिन्दगी मिलेगी॥

—महवी लखनवी

---

[1]देखनेकी आज्ञा, [2]सनी हुई, [3]पथ-प्रदर्शकी, [4]डाकेज़नी, [5]जहाँ पहले मूर्तियाँ थी, उन्हीको तोडकर वही काबा बना था, उसी ओर सकेत है।

जो राज आजादिए-वतनमें निहाँ था कौन उसको जानता था।
कि इक तरफ ख़्वाजगी[1] मिलेगी तो इक तरफ बन्दगी[2] मिलेगी॥
यही है जमहूरियतके[3] मानी तो फिर गुलामीका क्या गिला है।
किसीको गम होगा और किसीको मसर्रते-दायमी[4] मिलेगी॥
जो मुल्कमें इनकलाब आया, तो क़त्लो-गारतके साथ आया।
समझ रहे थे समझनेवाले, कि इक नई ज़िन्दगी मिलेगी॥
—सरीर काबरी मीनाई गयावी

किसे गुमाँ था कि जुअमे-ख़ालिकके बावजूद[5] आदमे-हज़ीको[6]।
न इशरते-ख़्वाजगी[7] मिलेगी, न लज़्ज़ते-बन्दगी मिलेगी॥
अभी कहाँ आदमीकी मज़िल, अभी तो ख़ुद आदमी ही गुम है।
यह अहदे-हाज़िर तबाह हो ले, तो मज़िले-आदमी मिलेगी॥
ख़िरदको[8] अपनी जुनूं बनाकर जो ज़िन्दगीको ख़िराज[10] देगा।
यहाँ उसी साहबे-ख़िरदको जुनूंकी पैगम्बरी मिलेगी॥
यह ना उम्मीदी यह बे यकीनी, यकीनो-उम्मीदकी झलक है।
इन्हीं अँधेरोको पार करके यकीनकी रोशनी मिलेगी॥
हज़ार हो राख क़ल्बे-'सागर' मगर इसी राखमें है जौहर।
तलाश जब अहले-दिल करेंगे, शररकी[11] दुनिया दबी मिलेगी॥
—सागर निज़ामी

सुना है दीवानगाने-उलफतको[12] दादे-आशुफ्तगी[13] मिलेगी।
अगर यह सच है तो जुल्फेगीतीको[14] और कुछ बरहमी[15] मिलेगी॥

---

[1]पूज्यता (नेतागिरी), [2]गुलामी (सर झुकानेकी मजबूरी), प्रजातन्त्रताके, [4]स्थाई सुख, [5]विश्वास, खयाल, [6]ईश्वरके भरोसेके होनेपर भी, [7]गमगीन आदमीको, [8]आदरका सुख, मालिकाना आनन्द, [10]अक्लको, [11]कर, टैक्स, [12]चिनगारियोकी, [13]प्रेमोन्मत्तोको, [14]परेशानियोकी दाद, प्रशसा, [15]ससाररूपी प्रेयसीकी जुल्फोको, [16]परेशानी।

ग़रूबे-ख़ुरशैदपर[1] रहेगा फरोगे-शबका[2] मदार[3] कबतक ?
यह सोचता हूँ कि इन सितारोको कब नई ज़िन्दगी मिलेगी ॥
वोह सुबहे-जन्नत कि जिसने ज़ाहिदको दीनो-दुनियासे खो दिया है ।
कहीं मिलेगी तो मैकदेका तवाफ़[4] करती हुई मिलेगी ॥
यही नशेमन तिरी निगाहोको जिसने महदूद कर दिया है ।
इसी नशेमनके आईनेमे क़फसकी तसवीर भी मिलेगी ॥
कहाँ-कहाँ हमसफर रहे हम, वही है बेगानगीका आलम ।
किसे ख़बर थी कि हर तमन्ना, ब-सूरते-अजनबी मिलेगी ॥
गरज़-परस्तोकी दोस्तीके फरेब सब खुल चुके है लेकिन ।
'रविश' यह दुनिया कदम-क़दमपर ख़ल्सकी[5] मुद्दई मिलेगी ॥
—रविश सद्दीकी

इस अजुमनमें शरीक होनेसे पहले ही मै यह जानता था ।
नवाजिशें दूसरोकी किस्मत, मुझे फकत बरहमी मिलेगी ॥
अज़लके दिन जब बिनाए-हस्ती रखी थी, ऐलान कर दिया था ।
सरोंको सौदा[6] नसीब होगा दिलोको आशुफ्तगी[7] मिलेगी ॥
हुए थे जिस दिन असीर हम सब, चमनके आसार कह रहे थे ।
तुम आओगे जब कफससे छुटकर बहार जाती हुई मिलेगी ॥
—माहिरउलकादि

कदम बढ़ाओ ख़िज़ाँ नसीबो ! वोह मज़िलें मुन्तज़िर है अपनी ।
जहाँ पहुँचकर निगाहो-दिलको, बहारकी ताज़गी मिलेगी ॥
उस आदमे-नौकी आमद-आमद है जिसके इदराककी[8] दमकसे ।
समाजको बाँकापन मिलेगा, हयातको[9] दिलकशी मिलेगी ॥
—नरेशकुमार श

---

[1]सूर्यास्तपर, [2]रात्रिके आनेका, [3]आसरा, भरोसा
[4]परिक्रमा, [5]मित्रताकी हामी, [6]दीवानगी, [7]प्रसन्नता, [8]बन्दी
[9]अक्लकी, [10]जीवनको ।

नई लहर लाई थी सन्देशा, कि अब नई ज़िन्दगी मिलेगी।
किसे ख़बर थी हयाते-ताज़ा लहूमें लिथड़ी हुई मिलेगी॥
उदास चेहरे, हज़ीं-निगाहे, फसुर्दा दिल और सिसकती रूहे।
नये ज़मानेमें ऐ मुसाफिर! तुझे हर इक शै नई मिलेगी॥
नये-नये रहनुमाँ[1] फरेबे-ख़ुद ऐतमादीमें[2] घिर गये हैं।
निगाहे-मंज़िल-शनास कहिए, जिसे वोह भटकी हुई मिलेगी॥
न उठ सका बार नस्ले-आदमसे ज़िन्दगीकी नज़ाकतोंका।
किसी नये क़द्र-आश्नाये-हयातको ज़िन्दगी मिलेगी॥
गुज़र सका तू अगर तुलू-ओ-गरूबे-हस्तीकी मंज़िलोंसे[3]।
तो फिर यही ज़िन्दगी तेरी ठोकरोंमें इक दिन पड़ी मिलेगी॥

—मज़र सद्दीक़ी

थकी हुई सूरतोंसे जिस वक्त मलगजी चादरें हटेंगी।
तो दश्ते-ग़ुरबतके काफिलोंमें भी रातभर चाँदनी मिलेगी॥
ख़बीस रूहे[4] अँधेरे जंगलमें, गर्म शोलोंसे खेलती हैं।
चला है बहका हुआ मुसाफिर कि उस तरफ रोशनी मिलेगी॥

—शफीक जौनपुरी

रहे-वफामें[5] फना जो होगा, उसे नई ज़िन्दगी मिलेगी।
गुज़र मकामे-ख़ुदीसे,[6] पहले हकीकते-बेख़ुदी[7] मिलेगी॥
यह चन्द लमहे जो मुग़तनम[8] हैं तलाशे-साहिलमें[9] खो न इनको।
डुबोदे तूफाने-गममें कश्ती, यहीं कुछ आसूदगी[10] मिलेगी॥
मुझे डराता है बागबाँ क्यों तू बर्के-ख़ातिफकी यूरिशोंसे[11]।
जलेगा जलने दे आशियाँको, चमनको तो रोशनी मिलेगी॥

—अलम मुज़फ्फरनगरी

---

[1]नेता, [2]अहम्मन्यताके जालमें, [3]जीवनके उतार-चढ़ावकी मंजिलोंसे, [4]अपवित्र आत्मायें, [5]नेक मार्गमें, [6]अहमभावसे, [7]आत्मलीनता, [8]गनीमत समझ, [9]किनारेकी खोजमें, [10]शान्ति-चैन; [11]बिजलीके भयानक हमलोंसे।

नहीं हूँ मायूस[1] ज़िन्दगीसे, मुझे यकीं है कि इक-न-इक दिन।
अलमके[2] तीरह उफकपै[3] मुझको, शुआए-उम्मीद[4] भी मिलेगी॥

—ज़िया फतेहाबादी

यह बज़्मे-अहबाब[5] है यहाँ ऐ दिले-परीशाँ! ख़लूस कैसा?
यहाँ तो हर परदये-वफामें छुपी हुई दुश्मनी मिलेगी॥
हो जिसकी अजामपर[6] नज़र और उसपै भी मुसकरा रही हो।
रियाज़े-आलममे[7] तुझको ऐ दिल! कहीं न ऐसी कली मिलेगी॥

—जगन्नाथ आज़ाद

गमेजहाँ-ओ-गमेमुहब्बत, बहर प्याला जुदा है लेकिन।
मज़ाके-रिन्दीमे पुख्तगी हो, तो कैफियत एक-सी मिलेगी॥
'शमीम' आसाँ नही खुशीको, गमे-ज़मानासे छीन लेना।
हज़ार दिल आँसुओमें डूबेंगे तब कहीं इक हँसी मिलेगी॥

—शमीम करहानी

अगर न हो दिलमें सोज़[8] पिन्हाँ[9] नज़रको क्या रोशनी मिलेगी?
ज़मीन उगलेगी चाँद-सूरज मगर वही तीरगी[10] मिलेगी।
खुशी कहाँ है जहाने-गममें? मिली तो इतनी खुशी मिलेगी।
लबोपै खेलेगी मुसकराहट नज़रमें अफसुर्दगी[11] मिलेगी॥
जो कैदो-बन्देचमनसे[12] घबराके आशियानेको छोड देगा।
करेगा जिस शाखपर बसेरा वही लचकती हुई मिलेगी॥

—निसार इटावी

---

[1]निराश, [2]दुःखके, [3]अँधेरे आकाशपर, [4]आशा-किरण, [5]इष्टमित्रोकी गोष्ठी, [6]परिणामपर, [7]ससारमे, [8]दर्द, [9]छुपा हुआ, [10]अँधेरी, [11]मुर्झायापन, [12]चमनकी बन्दिशरूपी कैदसे।

हमारी आँखोंमें हुस्न भरकर, वोह खुद ही हमसे झिझक रहे हैं।
किसीकी रंगी अदाके सदके, किसीमें यह सादगी मिलेगी ?
—वफा बराही

कफससे छुटनेपै शाद थे हम कि लज्जते-जिन्दगी मिलेगी।
यह क्या खबर थी बहारे-गुलशन लहूमें डूबी हुई मिलेगी॥
वही जहालतकी बादशाही, वही जलालतकी कजकुलाही[1]।
जो बा-गरज दोस्ती मिलेगी, तो बेसबब दुश्मनी मिलेगी॥
नई सहर के हसीन सूरज, तुझे गरीबोंसे वास्ता क्या ?
जहाँ उजाला है सीमो-जरका[2] वही तेरी रोशनी मिलेगी॥
वोह दिन भी थे जब अँधेरी रातोंमें भी कदम राहे-रास्तपर थे।
और आज जब रोशनी मिली है तो जीस्त भटकी हुई मिलेगी॥
जिन अहले-हिम्मतके रास्तोंमें बिछाये जाते हैं, आज काँटे।
उन्हींके खूने-जिगरसे रंगी चमनकी हर इक कली मिलेगी॥
वोह हम नहीं हैं कि सिर्फ अपने ही घरमें शमएँ जलाके बैठें।
वहाँ-वहाँ रोशनी करेंगे, जहाँ-जहाँ तीरगी[3] मिलेगी॥
—अब्बुल मजाहिद जाहिद

वोह हुस्न हो या शबाब तेरा, वोह नाज[4] हो या नियाज[5] मेरा।
सिवाय उल्फतके इस जहाँमें हरेक शै आरजी[6] मिलेगी॥
—शफीक कोटी

सितमतराजी-ए-दस्ते-गुलची,[7] तगाफुले-बाग बाँ[8] सरासर।
यही रविश है तो क्या चमनमें, शगुफ्ता कोई कली मिलेगी॥
—तमन्ना बिजनौरी

---

[1]बाँकी तिर्च्छी टोपी, [2]सुबहके, [3]चाँदी, धनका, [4]अँधेरी, [5]अभिमान, [6]नम्रता, [7]अस्थाई, [8]फूल तोडनेवालेका जुल्म; [9]मालीकी उपेक्षा।

मक़ामे जबरो-करमसे[1] आगे, इक और मंजिल भी है कि जिसमें ।
न काहिशे-ग़मपै[2] बस चलेगा, न लज़्ज़ते-सरख़ुशी[3] मिलेगी ।।
—महज़ूं नियाज़ी

बँधी हुई लौसे इस दियेकी जलेंगे कितने चराग देखो ।
मेरे नशेमनकी आग ही से चमनको अब रोशनी मिलेगी ।।
—बिस्मिल सद्दीकी लखनवी

अजीब है गरदिशे-ज़माना, हकीकतें बन गईं फसाना ।
जिन्हें था दावाए-रहनुमाई, उन्हींमें अब गुमरही मिलेगी ।।
'नसीम' इस दौरके सियासतज़दह ख़ुदाओसे बचके रहना ।
कि दिलपै इक हाथ बहरे-तसकी[4] तो दूसरेमें छुरी मिलेगी ।।
—नसीम रायपुरी

ग़मे-मुहब्बतका ज़िक्र ही क्या, ख़ुशीके लमहे न रास आये ।
यह सब फरेबे-ख़याल ही था, कि तुमसे मिलकर ख़ुशी मिलेगी ।
—सैफ भुसावली

उठा सके आदमी तो पहले नज़रसे अपनी नक़ाब उठाये ।
ज़माने भरकी तजल्लियोसे नक़ाब उलटी हुई मिलेगी ।।
—नवाब झाँसवी

दयारे-ग़ुरबतके यह नशेबोफराज़ हिम्मत शिकन है लेकिन ।
यही वोह पगडंडियाँ है जिनसे कभी तो राहे-ख़ुशी मिलेगी।।
—रौनक दक्कनी

यह किसको मालूम था कि कल थी जो ज़िन्दगी-ज़िन्दगीकी ज़ामिन ।
वोह ज़िन्दगी आज ज़िन्दगीका लहू बहाती हुई मिलेगी ।।
—कोकब उलक़ादिरी

---

[1]कृपा-अत्याचारसे, [2]गमकी कमीपै, [3]शराबका आनन्द, [4]धैर्य्य बँधानेके लिए ।

ख़ुदा-फरोशीकी[1] है दुकानें, यह मदरसे और ख़ानक़ाहें[2] :
यक़ीनो-ईमांकी क़ीमतोपर यहां मताये-ख़ुदी[3] मिलेगी ॥
गरज़के बन्दो, ज़रूरतोके पुजारियोका है यह ज़माना ।
क़दम-क़दमपर यहां नज़रको ख़लूसे-दिलकी[4] कमी मिलेगी ॥

—अनवर साबिरी

जमील[5] ज़ौके-फना[6] अगर है तो जां-फिज़ा मौत भी मिलेगी ।
तुझे मुबारक हो मरनेवाले कि इक नई ज़िन्दगी मिलेगी ॥
है मुनहसिर[7] शौके-जुस्तजूपर सुबकरवी[8] हो कि तेज़गामी ।
हरेक मुसाफिरको अपनी मंज़िल करीब भी दूर भी मिलेगी ॥
है शर्त सजदेसे बेनियाज़ी[9] वगर्ना मालूम सरफराज़ी ।
जबीसे धोले जो हाथ उसको इजाज़ते-बन्दगी मिलेगी ॥
हिसाब उसका है कुछ अनोखा शुमार उसका है कुछ निराला ।
वहीं जफा कामयाब होगी, जहां वफाकी कमी मिलेगी ॥

—विशेश्वरप्रसाद मुनव्वर लखनवी

मज़ाके-उलफत लतीफ होगा तो दिलकशा होगी शामेगम भी ।
अँधेरे उगलेंगे चांद-तारे, हरइक तरफ चांदनी मिलेगी ॥
अदब-नवाज़ाने-दहर[10] 'तुर्फा' करें अदीबोपर भी नवाज़िश[11] ।
अदीब ज़िन्दा अगर रहेगे, अदबको भी ज़िन्दगी मिलेगी ॥

—तुर्फा क़ुरेशी

तुम्हीने गमसे मुझे नवाज़ा, तुम्हीसे मुझको ख़ुशी मिलेगी ।
जबीको जिस दरने दाग बख़्शा उसीसे ताबिन्दगी[12] मिलेगी ॥

---

[1]ईश्वर-बिक्रीकी, [2]मसजिद, दरगाहे, [3]अहमन्यताकी दौलत, [4]सच्ची मित्रताकी, [5]हसीन, [6]मृत्युक। चाव; [7]दार-मदार, [8]मन्द चाल, [9]निष्काम उपासना, [10]साहित्य प्रेमी श्रीमत, [11]साहित्यिकोका सम्मान करे, [12]रोशनी ।

इसी भरोसेपै कट रही है, बुरी-भली ज़िन्दगी अभी तक।
जहांसे बेदाद हो रही है, वहीसे फिर दाद भी मिलेगी॥

—नज़र सहवारवी

अँधेरी रातोमें रोनेवालोसे कह रही है शफककी सुर्ख़ी[1]।
न अब बहाओ कोई भी आँसू तुम्हे नई रोशनी मिलेगी॥
कोई मजाहिव[2] तो होगा पैदा, जो ख़ूंसे सीचेगा अपना गुलशन।
उसीके ख़ूंसे ख़िज़ाँ रसीदा चमनको फिर ज़िन्दगी मिलेगी॥

—जमनादास अख़्तर

उजड़के आये है जो वतनसे उन्हे ज़रा इक नज़र तो देखो।
अभी तक उन अहले-वामकी आँखोमें आँसुओकी नमी मिलेगी॥

—रामकृष्ण मुज़्तर

अमल हर इक नेको-बद तुम्हारा, सदा-ए-गुम्बद है याद रक्खो।
करोगे नेकी मिलेगी नेकी, बदी करोगे बदी मिलेगी॥
इसी भरोसेपै गामज़न[3] हूँ, तेरी मुहब्बतके रास्तेपर।
कहीं तो तेरा निशाँ मिलेगा, कभी तो तेरी गली मिलेगी॥
हज़ार नाकामियाँ हो 'नश्तर' हज़ार गुमराहियाँ हो लेकिन।
तलाशे-मंज़िल अगर है दिलसे तो एक दिन लाज़िमी मिलेगी॥

—हरगोविन्दसिंह नश्तर हतगामी

यही दरिन्दे उठेंगे इक रोज़ सारे आलमकी रहबरीको?
"इन्ही अँधेरोसे बज़्मेगीतीको एक दिन रोशनी मिलेगी"॥

—मशहूद मुफ्ती

मेरे फसानेसे काम क्या है? मेरा फसाना है नामुकम्मिल।
मेरे फसानेकी राह तुम हो, उसीकी इसमें कमी मिलेगी॥

—वफा बराही

---

[1]सन्ध्याकालीन सूर्यलालिमा, [2]धर्मपर मरनेवाला, [3]चल रहा हूँ।

इन आस्तानोपै मत झुको तुम, यह शाही ईवाँ[1] है शाने-नख़वत[2]।
ख़लूसो-उल्फतके[3] बदले तुमको, यहाँ फकत बरहमी[4] मिलेगी ॥
—साज़ बिलगरामी

जबीने-इफलास[5] ख़म[6] न होगी, अब अहले दौलतके आस्ताँपर[7]।
नया मज़ाके-सजूद[8] होगा, नई रहे-बन्दगी मिलेगी ॥
—ज़फर आज़मी

जिसे न काबेसे वास्ता हो, न जिसको मतलब हो बुतकदेसे।
मेरी जबीने-नियाज़में[9] ऐसी रफअते-बन्दगी[10] मिलेगी ॥
न देखो नक्शो-निगारे-हस्ती[11] कि आदमीयत यहाँ है सस्ती।
उरूजे-इन्सानियत कहाँ अब तो पस्ती-ए-आदमी मिलेगी ॥
—प्रेम देहलवी

वोह आग जिसको बुझा दिया था, तुम्हारी बेइल्तफातियोने[12]।
वोह आग अबतक बुझी नहीं है, वोह आग दिलमें दबी मिलेगी ॥
गमे-जहाँसे फराग[13] मिलता, तो हम ख़ुदासे यह पूछ लेते।
जहाँके मालिक तेरे जहाँमे कभी हमे भी ख़ुशी मिलेगी ?
—नैयर सीमाबी

---

[1]महल, [2]घृणाकी शान लिये हुए, [3]स्नेह-प्यारके, [4]परेशानी-तिरस्कार, [5]दरिद्रताका मस्तक, [6]नही झुकेगी, [7]धनवानोके दरपर, [8]उपास्य नया होगा, [9]नम्र मस्तकमे, [10]उपासनाकी शक्ति, [11]जीवन-सुखके चिह्न, [12]अकृपाओने, [13]अवकाश, फुरसत।

पुराने वक्तोमे जब कि बिजली नही थी, मुशायरोमे शुअरा ऊँची मसनदपर श्रोताओकी तरफ मुँह करके अर्द्ध चन्द्राकार अपने-अपने मर्त्तबेके हिसाबसे बैठते थे और शमअ सामने रखी जाने पर अपनी गज़ल पढते थे[1]।

**मौजूदा मुशायरे**

वर्तमान युगमे ढग बदल गया है। अब मुशायरोकी व्यवस्था आधुनिक व्याख्यान-सभाओ-जैसी होती है। श्रोता मचके सामने और शायर मचपर बैठते है, और मीर मुशायरेके आदेशपर माइकपर जाकर अपना-अपना कलाम सुनाते है।

कभी यह मुशायरे तरही (समस्यापूर्ति), कभी गैर तरही, कभी सिर्फ गज़लोके, कभी सिर्फ नज्मोके और अक्सर मिले-जुले होते है। गैर तरही मुशायरोकी बिना इसलिए डाली गई थी कि शायरका बेहतर-से-बेहतर कलाम सुना जा सके। तरही मुशायरोमे एक खामी तो यह थी कि बाज दफा फुरसत न मिलनेकी वजहसे अच्छे शायर मिसरा तरह पर गज़ल नही कह सकनेकी वजहसे मुशायरोमे शिरकत नही फरमाते थे, और उनकी गैर मौजूदगी बहुत अखरती थी। दूसरी खामी यह थी कि शायर मिसरेपर गिरह लगानेमे पूरी शक्ति लगा देते थे और प्राय मिलती-जुलती एक-सी गजलोको सुनते-सुनते लोग ऊब जाते थे।

गैर तरही मुशायरोके रिवाजसे जहाँ यह लाभ हुआ कि हर शायरसे जुदा-जुदा रगका कलाम सुननेको मिलता है, वहाँ यह नुकसान भी पहुँचा

---

[1]इस तरहके कई मुशायरे १९२१–२२ ई० मे दिल्लीके हिन्दुरावके बाडेमे देखनेका मुझे भी इत्तफाक हुआ है।

—गोयलीय

कि अक्सर शायर पचासो दफाका मुशायरोमे सुनाया हुआ, और कई-कई पत्र-पत्रिकाओमे प्रकाशित कलाम पढते रहते है।

भारत और पाकिस्तानके भिन्न-भिन्न रेडियो स्टेशनोसे भी मुशायरे मासिक-पाक्षिक ध्वनित होते रहते है। कभी यह अपनी ओरसे मुशायरोका आयोजन करते है और कभी पब्लिक मुशायरोको रिले करते रहते है।

इन मुशायरोसे यह फायदा पहुँचा कि घण्टे-डेढ-घण्टेके अर्सेमे ही अच्छे-अच्छे शायरोका कलाम घर बैठे हुए आरामसे सुननेको मिल जाता है और परिवारके सभी सदस्य लुत्फअन्दोज हो सकते है।

हज़रत 'सरूर' तोसवी साहबने एक नया कमाल और ईजाद किया है कि वे बडे-बडे मुशायरोकी रनिंग कमेंट्री अपने 'शाने-हिन्द' अखबारमे शाया करते रहते है। समूचे मुशायरेका हू-ब-हू ऐसा खाका पेश करते है कि वह चल-चित्रके समान नजरोके सामने नाचने लगता है और पढते हुए ऐसा मालूम होता है कि हम स्वय मुशायरेमे अच्छी-से-अच्छी जगह बैठे हुए यह सब देख रहे है।

यूँ तो आप स्वतन्त्रता, गालिब, हाली, इकबाल, चकबस्त, बर्क आदि दिवसोपर हुए वृहत मुशायरो और भारत-पाकिस्तानके मिले-जुले मुशायरोकी न जाने कितनी कमेण्ट्री प्रकाशित कर चुके है। हम सिर्फ यहाँ एक मुशायरेका तनिक-सा अश बतौर बानगी दे रहे है। यह मुशायरा पटनेमे बिहार रियासती उर्दू कान्फ्रेन्सके तत्वावधानमे १४ मई १९५१ को हुआ था। जिसे पटनेके रेडियो स्टेशनने भी रात्रिके ९॥ बजेसे ११ बजे तक प्रसारित किया था। मैंने भी यह मुशायरा रेडियोपर सुना था। उसी मुशायरेकी हज़रत 'सरूर' तोसवी द्वारा की गई कमेण्ट्रीकी एक झाँकी देखिये—

"अब ऐलान हो रहा है कि जनाब जगन्नाथ 'आजाद' अपना कलाम पेश करेंगे। लीजिये 'आजाद' साहब अपना पेटेण्ट लिबास पहिने माइक पर तशरीफ ले आये है, और दो-तीन कतआत सुनानेके बाद आपने मज-

मूअये कलाम 'सितारोसे जर्रोंतक' मे-से मतबूआ गज़ल पढनी शुरू की है। मतला फरमाते है—

**मुहब्बतमें उन्हे अहले नज़र कामिल समझते हैं।**
**जो इस तूफानकी हर मौजको साहिल समझते हैं॥**

आजाद साहब बहुत अच्छा पढते हैं, इसलिए दाद लेनेमे उन्हे बहुत आसानी रहती है। शेर फरमा रहे है—

**कभी वो दिन थे अपने दिलको हम अपना न कहते थे।**
**मगर अब हर बशरके दिलको अपना दिल समझते है॥**
**वोह फन जो ताब ला सकता न हो दर्दे-ज़मानेकी।**
**हम ऐसे फनको इक अफसानये-बातिल समझते हैं॥**
**वही इन्सान साहिलपर, जिन्हे तूफाँका धोका हो।**
**अगर अड जायें तूफानोको भी साहिल समझते हैं॥**

इस शेरपर 'आज़ाद' साहबको अच्छी दाद दी गई है और आप फरमा रहे हैं—

**हमीने ऐ मुहब्बत क़द्र पहचानी है कुछ तेरी**
**तुझे तूफ़ा, तुझे किश्ती, तुझे साहिल समझते है।**

'आजाद' साहब काफी दाद पानेके बाद अपनी जगह पर तशरीफ ले आये है। अब हज़रत रविश सद्दीकी अपने ख़ास अन्दाजसे मुसकराते हुए माइकके सामने तशरीफ ले आये है, और फरमा रहे हैं 'नज्मका उनुवान (शीर्षक) है 'यादश बख़ैर', इरशाद हुआ है—

**शामे-गुरबत ही में सुबहे-वतन भूल गये।**
**हम तो हर ख्वाबको ऐ चर्खे-कुहन भूल गये॥**
**नख़वते-शेख़ो-बिरहमन तो बजा है लेकिन—**
**क्या हुआ, क्यो हमें, इसनामे-वतन भूल गये॥**

दादका एक रेला है कि थमनेमे नही आ रहा है। चुनाचे 'रविश' साहबसे यह शेर तीन-चार मर्तबा पढवाया गया है। इसके बाद इरशाद होता है—

**जिन्दगी दश्त नशीनीमे गुजारी जिसने।**
**उसी वहशीको गजालाने-खतन भूल गये॥**
**मशरबे-इश्कके आदाब सिखाये जिसने।**
**उसी मैखवारको रिन्दाने-कुहन भूल गये॥**

रविश साहबको बहुत ज्यादा दाद दी जा रही है और रविश साहब निहायत अच्छे अन्दाजमे फरमा रहे है—

**खारको जिसने दिया शोल-ए-बरहमका जलाल।**
**खुद फरामोश वोह एजाजे-सुखन भूल गये॥**
**नातुकम्मल ही रही बरबादे-वतनकी रूदाद।**
**आज सब तजकर ए दारो-रसन भूल गये॥**

रविश साहबको निहायत अच्छी दाद दी जा रही है और हक भी यह है कि उनकी नज्म काबिले तारीफ है। फरामते है—

**दर्द था किस्सये-शब हाये-गुलामी जिनको।**
**वही खुरशीदको पहली ही किरन भूल गये॥**
**क्या यह सब रजो-मुहन परदये-गफलत है 'रविश'!**
**हमतो इस सोचमें सब रजो-मुहन भूल गये॥**

जनाब 'रविश' साहब निहायत अच्छी दाद पानेके बाद अपनी जगह पर तशरीफ ले आये है और अब हजरत बालमुकुन्द 'अर्श' मलसियानी माइक पर तशरीफ ले आये है। मतला फरमाया है—

**यह दौरे-खिरद है, दौरे-जुनूँ, इस दौरमें जीना मुश्किल है।**
**अगूरकी मै के धोकेमें जहर-आबका पीना मुश्किल है॥**

अर्श साहबको मतलेसे ही दाद मिलना शुरू हो गई है और आप फरमा रहे हैं—

**जब नाख़ुने-वहशत चलते थे, रोकेसे किसीके रुक न सके ।**
**अब चाके-दिले-इन्सानीयत, सीते हैं तो सीना मुश्किल है ॥**

बस कुछ न पूछिये दादका एक रेला है कि थमनेमे नही आ रहा है । दादका शोर कुछ कम हुआ तो 'अर्श' साहबने यह शेर दुबारा पढनेके बाद इरशाद फरमाया—

**जो धरमपै बीती देख चुके, ईमाँपै जो गुज़री देख चुके ।**
**इस रामो-रहीमकी दुनियामें इन्सानका जीना मुश्किल है ॥**

दाद उसी अन्दाज़से दी जा रही है और जनाब अर्श फरमा रहे हैं—

**इक सब्रके घूंटसे मिट जाती सब तिश्नालबोंकी तिश्नालबी ।**
**कम-ज़र्फी-ए-दुनियाके सदके यह घूंट भी पीना मुश्किल है ॥**
**वह शोला नहीं, जो बुझ जाये, आँधीके एक ही झोकेसे ।**
**बुझनेका सलीका आसाँ है, जलनेका तरीका मुश्किल है ॥**

'अर्श' साहब मुशायरेपर छा गये है और दाद है कि झोलियाँ भर-भर कर दी जा रही है । सुनिये अर्श साहब क्या फरमा रहे हैं—

**करनेको रफू कर ही लेंगे, दुनिया वाले सब ज़ख्म अपने ।**
**जो ज़ख्म दिले-इन्साँ पै लगा, उस ज़ख्मका सीना मुश्किल है ॥**

इस शेर पर बहुत ज्यादा दाद दी गई है, और सुनिये अर्श साहब किस कदर बेहतरीन शेर फरमा रहे है—

**योह मर्द नहीं जो डर जाये, माहोलके ख़ूनी मंजरसे ।**
**उस हालमें जीना लाज़िम है, जिस हालमें जीना मुश्किल है ॥**

इस शेरने तो एक कयामत बरपा कर दी है, और दाद है कि अपनी इन्तहाको पहुँच गई है। कई बार यह शेर 'अर्श' साहबसे पढवाया जा रहा है, और हरबार दादमे इज़ाफा हो रहा है। काफी देरके बाद जब दादका रेला कुछ थमा तो अर्श साहब मक्ता फरमा रहे है—

**मिलनेको मिलेगा बिलआखिर ऐ 'अर्श' सकूने-साहिल भी।**
**तूफाने-हवादससे लेकिन बच जाये सफीना मुश्किल है॥**

'अर्श' साहबकी यह गजल बिला खौफोतरदीद हासिले-मुशायरा रही और जिस कदर दाद 'अर्श' साहबको मिली, इस मुशायरेमे किसीको नसीब न हुई।

लीजिये 'अनवर' साहब झूमते हुए माइककी तरफ जा रहे है। सुनिये मतला फरमा रहे है—

**अब भी यह तआल्लुक़ बाक़ी है, अब भी यह करम फरमाते है**
**जब कोई खबर सुन लेते है, पुरसिशके लिए आ जाते है॥**

अनवर साबरी और दाद तो अब लाज़िम-ओ-मलज़ूम होकर रह गय है। लिहाज़ा खूब दाद मिल रही है—

**वोह आखिरे-शब चुपके-चुपके, जब याद मुझे फरमाते है।**
**शबनमकी धडकती है छाती, तारोको पसीने आते है॥**
**जब उनको जरूरत होती है, कुछ बात मुझे समझानेकी।**
**बेरब्तसे मुबहम अफसाने, औरोको सुनाये जाते है॥**

अनवर साबरी साहबको दाद मिल रही है और 'अख्तर' और 'नेवी' (सचालक मुशायरा) उनका पॉव दबा रहे है, जिसका मतलब यह है कि अनवर साहब और न पढे, क्योकि ११ बजनेमे वक्त बहुत कम रह गया है और 'अख्तर' साहबके प्रोग्रामके मुताबिक अभी कुछ और शुअराने

पढना है। 'अनवर' साहबने अपना भारी भरकम पाँव 'अख्तर' साहबके पाँवपर रख दिया है। जिसका मतलब है कि घबराइये नही, अभी खत्म किये देता हूँ। चुनाचे 'अनवर' साहब आखिरी शेर पढ रहे है—

**मजबूर तमाशा होते है, जब जेरे नकाब उनके जलवे।**
**दुनियाकी नजरसे बचनेको वोह मेरी नजर बन जाते है॥**

'सरूर' साहबकी की हुई कमेण्ट्री की हमने तनिक-सी झलक दिखाई है। वरना खास-खास आदमी कहाँ बैठे है, किस लिबासमे आये है चुपके-चुपके क्या बाते होती है, कौन किस पर फब्तियाँ कस रहा है? मुशायरोके सयोजकोपर क्या हाशियाराई हो रही है, वगैरह-वगैरह सभी कुछ जो आँखोसे देखते और कानोसे सुनते है, बहुत खूबीसे बयान करते है

१७ फरवरी १९५४ ई० ]

[ तैयार हो रहे हैं ]

# शायरीके नये दौर

## १९२० ई० से १९४० ई० तककी क्रान्तिकारी शायरी

### इन्क़लाबी दौर

पुरातन शायरीका काया-कल्प, नवीन शायरीका जन्म, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, पौराणिक, आर्थिक और वास्तविक नज्मिया शायरीका विकास। बग-भग, प्रथम विश्वव्यापी युद्ध, रौलट ऐक्ट, जालियानवाला-हत्याकाण्ड, सत्याग्रह, असहयोग, खिलाफत, शुद्धि, तबलीग किसान–मजदूर आदि आन्दोलन और उर्दू-शायरी, नज्म आन्दोलनका विस्तृत इतिहास, विवेचन एव आलोचना

**इस दौरके ख्यातिप्राप्त युगान्तरकारी कुछ शायर**

१ 'जोश' मलीहाबादी

२ आनन्दनारायण मुल्ला

३ 'रविश' सद्दीकी

४ विश्वेश्वरप्रसाद 'मुनव्वर'

५ हरिश्चन्द्र 'अख्तर'

६ 'हफीज' जालन्धरी

७ 'सागर' निजामी

८ 'अहमक' फफून्दवी

९ रघुपति सहाय 'फिराक'

१० 'अहसान' विन दानिश आदि

अनेक शायर

## शायरीके नये मोड़

[ १९४१ से १९५४ ई० तक ]

# प्रगतिशील युग

उर्दू शायरीकी नयी करवटे, अभूतपूर्व परिवर्त्तन, द्वितीय महा-युद्धकी—राशनिग ब्लेक मारकेटिग कण्ट्रोलिग आदि—विभीषिकाओका उर्दू-शायरीपर प्रभाव, किसान-मजदूर पूंजीपति, भारत-विभाजन, स्वराज्य, काँग्रेसी-शासन आदिपर नवयुवक शायरोका दृष्टिकोण

### इस युगके कुछ प्रतिनिधि शायर

१ फैज अहमद 'फैज'

२ सरदार जाफिरी

३ 'मजाज' लखनवी

४ 'जज्बी'

५ 'एजाज' सद्दीकी

६ 'निहाल' सेवाहरवी

७ बालमुकुन्द 'अर्श'

८ जगन्नाथ 'आजाद'

९ नरेशकुमार 'शाद'

१० 'फिक्र' तोसवी

११ मनहरलाल 'जिया'

१२ अहमद 'नदीम' कासिमी

१३ 'सलाम' मछली शहरी

१४ 'साहिर' लुधियानवी आदि अनेक शायर

# भारतीय ज्ञानपीठ काशी

## उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोक-हितकारी
मौलिक साहित्यका निर्माण

संस्थापक
साहू शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन